Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by:
Ksaan Helpline
+91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-21 अंक-1 ग्वालियर, अप्रैल -2026 मूल्य 30 रुपए

किसान कल्याण वर्ष 2026

कृषि क्षेत्र में केन्द्र प्रवर्तित योजनाओं में शानदार प्रगति

मध्यप्रदेश के कई जिलों में केंद्र सरकार की विभिन्न योजनाओं के तहत वर्ष 2025-26 में उल्लेखनीय प्रगति दर्ज की गई है। कृषि, सिंचाई और स्वास्थ्य से जुड़ी योजनाओं में बेहतर क्रियान्वयन के चलते न केवल तय लक्ष्य पूरे किए गए, बल्कि कई क्षेत्रों में प्रभावी परिणाम भी देखने को मिले हैं। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (तिलहन) के अंतर्गत समूह प्रदर्शन में 1500 हेक्टेयर का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, जिसे पूरी तरह हासिल कर लिया गया। यह दर्शाता है कि किसानों ने आधुनिक तकनीकों को अपनाते हुए उत्पादन बढ़ाने में सक्रिय भूमिका निभाई है।

छत्तीसगढ़: भारत मंडपम में एआई इम्पैक्ट समिट में स्टॉल बना आकर्षण केन्द्र

छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री विष्णु देव साय के मार्गदर्शन में जल संरक्षण और किसानों की आय बढ़ाने के उद्देश्य से विभिन्न योजनाएं संचालित की जा रही हैं। इन प्रयासों का सकारात्मक परिणाम जशपुर जिले के पत्थलगांव विकासखंड अंतर्गत ग्राम काडरो के किसान मालती मोहन के रूप में सामने आया है।

मध्य प्रदेश: समर्थ एमएसएमई विकसित म.प्र. की थीम पर कार्यक्रम

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने समर्थ एमएसएमई विकसित म.प्र. की थीम पर मुख्यमंत्री निवास में आयोजित कार्यक्रम में 257 से अधिक एमएसएमई इकाइयों के खाते में 169.57 करोड़ रुपए से अधिक की प्रोत्साहन राशि अंतरित की।

श्री गणेशाय नमः
श्री सॉवलिया सेठ
किसान कृषि सेवा केन्द्र
Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419
9109726855
हमारी सेवाएँ:-
सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।
कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।
उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।
स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company
कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा
1988
थ्रेशर 35HP हापर मॉडल
हडम्बा कटर थ्रेशर
ऑटोफीडिंग थ्रेशर
मक्का थ्रेशर
मिनी कम्बाईन थ्रेशर
रेज बेड सिड ड्रील
स्प्रे पंप 500 लि. गन बूम मॉडल
मोटर लिफ्टर
सुदर्शन इण्डस्ट्रीज
विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सोशल मीडिया पर अंकुश

अमेरिका में लॉस एंजेलिस की एक जूरी द्वारा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के घातक प्रभावों से त्रस्त एक युवती के पक्ष में सुनाए गए ऐतिहासिक फैसले से दुनिया भर के अभिवावकों को राहत मिली है। दरअसल, सोशल मीडिया की लत लगाने से जुड़े एक मामले में मेटा और यूट्यूब पर 56 करोड़ का जुर्माना लगाया गया है। उल्लेखनीय है कि एक युवती ने मेटा और यूट्यूब पर आरोप लगाया था कि इनकी वजह से उसे सोशल मीडिया की घातक लत लगी। हालांकि, अब तक ये कंपनियां दलील देती रही हैं कि वे मात्र सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म हैं और इसकी सामग्री के लिये जिम्मेदार नहीं हैं। लेकिन कोर्ट में वकीलों ने पीड़िता के पक्ष में दलील दी कि जानबूझकर इस तरह के सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म बनाए गए हैं ताकि उपयोगकर्ता कथित सोशल मीडिया की लत के शिकार बन जाएं। शुरुआत से पहचान गुप्त रखने वाली बीस वर्षीय युवती केली के वकीलों की दलील को जूरी ने स्वीकार किया कि इस लत से उसकी मानसिक सेहत को नुकसान हुआ है। जूरी ने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों की दलीलों को दरकिनार करते हुए मेटा और यूट्यूब पर साठ लाख अमेरिकी डॉलर यानी छप्पन करोड़ रुपये चुकाने का आदेश दिया है। जूरी ने माना कि गूगल तथा मेटा ने इन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स के संचालन में अपने मुनाफे के मद्देनजर अनुचित उपायों का सहारा लिया है। जूरी ने इसे अनैतिक भी बताया। जूरी के निर्णय के अनुसार इस मामले में जुर्माने की सत्तर फीसदी राशि मेटा तथा तीस फीसदी रकम गूगल को चुकानी होगी। उल्लेखनीय है कि पूरी दुनिया में इन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के विरुद्ध हजारों मुकदमें चल रहे हैं। जिसमें कई वे लोग भी शामिल हैं जिनके बच्चों ने सोशल मीडिया की लत का शिकार होकर आत्मघाती कदम उठाये हैं। ब्रिटेन समेत कई देशों में अभिभावक इस लत से बच्चों को बचाने के लिये आंदोलन करते रहे हैं। यही नहीं, अमेरिका में ही विभिन्न अदालतों में सोशल मीडिया के घातक प्रभावों से बच्चों को बचाने के लिये सैकड़ों मामले चल रहे हैं। विश्वास किया जा रहा है कि इस मुकदमे के फैसले का प्रभाव उन तमाम मामलों में भी पड़ सकता है, जो दुनिया के विभिन्न देशों में चल रहे हैं। हालांकि, दोषी पाये गए सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के कर्ताधर्ता इस फैसले से असहमति जताते हुए इसके खिलाफ अपील करने की बात कर रहे हैं। उनकी दलील है कि किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले घातक प्रभाव के अनेक अन्य कारण हो सकते हैं, जिसके लिये सिर्फ सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म को ही दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

मधुमक्खी पालन से किसानों की आय में 20 से 25 प्रतिशत तक वृद्धि संभव

रायपुर। मधुमक्खी पालन शहद, मोम और पराग उत्पादन के लिए एक अत्यंत लाभदायक कृषि-आधारित व्यवसाय है। भारत में वैज्ञानिक तकनीक से मधुमक्खियों को बक्सों में पालकर, मौसमी फूलों के अनुसार स्थानांतरित कर बड़े पैमाने पर शहद निकाला जाता है, जो किसानों की आय बढ़ाने का एक प्रमुख साधन है। मधुमक्खी पालन अपनाने पर किसानों की आय में 20 से 25 प्रतिशत तक वृद्धि संभव है। कृषि आधारित आय को सुदृढ़ करने और किसानों को अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्य से राज्य स्तर पर मधुमक्खी पालन एवं शहद उत्पादन विषय पर दो दिवसीय कार्यशाला सह प्रशिक्षण कार्यक्रम का सफल आयोजन किया गया। इस प्रशिक्षण में जिले भर से आए किसानों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। जिला पंचायत सीईओ बलरामपुर श्रीमती नयनतारा सिंह तोमर ने कहा कि वर्तमान समय में किसानों को पारंपरिक एकल फसल पद्धति को आगे बढ़ते हुए फसल विविधिकरण अपनाने की आवश्यकता है। उन्होंने बताया कि धान के साथ-साथ दलहन, तिलहन एवं मधुमक्खी पालन जैसे कृषि आधारित व्यवसाय अपनाकर किसान अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं। उप संचालक कृषि श्री रामचंद्र भगत ने फसल चक्र एवं विविधिकरण के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इससे उत्पादन लागत कम होती है तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को भी कम किया जा सकता है।

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063

***

नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453

बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732

पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678

***

हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है। -संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
0751-4070802
• वार्षिक ₹ 400 • द्विवार्षिक ₹ 750
• पंचवार्षिक ₹ 1800

■ वर्ष 21 ■ अंक 01 ग्वालियर, अप्रैल 2026 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132
94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम
डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010
महेश अहिरवार
94251-48365, 88390-81877

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि. ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण), डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि वैज्ञानिक (कृषि प्रसार)
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- एफपीओ: कृषि में किसानों की सामूहिक शक्ति 08
- भारत विस्तार एआई योजना-किसानों के लिए लाभदायक 09
- भारत में फल उत्पादन 10
- भारतीय गांव में पारंपरिक गेहूं भंडारण प्रथाएं 11
- बैकयार्ड मुर्गी पालन के सामान्य रोग एवं उनके बचाव 12
- मोरिंगा (सहजन) के फायदे और नुकसान 13
- प्रेसिजन लाइवस्टॉक फार्मिंग: एक चेतावनी उपकरण प्रणाली 14
- रोग निदान के लिए नमूने एकत्रीकरण कैसे करें 15
- परंपरागत खेती छोड़कर मल्टीलेयर फार्मिंग से सफलता 16
- लसीका फाइलेरियासिस: परजीवी संक्रमण, निदान तकनीकें .. 17
- गर्मी की छुट्टी नहीं, खेत की सेहत का सुनहरा मौका 18
- धान की फसल में प्रमुख कीट एवं रोग नियंत्रण:.. 19
- हर्बल गुलाल 20
- स्वाद एवं विटामिन से भरपूर: आंवला मुखवास 21
- पशु कल्याण और 'वन हेल्थ' की ओर भारत की बढ़ती पहल 22
- गलघोटू 23
- अजवाइन की उन्नत खेती और इसके चमत्कारी औषधीय गुण 24

उत्तर प्रदेश

- कृषि में स्टार्टअप और युवा उद्यमिता 25
- मशरूम उत्पादन, महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता का मार्ग 26
- जैविक कीट प्रबंधन से बढ़ेगी आम, केला, ... 27
- बदलती सोच, बदलता भारत: कृषि में नवाचार... 28
- जलवायु परिवर्तन और गेहूँ में उभरती रतुआ.. 29
- भारत प्रमुख की मिट्टियाँ एवं प्रबंधन 30
- वैश्विकरण के दौर में कृषि व्यवसाय प्रबंधन... 31
- खेती में प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन... 32
- कृषि-पशुपालन एकीकरण से संसाधन ... 33
- आम में एपिकोटाइल ग्राफ्टिंग की सफलता .. 34
- किसानों को फसलों में अधिक लाभ कैसे मिले 35
- कार्यस्थल में कार्यरत वयस्कों में चिंता .. 36
- फलों और सब्जियों का तुड़ाई उपरांत प्रबंधन 37
- पोषक तत्व दक्षता हेतु जैव उर्वरक व बायोस्टिमुलेंट्स.. 38

राजस्थान

- जायद मूंग एवं उड़द में रसचूशक कीटों का ... 39
- अनाजों एवं बीजों का रखरखाव व भण्डारण 40
- कृषि विकास में सहकारिताओं की भूमिका 41

बिहार

- खेत से बाजार तक: आधुनिक तकनीक से ... 42
- कटाई उपरांत फसलों का प्राथमिक स्तर पर प्रसंस्करण कार्य 43
- संरक्षित खेती, आर्थिक समृद्धि 44

हरियाणा

- बंपर मुनाफे हेतु एग्रीकल्चर बिजनेस आइडिया 45
- डिजिटल जेल से आज़ादी: क्या तकनीक आपको... 46
- दूधिया मशरूम: ग्रीष्मकालीन लाभदायक खेती 47

हिमाचल प्रदेश

- शिमला मिर्च में होने वाले सामान्य नर्सरी रोग... 48
- जलवायु परिवर्तन और पादप रोगों का उभरता खतरा 49

झारखण्ड

- हीट पम्प ड्रायर से फल-सब्जियों का संरक्षण.. 50

जम्मू कश्मीर

- सफेद मुसली की आधुनिक खेती आय .. 51

उत्तराखण्ड

- छत पर बगीचों को अत्यधिक गर्मी से कैसे बचाएं? 52
- धनिया (कोरिएंड्रम सैटिवम) का गंभीर रोग .. 53

नई दिल्ली

- वर्मीकम्पोस्ट बनाने की प्रक्रिया तथा विभिन्न विधियां 54

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
समाचार

मप्र से बासमती का निर्यात ठप, बीच समुद्र में फंसा चावल

भोपाल। मध्य पूर्व में लगातार गहराते तनाव और इजरायल-ईरान-अमेरिका के बीच बन रहे युद्ध जैसे हालातों का सीधा और गंभीर असर भारत के कृषि निर्यात, विशेषकर बासमती चावल के कारोबार पर दिखाई देने लगा है। खाड़ी देशों में पैदा हुए इस भू-राजनीतिक संकट के कारण भारत से होने वाला बासमती का निर्यात लगभग पूरी तरह से ठप पड़ गया है. हालात ये हैं कि देश का करीब 4 लाख टन प्रीमियम बासमती चावल बीच समुद्र में जहाजों पर या विभिन्न बंदरगाहों (पोर्ट) पर अनिश्चितकालीन स्थिति में फंसा हुआ है। मध्यप्रदेश से, विशेषकर रायसेन जिले से बासमती चावल का बड़े पैमाने पर ईरान समेत कई खाड़ी देशों में निर्यात होता है। इन देशों में बासमती सेला 1509, 1121, सुगंधा और शरबती जैसे चावलों की भारी डिमांड रहती है लेकिन मौजूदा अंतरराष्ट्रीय हालातों के चलते पिछले कुछ दिनों से एक्सपोर्ट पूरी तरह रुक गया है और जहाजों के कंसाइनमेंट बीच रास्ते में ही फंस गए हैं।

2000 डॉलर का शिपिंग खर्च 9000 डॉलर पहुंचा

रायसेन जिले में स्थित 'अपर्णा फूड मिल एसोसिएशन' के अध्यक्ष ने बताया कि अंतरराष्ट्रीय अस्थिरता के कारण बासमती चावल के एक्सपोर्ट पर टैक्स और लागत बेतहाशा बढ़ गई है. समुद्री रास्तों, खासकर लाल सागर (Red Sea) रूट पर बनी अस्थिरता के चलते शिपिंग लाइनों के किराए में भारी उछाल आया है. पहले जहां एक कंटेनर का शिपिंग खर्च लगभग 2000 डॉलर हुआ करता था, वहीं अब यह बढ़कर करीब 9000 डॉलर प्रति कंटेनर तक पहुंच गया है.

मिलर्स पर मंडरा रहा भारी नुकसान का खतरा

लगातार बढ़ती लागत, बढ़े हुए टैक्स और रास्ते में फंसे माल के कारण एक्सपोर्ट कारोबार लगभग ठप होने की कगार पर पहुंच गया है. व्यापारियों का स्पष्ट कहना है कि यदि जल्द ही अंतरराष्ट्रीय हालात सामान्य नहीं हुए और समुद्री रास्ते सुरक्षित नहीं हुए, तो बासमती चावल उद्योग से जुड़े किसानों, मिलर्स और व्यापारियों को एक बहुत बड़ा आर्थिक नुकसान उठाना पड़ सकता है. फिलहाल, पूरे बाजार की नजरें मध्य पूर्व के हालातों पर टिकी हुई हैं.

किसान सम्मेलन में सीएम मोहन यादव का बड़ा ऐलान, सिंचाई, रोजगार और कृषि विकास पर जोर

भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा कि हरदा जिले ने विकास के हर क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बनाई है। जिले में लगभग 100 प्रतिशत कृषि भूमि पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो चुकी है, जो किसानों के लिए बड़ी उपलब्धि है। उन्होंने बताया कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जनकल्याण के लिए चार प्रमुख वर्ग- गरीब, किसान, युवा और नारी को केंद्र में रखा है। राज्य सरकार भी इन सभी वर्गों के साथ-साथ औद्योगिक और अधोसंरचनात्मक विकास पर तेजी से काम कर रही है।

मुख्यमंत्री ने कहा कि मध्यप्रदेश देश में सबसे तेज गति से युवाओं को रोजगार देने वाला राज्य बन रहा है। वहीं लाड़ली बहना योजना के तहत महिलाओं को हर महीने 1500 रुपये दिए जा रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा कि यदि महिलाएं रोजगार आधारित उद्योगों में काम करेंगी, तो उन्हें अतिरिक्त 5000 रुपये की सहायता भी दी जाएगी। भारतीय संस्कृति में माताओं और बहनों का विशेष स्थान है और सरकार उनके सशक्तिकरण के लिए निरंतर प्रयास कर रही है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने बताया कि बच्चों के बेहतर भविष्य के लिए सांदीपनि विद्यालय स्थापित किए जा रहे हैं। हरदा जिले को तीन सांदीपनि विद्यालयों की सौगात मिली है। सरकार द्वारा बच्चों को निःशुल्क किताबें, साइकिल और दूध के पैकेट वितरित किए जा रहे हैं। मेधावी विद्यार्थियों को लैपटॉप और स्कूटी देकर प्रोत्साहित किया जा रहा है। सरकार का लक्ष्य हर हाथ को काम और हर खेत को पानी उपलब्ध कराना है। मुख्यमंत्री हरदा में कृषि आधारित कौशल विकास और कस्टम हायरिंग पर केंद्रित राज्यस्तरीय किसान सम्मेलन को संबोधित कर रहे थे। इस दौरान उन्होंने लगभग 232 करोड़ रुपये के 41 विकास कार्यों का लोकार्पण और भूमिपूजन किया। इनमें 199 करोड़ रुपये की लागत के 36 कार्यों का लोकार्पण और 32 करोड़ रुपये की लागत के 5 कार्यों का भूमिपूजन शामिल है। मुख्यमंत्री ने कार्यक्रम स्थल पर आधुनिक कृषि यंत्रों की प्रदर्शनी का अवलोकन किया और किसानों से नई तकनीकों को अपनाकर उत्पादन बढ़ाने की अपील की। उन्होंने कहा कि प्रदेश के हर विधानसभा क्षेत्र में कृषि यंत्र किराए पर उपलब्ध कराने के लिए कस्टम हायरिंग सेंटर खोले जाएंगे। इसके साथ ही स्व-सहायता समूह की महिलाओं को चेक, किसानों को ड्रिप सिंचाई किट, नरवाई प्रबंधन और खाद्य प्रसंस्करण के लिए लाभ वितरित किए गए।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं
जैविक खाद बीज
एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
समाचार

पोषक तत्वों के प्रति संवेदनशील कृषि अनुसंधान और नवाचार (एनएआरआई) के अंतर्गत प्रक्षेत्र भ्रमण

गोविंदनगर। "पोषक तत्वों के प्रति संवेदनशील कृषि अनुसंधान और नवाचार (NARI)" परियोजना के अंतर्गत आयोजित तीन दिवसीय गणनाकार प्रशिक्षण कार्यक्रम के साथ-साथ जमीनी स्तर पर सर्वेक्षण एवं अध्ययन कार्य भी किया गया। इस पहल का उद्देश्य कृषि के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में पोषण स्तर को बेहतर बनाना है। इसी क्रम में कृषि विज्ञान केंद्र, जबलपुर में मध्यप्रदेश से 14 एवं छत्तीसगढ़ से 5 विभिन्न कृषि विज्ञान केंद्रों से आई गृह वैज्ञानिकों की टीम ने सक्रिय भागीदारी निभाई। टीम ने ग्राम मझगवाँ,पनागर भ्रमण कर किसानों महिलाओं से सीधे बातचीत कर पोषण सब्जी वाटिका की लाभकारी प्रभाव का सर्वे किया गया। इस दौरान महिलाओं के खान-पान, पोषण स्थिति एवं कृषि आधारित आजीविका से जुड़े पहलुओं पर विस्तृत चर्चा कर सर्वेक्षण किया गया। गृह वैज्ञानिकों की टीम ने गांव मझगवाँ में विकसित की गई पोषण सब्जी वाटिकाओं (Nutrition Vegetable Garden) का भी निरीक्षण किया। उन्होंने देखा कि कैसे स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का उपयोग कर महिलाएं अपने परिवार के लिए पोषक आहार सुनिश्चित कर रही हैं। इस पहल को ग्रामीण स्वास्थ्य एवं आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम बताया गया।कार्यक्रम में आईसीएआर-अटारी, जबलपुर से संचालक डॉ एस आर के सिंह,वरिष्ठ वैज्ञानिक दिल्ली IFPRI से विशेषज्ञ,प्रधान वैज्ञानिक डॉ मुकेश कुमार, डॉ रजनीश श्रीवास्तव की गरिमामयी उपस्थिति रही। साथ ही ग्राम सरपंच महोदय, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता श्रीमति निर्मला एवं सहायिका श्रीमति पूनम ने सहयोग किया। संचालक महोदय ने प्रतिभागियों को मार्गदर्शन देते हुए कहा कि पोषण-संवेदनशील कृषि आज की आवश्यकता है, जिससे न केवल उत्पादन बढ़ेगा बल्कि कुपोषण की समस्या को भी प्रभावी ढंग से कम किया जा सकेगा। इस दौरान वैज्ञानिकों ने यह भी जोर दिया कि सही डेटा संग्रहण और जमीनी समझ के आधार पर ही ऐसी योजनाओं को सफल बनाया जा सकता है।डॉ नीलू विश्वकर्मा ने बताया की विगत वर्ष से लगातार मझगवाँ ग्राम की चयनित कृषक महिलाओं को पोषण वाटिका हेतु सब्जियों के उन्नत बीज उपलब्ध कराये जाते है जिससे सब्जियों के माध्यम से पोषण प्राप्त हो रहा है। कार्यक्रम के आयोजन में कृषि विज्ञान केन्द्र,जबलपुर द्वारा आयोजन में कृषि विज्ञान केंद्र,के सभी वैज्ञानिकों और स्टाफ का भरपूर सहयोग रहा ।

औषधीय फसलें किसानों को कैसे बना सकती हैं लखपति

जबलपुर। केन्द्र सरकार के नेशनल मेडिसिनल प्लांट बोर्ड के रीजनल सेंटर में औषधीय पौधों की खेती करने वाले किसानों और औषधि फसल खरीदने वाले क्रेताओं का सम्मेलन हुआ। इसमें कुछ ऐसी फसलों के बारे में चर्चा हुई जिनका उत्पादन करके किसान बहुत कम समय में कम खेती में भी लाखों रुपया कमा सकता है। जबलपुर के जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय में क्षेत्रीय सह-सुविधा केंद्र मध्य क्षेत्र पादप कार्य विभाग ने एक कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया। इसमें औषधीय पौधों की खेती करने वाले मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ के अलावा उत्तर भारत और दक्षिण भारत के कई किसान, व्यापारी शामिल हुए। रीजनल फैसिलिटेशन सेंटर के प्रोजेक्ट मैनेजर चन्द्र प्रकाश शुक्ला ने बताया कि यहां पर किसानों को कई किस्म की औषधीय फसलों की खेती के बारे में जानकारी दी गई। इसके साथ ही किसान इनका उत्पादन करने के बाद इन्हें कैसे बेचे, इसके बारे में भी बताया गया। चंद्र प्रकाश शुक्ला ने बताया कि हमने कुछ ऐसी खास फसलों पर किसानों को प्रेरित करने की कोशिश की है जिनके बाजार भाव बहुत अच्छे हैं। केन्द्र सरकार का मेडिसिनल प्लांट बोर्ड मेडिसिनल प्लांट की खेती करने वाले किसानों और व्यापारियों के लिए एक मंच भी प्रदान करता है. सरकार की ओर से ई-चरक नाम से एक ऐप भी बनाया गया है, जिसमें किसानों को जड़ी बूटियां सुगंधित औषधियां के कच्चे माल और उनसे जुड़ी हुई जानकारियां उपलब्ध हो जाती हैं. यहां पर किसान अपना माल भी बेच सकता है।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

दतिया जिले में लिये मसूर किस्म एल-4729 उत्तम

दतिया। कृषि विज्ञान केन्द्र, दतिया द्वारा ग्राम बड़ेरा सोपान विकासखण्ड भाण्डेर जिला दतिया में क्लस्टर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन-दलहन परियोजना के अंतर्गत मसूर किस्म एल-4729 का बीज कृषकों को प्रदर्शन हेतु रबी 2025-26 के लिए प्रदाय किया था। जिसके अंतर्गत मसूर प्रक्षेत्र दिवस कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम बद्रीप्रसाद रजक प्रगतिशील कृषक की अध्यक्षता एवं चन्द्रप्रकाश सिंह कौरव की मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ।

कार्यक्रम में केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना ने किसानों को दलहन की उन्नतशील मसूर की प्रजाति के बारे में विस्तार से जानकारी देते हुये मसूर की उत्पादन तकनीकी का कृषक पद्धति की तकनीक से अंतर बताते हुये विस्तार से किसान भाईयों को समझाया। यह किस्म अन्य किस्मों की अपेक्षा अधिक उत्पादन देती है साथ ही साथ इस किस्म पर किसी भी तरह का रोग एवं कीट व्याधियों का प्रकोप नहीं होता है। इस किस्म में मात्र एक सिंचाई करने पर ही अच्छा उत्पादन प्राप्त होता है। डॉ. कंसाना ने बताया कि मसूर की यह किस्म पोषण की दृष्टि से भी उत्तम मानी जाती है क्योंकि इसमें प्रोटीन के साथ-साथ विभिन्न पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। डॉ. कंसाना ने किसान भाईयों से आग्रह करते हुये कहा कि अन्य फसलों के साथ-साथ दलहन की फसलों का आवश्यक रूप से उत्पादन लें जिससे जिले में दलहन का रकवा को बढ़ाया जा कर आत्मनिर्भरता में वृद्धि की जा सके। इस कार्यक्रम में नीकरा परियोजना के सह अनुसंधान (वाय.पी.-2) पवन दांगी ने जलवायु परिवर्तन को देखते हुये दलहन एवं तिलहन फसलों को बढ़ावा देने की बात कही एवं समसामायिक खेती करने की सलाह दी। इस कार्यक्रम में महेश प्रसाद, संजय राजपूत, पंकज राजपूत, उमेश सिंह राजपूत, चन्द्रप्रकाश सोनी, मानसिंह राजपूत, कालीचरण, बद्रीप्रसाद, भगवानदास, राजेन्द्र सिंह, देवेन्द्र दोहरे, जीतेन्द्र राजपूत, भारत सिंह, बालकिशन पटेल सहित लगभग 100 किसान ने इस कार्यक्रम में सहभागिता की।

जैविक हाट बाजार में 38 हजार से अधिक के जैविक उत्पादों का विक्रय

रतलाम। जिले में आयोजित जैविक/प्राकृतिक हाट बाजार में विभिन्न विकासखंडों से आए किसानों ने अपने जैविक एवं प्राकृतिक उत्पादों का विक्रय किया। हाट बाजार में कुल 9 जैविक कृषक अपने उत्पाद लेकर पहुंचे और उपभोक्ताओं ने उत्साहपूर्वक जैविक उत्पादों की खरीदारी की। धामनोद से आए श्री चंद्रभानु जी द्वारा अनाज, दालें, सब्जियां, फल एवं मूंगफली का 16,886 रुपये का विक्रय किया गया। श्री दिलीप पाटीदार द्वारा देसी गाय के शुद्ध घी का 6,200 रुपये, श्री दिलीप धाकड़ द्वारा शहद का 4,840 रुपये तथा ताल के आक्या खुर्द से श्री लखन सिंह द्वारा ऑर्गेनिक संतरा व मौसंबी का 6,000 रुपये का विक्रय किया गया। पीपल घाटी सैलाना से श्री नरसिंह डामर द्वारा सब्जियां व भुट्टे का 1,000 रुपये, श्री बालकृष्ण तिवारी द्वारा सोना मोती एवं खपली प्रजाति के गेहूं का 1,100 रुपये तथा श्री विक्रम सिंह पाटीदार द्वारा हल्दी, मिर्च पाउडर एवं दाल का 1,500 रुपये का विक्रय किया गया। इसके साथ ही श्री टीकमचंद जोगचंद द्वारा हरियाली वर्मी कम्पोस्ट तथा श्री उमेश धाकड़ बांगरोद द्वारा घी एवं दूध सहित अन्य जैविक उत्पाद भी विक्रय के लिए लाए गए।

कृषक खेत पाठशाला कार्यक्रम

शहडोल। कृषि विज्ञान केंद्र शहडोल एवं किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग शहडोल के सन्युक्त तत्वाधान में ग्राम नदना विकासखंड सोहागपुर में कृषक खेत पाठशाला कार्यक्रम आयोजित किया गया। जिसमें केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. ब्रजकिशोर प्रजापति द्वारा कृषको को जानकारी दी गई कि अमरबेल एक तना परजीवी पौधा है जो फसलों या वृक्षों पर अवांछित रूप से उगकर हानि पहुँचाता है। जिसमें पत्तियों और पर्णहरिम का पूर्णतः अभाव होता है। इसीलिए इसका रंग पीतमिश्रित सुनहरा होता है। इसका तना लंबा, पतला, शाखायुक्त और चिकना होता है। तने से अनेक मजबूत पतली-पतली और मांसल शाखाएं निकलती हैं जो आश्रयी पौधे (होस्ट) को अपने भार से झुका देती हैं। अमरबेल फसलों से पानी तथा पोषकीय तत्व शोषित करते हैं जिसके कारण फसले कमजोर हो जाते हैं।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

एफपीओ : कृषि में किसानों की सामूहिक शक्ति

डॉ. रीना रावत (सहायक प्राध्यापक) कृषि विस्तार एवं संचार, मंदसौर विश्वविद्यालय मंदसौर (म.प्र.)

प्रशांत सिंह (सहायक प्राध्यापक) प्लांट पैथोलॉजी, मंदसौर विश्वविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

नरेंद्र पाटीदार एम.एससी. (कृषि), मंदसौर विश्वविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

डॉ. राकेश पाटीदार सीईओ, मंदसौर एग्रो इंडस्ट्री प्रोड्यूसर कंपनी लिमिटेड, दलौदा, मंदसौर

प्रस्तावना: भारत एक ऐसा देश है जहाँ ज़्यादातर लोग खेती पर निर्भर हैं। इसलिए भारत को कृषि प्रधान देश कहा जाता है। यहाँ की अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा खेती से जुड़ा हुआ है। लेकिन हमारे देश के किसान आज भी कई समस्याओं का सामना कर रहे । ज्यादातर किसानों के पास बहुत कम ज़मीन होती है, जिससे उनकी खेती छोटे स्तर पर होती है। इसके अलावा, बीच के व्यापारी उनकी फसल का सही दाम नहीं देते और किसान अच्छे बाज़ार तक नहीं पहुंच पाते। साथ ही, खेती के लिए जरूरी पैसा मिलना भी बहुत मुश्किल होता है। किसानों को लगातार होने वाली समस्याओं और आर्थिक तंगी को देखते हुए, इन परेशानियों का समाधान खोजने के लिए किसान उत्पादक संगठन (FPO) की शुरुआत की गई है। FPO किसानों का एक समूह होता है जो मिलकर काम करते हैं। जैसे कहावत है "अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता", वैसे ही एक अकेला किसान ज्यादा ताकतवर नहीं होता, लेकिन जब कई किसान मिलकर एक संगठन बना लेते हैं, तो उनकी ताकत बढ़ जाती है।

FPO में शामिल होने से किसानों को कई फायदे मिलते हैं। सभी किसान अपनी फसल को मिलाकर एक साथ बेचते हैं, जिससे उन्हें अच्छा दाम मिलता है। खाद, बीज और दूसरे जरूरी सामान भी समूह में खरीदने से सस्ते मिल जाते हैं। बैंक और सरकार भी समूह को आसानी से लोन देते हैं। इस तरह मिलकर काम करने से किसानों की कमाई बढ़ती है और उनकी खेती मजबूत बनती है। सीधी बात यह है कि FPO में किसान अकेले नहीं, बल्कि एक टीम की तरह काम करते हैं तो सभी को फायदा होता है और हर किसान को बराबर लाभ मिलता है।

एफपीओ क्या है?: एफपीओ का मतलब है किसान उत्पादक संगठन।

यह किसानों का एक समूह है जो मिलकर खेती करते हैं। यह समूह किसी कंपनी या समिति की तरह पंजीकृत होता है, लेकिन किसान स्वयं ही प्रबंधन और निर्णय लेते हैं।सरकार किसानों को एफपीओ बनाने में मदद करती है। नाबार्ड, एसएफएसी और राज्य सरकार की एजेंसियां वित्तपोषण, प्रशिक्षण और आवश्यक जानकारी प्रदान करती हैं। इससे किसान सस्ते दामों पर बीज, उर्वरक और कीटनाशक खरीद सकते हैं और अपनी फसल अच्छी कीमत पर बेच सकते हैं।

इस तरह, FPO से किसान सशक्त बनते हैं और उनकी कमाई बढ़ती है।

एफ़पीओ (किसान उत्पादक संगठन) के उद्देश्य

* संयुक्त सौदेबाजी (Collective Bargaining): किसानों को बीज, खाद, और कृषि उपकरण जैसी आवश्यक

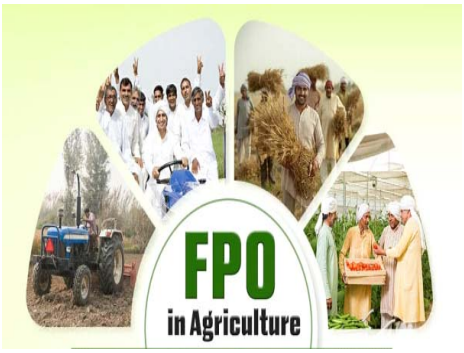

वस्तुएँ थोक में खरीदने की सुविधा देना, जिससे उनकी लागत कम हो।

* **बेहतर बाज़ार पहुँच (Better Market Access):** किसानों को अपनी उपज सीधे व्यापारियों, प्रसंस्करण इकाइयों या उपभोक्ताओं को बेचने में सक्षम बनाना, ताकि बिचौलियों की भूमिका कम हो।

* **ऋण और वित्तीय सहायता (Credit & Finance):** सदस्यों को ऋण, अनुदान, और बीमा योजनाओं जैसी वित्तीय सेवाओं तक आसानी से पहुँच प्रदान करना।

क्षमता निर्माण (Capacity Building): किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों, डिजिटल उपकरणों और टिकाऊ खेती के तरीकों का प्रशिक्षण देना।

मूल्य संवर्धन (Value Addition): कृषि उत्पादों की ग्रेडिंग, पैकेजिंग, प्रसंस्करण और ब्रांडिंग जैसी गतिविधियों को बढ़ावा देना।

किसानों के लिए एफपीओ (FPOs) के लाभ

अधिक आय (Higher Income): सामूहिक रूप से अपनी उपज बेचने से किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त होता है।

कम लागत (Lower Input Costs): बीज, खाद, कीटनाशक और कृषि उपकरण थोक में खरीदने से लागत कम होती है।

बाज़ार से जुड़ाव (Market Linkages): किसानों को सीधे मंडियों, खुदरा श्रृंखलाओं (retail chains) और निर्यातकों से जोड़ने में मदद मिलती है।

तकनीकी पहुँच (Access to Technology): एफपीओ किसानों को नई कृषि तकनीकों, डिजिटल प्लेटफॉर्म और सटीक खेती (precision farming) के प्रशिक्षण की सुविधा देता है।

जोखिम प्रबंधन (Risk Management): जलवायु परिवर्तन, कीट हमलों और मूल्य अस्थिरता जैसी समस्याओं से सामूहिक रूप से निपटने में सहायता मिलती है।

सरकारी सहायता (Government Support): एफपीओ सदस्यों को सब्सिडी, ऋण सुविधाएँ और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का लाभ आसानी से मिलता है।

एफपीओ कैसे बनाया जाता है? (How to Form an FPO?)

* **समूह गठन (Group Formation):** लगभग 10-20 किसान (राज्य और नियमों के अनुसार) मिलकर समूह बनाते हैं।

* **पंजीकरण (Registration):** यह समूह कानूनी रूप से प्रोड्यूसर कंपनी, सोसाइटी या ट्रस्टके रूप में पंजीकृत किया जाता है।

* **व्यवसाय योजना (Business Plan):** सदस्य बीज, खाद की खरीद, उपज के विपणन या प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित करने के लिए एक व्यावसायिक योजना तैयार करते हैं।

* **सहयोगी संस्थाएँ (Support Agencies):** नाबार्ड (NABARD), एसएफएसी (SFAC) और राज्य कृषि विभाग तकनीकी व वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं।

दलोदा एफपीओ की सफलता/ एफपीओ की सफलताएँ (E&amples of FPO Success)

FPO (मंदसौर एग्रो इंडस्ट्री प्रोड्यूसर कंपनी लिमिटेड,दलौदा, जिला मंदसौर) इस FPO में 750 से अधिक किसान जुड़े हुए हैं, इस कंपनी का सालाना टर्नओवर 1.3 करोड़ से अधिक है, यह एफपीओ मुख्य रूप से खाद, बीज और कीटनाशक किसानों को उचित मूल्य पर उपलब्ध करवाता है। मंदसौर एग्रो इंडस्ट्री प्रोड्यूसर कंपनी लिमिटेड ने पराली प्रबंधन के क्षेत्र में काम किया, जिसमें उन्होंने अलसी के दांथल की समस्या पर ध्यान दिया और समस्या का निदान करने के बारे में सोचा। उन्होंने अलसी से फाइबर बनाने वाली कंपनी से मिलकर अलसी की पराली एकत्र की। इससे किसानों को प्रति हेक्टेयर 1500 से 2000 रुपये का लाभ हुआ और इस दौरान 15 से 20 लोगों को नियमित रोजगार भी मिला। पिछले वर्ष 2025 में, 200 टन अलसी की पराली गुजरात की एक कंपनी को भेजी गई, जिससे एफपीओ को काफी लाभ हुआ।

एफपीओ की चुनौतियाँ (Challenges of FPOs)

* किसानों में एफपीओ के प्रति जागरूकता की कमी
* कुछ समूहों में प्रबंधन और नेतृत्व की कमजोरियाँ
* सीमित वित्तीय संसाधन
* मार्केटिंग और ब्रांडिंग से जुड़ी कठिनाइयाँ

सरकारी पहलें (Government Initiatives for FPOs)

* **10,000 एफपीओ गठन एवं प्रोत्साहन योजना (2020-24):** भारत सरकार की यह योजना देशभर में 10,000 नए एफपीओ स्थापित करने का लक्ष्य रखती है।

* नाबार्ड (NABARD), एसएफएसी (SFAC)और राज्य कृषि विभागों द्वारा क्षमता निर्माण और वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

* उत्पादक कंपनियों (Producer Companies) को शुरुआती 5 वर्षों तक कर (Tax) में छूट दी जाती है।

निष्कर्ष (Conclusion)-एफपीओ आज के प्रतिस्पर्धी कृषि क्षेत्र में किसानों को सशक्त बनाने का एक प्रभावी माध्यम हैं। सामूहिक रूप से काम करके किसान अपनीआय बढ़ा सकते हैं, जोखिम घटा सकते हैं, और बेहतर बाज़ार व तकनीकी सुविधाएँ प्राप्त कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

भारत विस्तार (Bharat-VISTAAR) AI योजना–किसानों के लिए लाभदायक

डॉ. राम कुमार राय गेस्ट फैकल्टी (उद्यानिकी विभाग), जवारलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय पन्ना (म.प्र.)

1. प्रस्तावना- भारत सरकार ने 17 फरवरी 2026 को किसानों के लिए एक आधुनिक डिजिटल पहल Bharat VISTAAR लॉन्च की। इसका शुभारंभ केंद्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान द्वारा राजस्थान के जयपुर में किया गया। यह योजना आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) आधारित एक मल्टीलिंगुअल (बहुभाषी) प्लेटफॉर्म है, जिसका उद्देश्य किसानों को एक ही स्थान पर सभी कृषि जानकारी उपलब्ध कराना है।

2. भारत विस्तार AI योजना क्या है?-भारत विस्तार (Bharat-VISTAAR) एक AI आधारित डिजिटल कृषि सलाह प्रणाली है, जो किसानों को उनकी भाषा में खेती से जुड़ी जानकारी प्रदान करती है।

इस प्लेटफॉर्म की मुख्य विशेषताएं * फसल योजना (Crop Planning) * कीट एवं रोग नियंत्रण जानकारी * मौसम पूर्वानुमान * मंडी भाव (Market Prices) * सरकारी योजनाओं की जानकारी * व्यक्तिगत (Customized) सलाह यह प्लेटफॉर्म AgriStack और ICAR तकनीकों को AI के साथ जोड़कर काम करता है।

3. योजना का उद्देश्य

भारत विस्तार योजना का मुख्य उद्देश्य है-

1. किसानों को सटीक और समय पर जानकारी देना 2. कृषि को डिजिटल और स्मार्ट बनाना 3. उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाना 4. खेती में जोखिम कम करना 5. किसानों को स्वावलंबी और तकनीकी रूप से सक्षम बनाना

सरकार का लक्ष्य है कि यह योजना किसानों को "डेटा आधारित निर्णय लेने" में सक्षम बनाए।

4. किसानों के लिए लाभ

(1) अपनी भाषा में जानकारी-किसान अपनी स्थानीय भाषा में AI से बात कर सकते हैं और खेती से जुड़े सवाल पूछ सकते हैं। भारत जैसे देश में किसान अलग-अलग भाषाएँ बोलते हैं। इस योजना में AI सिस्टम किसान से हिंदी, मराठी, पंजाबी, तमिल आदि भाषाओं में बात कर सकते है।

इसका मतलब-* किसान अपनी भाषा में सवाल पूछ सकते है * उसे उसी भाषा में जवाब मिलेगा * पढ़े-लिखे होने की आवश्यकता कम हो जाती है

फायदा-गांव के छोटे किसान भी बिना किसी भाषा बाधा के तकनीक का उपयोग कर सकते हैं।

(2) सटीक सलाह-यह योजना AI और डेटा का उपयोग करके हर किसान को उसकी जमीन और फसल के अनुसार अलग-अलग सलाह देती है।

यह किन चीजों के आधार पर सलाह देती है- * मिट्टी का प्रकार * मौसम की स्थिति * बोई गई फसल * क्षेत्र

उदाहरण-अगर किसी किसान की जमीन में नाइट्रोजन की कमी है, तो AI उसे सही उर्वरक की मात्रा बताएगा।

फायदा-"एक जैसा समाधान" नहीं, बल्कि हर किसान को कस्टम सलाह मिलती है।

(3) उत्पादन में वृद्धि-वैज्ञानिक और आधुनिक तकनीकों के उपयोग से फसल उत्पादन बढ़ता है। AI किसानों को आधुनिक खेती के तरीके बताता है जैसे-* उन्नत बीज का चयन * सही समय पर बुवाई * सिंचाई का सही तरीका

इससे क्या होता है-* फसल की गुणवत्ता बढ़ती है * प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ता है

फायदा-कम जमीन में भी ज्यादा उपज ज्यादा आय

(4) जोखिम में कमी-मौसम, कीट और रोगों की जानकारी पहले से मिलने से नुकसान कम होता है।

खेती में सबसे बड़ा खतरा होता है-* खराब मौसम * कीट और रोग * बाजार में उतार-चढ़ाव

यह योजना पहले से जानकारी देती है-* बारिश कब होगी * कीट हमला होने की संभावना * कौन सा रोग फैल सकता है

उदाहरण-अगर AI बताता है कि अगले 3 दिन बारिश होगी, तो किसान पहले ही दवा छिड़क सकता है, किसान भाई कर्षण क्रियाओ को कर सकते है

फायदा-फसल खराब होने का खतरा कम हो जाता है।

(5) बाजार की सही जानकारी-मंडी भाव और बाजार की जानकारी मिलने से किसान सही समय पर अपनी उपज बेच सकता है।

AI प्लेटफॉर्म किसानों को देता है-* मंडी भाव (आज का रेट) * किस बाजार में ज्यादा कीमत मिल रही है * कब बेचना सही रहेगा

उदाहरण-अगर गेहूं का भाव अगले सप्ताह बढ़ने वाला है, तो किसान तुरंत बेचने के बजाय इंतजार कर सकता है।

फायदा: किसान को उसकी फसल का अधिकतम मूल्य मिलता है।

(6) आसान उपयोग-यह सिस्टम वॉइस (आवाज) आधारित है, जिससे कम पढ़े-लिखे किसान भी आसानी से उपयोग कर सकते हैं। यह योजना खासतौर पर ऐसे किसानों के लिए बनाई गई है जो-* ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं हैं * स्मार्टफोन का कम उपयोग करते हैं

इसमें क्या सुविधा है * किसान बोलकर सवाल पूछ सकता है * AI आवाज में जवाब देता है। जैसे-"मेरी गेहूं की फसल में कीड़ा लग गया है क्या करूं?"

फायदा-तकनीक का उपयोग हर किसान कर सकता है, चाहे वह पढ़ा-लिखा हो या नहीं।

(7) सरकारी योजनाओं तक पहुँच- किसान सीधे सरकारी योजनाओं की जानकारी, पात्रता और आवेदन प्रक्रिया जान सकते हैं।। कई बार किसानों को सरकारी योजनाओं की जानकारी नहीं होती।

यह प्लेटफॉर्म बताएगा * कौन-सी योजना आपके लिए है * पात्रता (Eligibility) क्या है * आवेदन कैसे करें

उदाहरण-* फसल बीमा योजना * सब्सिडी योजनाएं * कृषि उपकरण सहायता

फायदा-किसान सरकारी लाभ से वंचित नहीं रहता।

5. विशेषताएँ * AI आधारित "डिजिटल साथी" * मोबाइल और फोन कॉल के माध्यम से उपलब्ध * मौसम, बाजार और कृषि डेटा का एकीकरण * चरणबद्ध तरीके से पूरे भारत में विस्तार

6. अंततः भारत विस्तार योजना भारतीय कृषि क्षेत्र में डिजिटल क्रांति की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यह योजना किसानों को ज्ञान, तकनीक और जानकारी से सशक्त बनाकर उनकी आय बढ़ाने, जोखिम कम करने और खेती को आधुनिक बनाने में मदद करेगी।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

भारत में फल उत्पादन

सुनित भदरगे पीएच.डी. शोध छात्र, (फल विज्ञान) बागवानी विभाग, स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर, आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर-475001 (म.प्र.)

परिचय: भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ विविध जलवायु, उपजाऊ मिट्टी और पारंपरिक कृषि ज्ञान के कारण बागवानी फसलों का विशेष महत्व है। बागवानी की प्रमुख शाखाओं में फल उत्पादन (फल विज्ञान) सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती है। फल न केवल मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करते हैं, बल्कि किसानों की आय बढ़ाने और कृषि क्षेत्र की आर्थिक उन्नति में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

आज के समय में फल उत्पादन ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने का एक प्रभावी माध्यम बन चुका है। आधुनिक तकनीकों, उन्नत किस्मों तथा सरकारी योजनाओं के सहयोग से भारत में फल उत्पादन निरंतर बढ़ रहा है।

भारत में फल उत्पादन का महत्व: फल हमारे दैनिक आहार का महत्वपूर्ण भाग हैं। इनमें विटामिन, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, फाइबर तथा एंटीऑक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। नियमित रूप से फल खाने से कई बीमारियों से बचाव होता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

फल उत्पादन के प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं:

1.पोषण सुरक्षा: फलों से शरीर को आवश्यक विटामिन और खनिज प्राप्त होते हैं।

2.किसानों की आय में वृद्धि : पारंपरिक फसलों की तुलना में फल फसलें अधिक लाभकारी होती हैं।

3.रोजगार के अवसर : फल उत्पादन, प्रसंस्करण, भंडारण और विपणन में रोजगार उत्पन्न होता है।

4.निर्यात में योगदान : कई भारतीय फल अंतरराष्ट्रीय बाजारों में निर्यात किए जाते हैं।

5.भूमि का बेहतर उपयोग : पहाड़ी, बंजर या ढलान वाली भूमि में भी फल बाग लगाए जा सकते हैं।

भारत में फल उत्पादन की स्थिति: भारत विश्व के प्रमुख फल उत्पादक देशों में से एक है। यहाँ लगभग सभी प्रकार के उष्णकटिबंधीय, उपोष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण फल उगाए जाते हैं। देश में विविध जलवायु परिस्थितियाँ होने के कारण अलग-अलग क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के फल सफलतापूर्वक उगाए जाते हैं।

भारत में प्रमुख फल उत्पादन करने वाले राज्य हैं- * उत्तर प्रदेश * महाराष्ट्र * आंध्र प्रदेश * कर्नाटक * गुजरात * बिहार * तमिलनाडु * पश्चिम बंगाल * मध्य प्रदेश इन राज्यों में बड़े पैमाने पर फल बागवानी की जाती है।

भारत के प्रमुख फलभारत में कई प्रकार के फल उगाए जाते हैं, जिनमें कुछ प्रमुख फल निम्नलिखित हैं-

1. आम: आम को फलों का राजा कहा जाता है। भारत आम उत्पादन में विश्व में अग्रणी है। उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र और कर्नाटक में आम की खेती व्यापक रूप से की जाती है।

2. केला: केला भारत का सबसे अधिक उत्पादित फल है। यह पूरे वर्ष उपलब्ध रहता है और पोषण से भरपूर होता है। तमिलनाडु, महाराष्ट्र, गुजरात और आंध्र प्रदेश में केला उत्पादन अधिक होता है।

3. संतरा और मौसंबी: ये खट्टे फलों की श्रेणी में आते हैं और विटामिन-सी से भरपूर होते हैं। महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब और राजस्थान में इनकी खेती प्रमुख रूप से होती है।

4. अमरूद: अमरूद को "गरीबों का सेब" भी कहा जाता है। यह पौष्टिक और कम लागत में उगाया जाने वाला फल है। उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं।

5. सेब: सेब मुख्यतः पहाड़ी क्षेत्रों में उगाया जाता है। हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर और उत्तराखंड इसके प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं।

6. अंगूर: अंगूर का उपयोग ताजे फल, जूस और किशमिश बनाने में किया जाता है। महाराष्ट्र और कर्नाटक में इसकी खेती अधिक होती है।

7. पपीता: पपीता एक तेजी से बढ़ने वाला फल है जिसमें विटामिन-ए और पाचन एंजाइम प्रचुर मात्रा में होते हैं।

फल उत्पादन हेतु उपयुक्त जलवायु और मिट्टी: फल फसलों की सफलता मुख्य रूप से जलवायु और मिट्टी पर निर्भर करती है।

जलवायु

उष्णकटिबंधीय फल: आम, केला, पपीता

उपोष्णकटिबंधीय फल: अमरूद, लीची, संतरा

समशीतोष्ण फल: सेब, नाशपाती, चेरी

मिट्टी: अधिकांश फल फसलें अच्छी जल निकासी वाली दोमट या बलुई दोमट मिट्टी में अच्छी तरह बढ़ती हैं। मिट्टी का pH सामान्यतः 6.0 से 7.5 के बीच होना चाहिए।

फल उत्पादन में आधुनिक तकनीक: आज के समय में फल उत्पादन को बढ़ाने के लिए कई वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है:

1. उन्नत किस्मों का चयन: उच्च उत्पादक और रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन उत्पादन बढ़ाने में सहायक होता है।

2. उच्च घनत्व रोपण- इस पद्धति में कम क्षेत्र में अधिक पौधे लगाए जाते हैं जिससे उत्पादन बढ़ता है।

3. ड्रिप सिंचाई- ड्रिप सिंचाई प्रणाली से पानी की बचत होती है और पौधों को आवश्यक मात्रा में पानी मिलता है।

4. मल्चिंग- मल्चिंग से मिट्टी में नमी बनी रहती है, खरपतवार कम होते हैं और पौधों की वृद्धि अच्छी होती है।

5. समेकित पोषक तत्व प्रबंधन (INM)- जैविक खाद, रासायनिक उर्वरक और सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए आवश्यक है।

6. समेकित कीट प्रबंधन (IPM)- इस तकनीक के माध्यम से कीटों और रोगों को नियंत्रित किया जाता है तथा रासायनिक दवाओं का कम उपयोग किया जाता है।

बागवानी विभाग की भूमिका- फल उत्पादन को बढ़ावा देने में बागवानी विभाग की महत्वपूर्ण भूमिका है। **विभाग किसानों को निम्नलिखित सुविधाएँ प्रदान करता है:**

* उन्नत पौध सामग्री उपलब्ध कराना * प्रशिक्षण और तकनीकी मार्गदर्शन देना * नई बागवानी तकनीकों का प्रचार-प्रसार * सरकारी योजनाओं के माध्यम से आर्थिक सहायता * फल प्रसंस्करण और विपणन की सुविधा

सरकारी योजनाओं के माध्यम से किसानों को फल बाग लगाने, सिंचाई व्यवस्था और कोल्ड स्टोरेज जैसी सुविधाओं के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

फल उत्पादन में चुनौतियां-हालांकि भारत में फल उत्पादन तेजी से बढ़ रहा है, फिर भी कुछ समस्याएँ सामने आती हैं:

* जलवायु परिवर्तन * कीट एवं रोगों का प्रकोप * भंडारण और परिवहन की कमी * बाजार तक उचित पहुँच का अभाव

इन चुनौतियों का समाधान आधुनिक तकनीकों और बेहतर प्रबंधन से किया जा सकता है।

निष्कर्ष: भारत में फल उत्पादन कृषि क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण भाग है। यह न केवल पोषण सुरक्षा प्रदान करता है बल्कि किसानों की आय बढ़ाने और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि किसान आधुनिक बागवानी तकनीकों को अपनाएँ और सरकारी योजनाओं का लाभ उठाएं तो फल उत्पादन को और अधिक बढ़ाया जा सकता है। भविष्य में वैज्ञानिक अनुसंधान, उन्नत तकनीक और बागवानी विभाग के सहयोग से भारत फल उत्पादन के क्षेत्र में और अधिक प्रगति कर सकता है।

भारतीय गांव में पारंपरिक गेहूं भंडारण प्रथाएं

जैकी वर्मा पीएचडी स्कॉलर, कृषि विस्तार विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना

डॉ. डी.पी. राय प्रोफेसर एण्ड डीन, कृषि संकाय, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना

प्रिंस त्रिपाठी एमएससी कृषि विस्तार में (कृषि विस्तार शिक्षा विभाग), महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना

अमूर्तः भारतीय ग्रामीण समाज में उपलब्ध संसाधनों से गेहूं भंडारण की स्थानीय पारंपरिक ज्ञान एवं प्रथाएं खाद्य सुरक्षा और कृषि संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा रही है जिसमें प्याज, लहसुन, नीम की पत्तियां एवं अन्य लौंग, कपूर, राख, हल्दी व भंडारण से पूर्व गेहूं को तेज धूप में अच्छी तरह सुखना जैसी विधियों का प्रयोग कर गेहूं भंडारित किया जाता था जिनके प्रयोग से घुन, लाल? आटा बीटल, खपरा बीटल जैसे कीट दूर रहते थे लेकिन तेजी से बढ़ते रासायनिक पदार्थ फ्यूमिगेंट्स का इस्तेमाल पारिवारिक उपभोग के लिए भंडारित गेहूं में बढ़ रहा है जो स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के प्रतिकूल है साथ ही भंडारित अनाजों में अपने विषैले पन को भी छोड़ते हैं जो धुलने के पश्चात भी नहीं जाते परंतु प्याज, लहसुन, नीम जैसी पारंपरिक विधियाँ स्वास्थ्य, किसान एवं पर्यावरण के अनुकूल है जो गेहूं को नमी, फफूंद ,कीट एवं चूहों से सुरक्षित रखने के लिए एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में प्रस्तुत है परंतु तेजी से बदलती जीवनशैली एवं आधुनिकता के कारण हम अपनी स्थानीय एवं पारंपरिक ज्ञान को भूलते जा रहे हैं और विषैले रासायनिक पदार्थों पर निर्भर होते जा रहे हैं जो असुरक्षित एवं हानिकारक है भंडारण के इस पारंपरिक ज्ञान को अन्य लोगों तक पहुंचाने की आवश्यकता है जो केवल रासायनिक पदार्थों का उपयोग कर अपने अनाजों का भंडारण करते हैं यह पारंपरिक विधियां कम लागत, स्थानीय उपलब्धता, टिकाऊपन और पर्यावरण-मैत्री गुणों के कारण अनेक ग्रामीण परिवारों द्वारा आज भी अपनाई जाती हैं यह अध्ययन इन प्रथाओं की प्रभावशीलता और आज के संदर्भ में उनकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

परिचयः भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा गेहूं (Triticum aestivum) उत्पादक देश है जो कभी घरेलू खपत पूर्ण करने के लिए आयात पर निर्भर रहता था आज वैश्विक गेहूं उत्पादन में लगभग 13 से 14 प्रतिशत का योगदान देता है गेहूं भारत की दूसरी प्रमुख फसल है (धान के बाद) जो मुख्यतः उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान और देश के अन्य भागों में उगाई जाती है भोजन की दृष्टि से यह एक मुख्य खाद्य फसल है जो गांव में वैशाख, ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) में गेहूं को धुलकर और सुखाकर प्याज, नीम, लहसुन आदि का प्रयोग कर अनाज को नमी, फफूंद, कीट, चूहों से बचाकर और बड़े-बड़े ड्रमो में लंबे समय के पारिवारिक उपभोग के लिए भंडारित किया जाता है लेकिन आज शहरों एवं गांव में फ्यूमिगेंट्स जैसे रासायनिक पदार्थों का प्रयोग गेहूं भंडारण में तेजी से बढ़ता दिखाई दे रहा है जो स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के प्रतिकूल है पारंपरिक विधियां जो आज भी कई गांवों में भंडार हेतु प्रयोग की जाती है छोटे और सीमांत किसान परिवारों द्वारा उत्पादित 60-70% खाद्यान्न जैसे गेहूं को घरेलू स्तर पर इन्हीं पारंपरिक विधियों से संरक्षित किया जाता है।

आधुनिक विधि एवं उसके प्रभाव-कीटों से सुरक्षा के लिए विभिन्न फ्यूमिगेंट्स जैसे अल्युमिनियम फास्फाइड, फास्फीन गैस जैसे पदार्थों का प्रयोग करते हैं जो गेहूं को सुरक्षा तो कुछ समय तक देते हैं साथ ही भंडारित अनाज में अपने विषैलेपन को भी छोड़ते हैं जिससे उनमें जहरीले तत्व मिल जाते हैं जो धुलने के पश्चात भी पूरी तरह से नहीं जाते और जल को भी दूषित करते हैं ऐसे अनाजों के उपभोग से स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव एवं विभिन्न रोगों के जन्म का कारण बनते हैं।

पारंपरिक विधि एवं उसके प्रभाव— बिना फ्यूमिगेंट्स यह रासायनिक पदार्थों का उपयोग किये आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में दो से तीन साल तक गेहूं का भंडारण सुरक्षित तरीके से किया जा रहा है जो स्थानीय एवं पारंपरिक ज्ञान पर आधारित पूर्णतः सुरक्षित एवं पर्यावरण अनुकूल है जो प्याज (Onion), लहसुन (Garlic), नीम (Neem) की सूखी पत्तियों पर आधारित है यह पद्धतियां मुझे अपने रॉवे कार्य के दौरान एक किसान परिवार के यहां देखने को मिला जो 306 गेहूं की किस्म को धुलकर लड़की की शादी में उपभोग हेतु दो साल तक केवल प्याज के उपयोग से कीटों से सुरक्षित रखा जो जानने एवं विचार करने के साथ ही अन्य लोगों तक यह भंडारण तकनीक पहुंचाने की आवश्यकता है जो केवल रासायनिक पदार्थों का उपयोग कर अपने अनाजों का भंडारण करते हैं जो उनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डालते हैं और गेहूं को सुरक्षित करने और सही समय पर उपभोग मांग के लिए भंडारित गेहूं की पूर्ति प्राप्त करना उसे धुलना ऐसे मौसम में जब वर्षा एवं कोहरा जैसी प्रतिकूल परिस्थितियां व्याप्त हो लेकिन प्याज, लहसुन एवं नीम की पत्तियों से भंडारित गेहूं का प्रयोग किसी भी समय पारिवारिक उपभोग के लिए किया जा सकता है जो पूर्णतः सुरक्षित एवं दुष्प्रभाव रहित है।

प्याज, लहसुन एवं नीम कैसे कार्य करता है गेहूं भंडारण में—

प्याज (Onion–Allicin cepa L) में सल्फर यौगिक (sulfur compounds) जैसे एलिसिन (Allicin) और डाईसल्फाइड (Disulphide) निकलते हैं ये यौगिक तीखी गंध फैलाते हैं जो गेहूं भंडारण पात्र (storage bin) के अंदर की हवा में फैलकर एक प्रकार का repellent barrier का काम करता है जो कीटों जैसे– घुन (wheat weevil), खपरा बीटल और भंडारण पतंग (storage moth) को दूर रखती हैं प्याज से निकलने वाली गंध कीटों की भोजन की क्षमता को घटाती है और अनाज की गुणवत्ता बनाए रखती है।

लहसुन (Garlic—Allium sativum) लहसुन एक प्रभावी प्राकृतिक कीटनाशी (Bio-pesticide) का कार्य करती हैं जिसमें मौजूद एलिसिन (Allicin) यौगिक कीटों को सांस लेने और प्रजनन प्रणाली को प्रभावित करती है जो गेहूं के भंडारण में कीटों को रोकने में उपयोगी है।

नीमः नीम सबसे अधिक प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल तरीका है गेहूं को कीटों से बचाने का नीम में पाया जाने वाला zadirachtin यौगिक कीटों के विकास, खाने और प्रजनन को रोकता है जिससे घुन, पतंगे, और अन्य भंडारण कीट दूर रहते है नीम का उपयोग करने से गेहूं की सेल्फ लाइफ बढ़ जाती है।

पारंपरिक गेहूं भडारण की विस्तृत विधियां— प्याज के उपयोग से– इस विधि में गेहूं को धूल कर अच्छी तरह से दो्‌तीन दिन तक धूप में सुखा लें फिर जिस पात्र में भंडारित करना है जैसे ड्रम को एक दिन के लिए धूप में रख दें उसके बाद आप छोटी प्याज 5 किलो प्रति 100 किलो गेहूं पर 8 से 9 रुपए किलो बाजार में मिल जाएगी उसको लाकर धूप में एक दिन रखकर उससे खराब एवं क्षतिग्रस्त वाली प्याज हटा दें अब भंडारण के लिए आप जिस जगह पर ड्रम को रखना चाहते हैं उसे रख दे लेकिन ध्यान रहे सीधी धूप, बारिश या दीवार की नमी या शीत से बचें आप ड्रम को ईटों या लकड़ी के तख्ते पर 6ङ्8 इंच की ऊंचाई पर रख सकते हैं गेहूं को ड्रम में भरते समय परत दर परत प्याज भी डालें (जैसेंङ्घ एक परत गेहूं– थोड़ी प्याज– फिर गेहूं– फिर प्याज) और कोनों में एवं ड्रम की सतह पर भी प्याज रखें ऐसा करते हुए आपको गेहूं भंडारित करना है ड्रम में गेहूं की ऊपरी सतह पर प्याज रखकर फिर बोरी से उसको अच्छी तरह से ढक्कर बंद कर दें जिससे उसमें बनने वाली तीखी गंध बाहर ना आए और अंदर ही बने जिससे कीटों का प्रवेश अंदर ना हो पाए।

लहसुन के उपयोग से— यह विधि प्याज की विधि जैसी ही आपको लहसुन बाजार से लेकर उसकी कलियों को अलगङ्अलग कर परत दर परत गेहूं के बाद लहसुन डालते जाना है जो 1 से 1.5 किलो प्रति 100 किलो गेहूं पर भंडारित करने की आवश्यकता पड़ती है।

नीम की पत्तियों से— इस विधि में नीम की पतियों को तोड़कर धूप में अच्छी तरह सुखा लें ताकि उनमें नमी न रहे और फिर गेहूं को ड्रम में भरते समय नीम की पत्तियां भी साथ में डालते जाएं आखरी ऊपरी एवं सतह में भी नीम की पत्तियां रखें फिर किसी बोरी की सहायता से ढक्कर ड्रम को बंद कर दें।

अन्य विधियां—

***लौंग विधि*—**लौंग में यूजेनॉल नामक रसायन होता है जो कीटों को मारता है जिसका प्रयोग प्रति 100 किलो गेहूं पर 10 से 15 लॉन्ग कपड़े में बांधकर विभिन्न परतों एवं कोनो में रख दे जो विशेष रूप से घरेलू भंडारण के लिए लाभकारी है।

हल्दी पाउडर विधि—हल्दी में एंटीफंगल और एंटीइंसेक्ट गुण होते हैं जिससे फफूंद नहीं लगती हल्दी का पाउडर लगभग 200 ग्राम प्रति 100 किलो गेहूं पर डालें।

कपूर विधि— इस विधि में कपूर की गोलियां जो कीटों को दूर रखती है जिसका प्रयोग प्रति 100 किलो गेहूं में 10-15 ग्राम कपूर कपड़े की थैली में रखकर बीच-बीच में डालें ध्यान रहे कपूर सीधे अनाज में ना छुए।

धूप में सुखना— इस विधि में गेहूं को भंडारण से पूर्व तेज धूप में दो-तीन दिन तक सुखाएं जिससे गेहूं में नमी 10 से 15 प्रतिशत कम हो जाती है और कीट, फफूंद नहीं लगते यह एक सामान्य एवं सरल विधि है।

राख विधि– इस भंडारण तकनीक में गेहूं को बिना धुले हुए अच्छी धूप में दो-तीन दिन सुखा लें फिर साफ और सुखी राख जो लकड़ी, गोबर या भूसे की हो का उपयोग कर गेहूं राख की परत बनाते हुए गेहूं भंडारित करें ऊपरी एवं सतह पर राख को अच्छी तरह से फैलाकर ढक दें।

निष्कर्ष— पारंपरिक गेहूं भंडारण तकनीक एवं ज्ञान गेहूं को लंबे समय तक सुरक्षित रखने में अत्यंत उपयोगी है यह विधियां अनाज की गुणवत्ता तथा अंकुरण क्षमता बनाए रखती है साथ ही घुन, कीट, नमी और फफूंद का नियंत्रण भी करती है रासायनिक फ्यूमिगेंट्स की तुलना में यह पारंपरिक विधियां कम खर्च एवं स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित और पर्यावरण एवं किसान के अनुकूल है इसलिए पारंपरिक ज्ञान और तकनीक भविष्य में टिकाऊ और सुरक्षित भंडारण के लिए आवश्यक है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

बैकयार्ड मुर्गी पालन के सामान्य रोग एवं उनके बचाव

नम्रता उपाध्याय, अर्पिता श्रीवास्तव, नीरज श्रीवास्तव
दुगेश मिश्रा, राजीव रंजन, स्वतंत्र सिंह, नीतेश कुमार
अंकुश निरंजन, अमित कुमार झा
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

ग्रामीण क्षेत्रों में बैकयार्ड मुर्गी पालन न केवल पोषण का स्रोत है, अपितु आय का एक महत्वपूर्ण साधन भी है। इन मुर्गियों मे रोग बहुत जल्दी फैलता है। बीमारियों का प्रकोप मुर्गियों में अक्सर भारी नुकसान का कारण भी बनता है। इन रोगों की समय पर पहचान और बचाव ही सफल मुर्गी पालन का आधार है।

बैकयार्ड मुर्गियों में होने वाले रोगों विषाणुजनित रोग

रानीखेत: यह सबसे घातक बीमारी है। इसमे अधिकांष चूजे मर जाते है। सभी मुर्गियों का बीमार होना तथा प्रायः 90% से ज्यादा बीमार मुर्गियों की मृत्यु होना इस रोग का प्रमुख लक्षणों में से होता है। मुर्गियाँ सुस्त हो जाती है ,खाना-पीना बंद कर देती है। हरा/पीला या सफेद रंग के दस्त होते हैं। सिर में सुजन व मुंह से लार गिरना। आधा मुंह खोलकर लंबी-लंबी साँस लेना साँस लेने में तकलीफ होती है, एवं साँस लेने में आवाज आना। मुर्गियों का ऊँघना-झुमना इसलिए इस रोग को झुमरी रोग भी कहते है। ।रोग के विषाणु अक्सर दूषित जल व दाने तथा बीमार व स्वस्थ्य मुर्गियों के एक दुसरे के संपर्क में आने से फैलता है। इस रोग से बचाव के लिए यह आवश्यक है कि मुर्गियों में रानीखेत का टीकाकरण नियमित रूप से किया जाये। दस्त होना। लकवा मारना-पंख लटक जाना/पांव का अकड़ जाना गर्दन टेड़ी होना।

फाउल पॉक्स: इसमें मुर्गियों की कलगी, आँखों और पंख रहित हिस्सों पर मस्से जैसे दाने निकल आते हैं।देशी मुर्गियों में चेचक/माता रोग एक आम व् दूसरी प्रमुख बीमारी है। इससे ग्रस्त प्रायः सभी छोटे चूजों की मृत्यु हो जाती है। बड़ी मुर्गियों की मृत्यु तो कम होती है पर स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। यह एक विषाणु जनित रोग होने के कारण इसका इलाज संभव नही है। टीकाकरण ही एकमात्र बचाव का उपाय है। चूँकि बीमारी गाँव/पारा की मुर्गियों में छोटे/बड़े रूप में साल भर होती रहती है, इस कारण नियमित टीकाकरण से ही बीमारी से बचा जा सकता है। (साल में दो बार)।

यह बीमारी शरीर के अनेक स्थानो को प्रभावित करती है। त्वचा का चेचक सबसे अधिक देखने को मिलते है। छोटे-छोटे मटमैले छालों की तरह दाने कलगी तथा पंख रहते हिस्सों का उभर आते हैं। व् जल्दी से बढ़ जाते हैं और पपड़ी बन जाते है। फिर आपस में जुड़ जाते हैं व चेचक का रूप में ले लेते हैं।गले मे चेचक की यह किस्म सबसे ज्यादा नुकसानदेह है। इससे छोटे चूजों व बड़ी मुर्गियाँ की समान रूप से मृत्यु होती है। इसमें मुंह व गले के अंदर उभरे हुए छाले हो जाते है, जो बड़े होकर और गहरे हो जाते हैं। मुर्गियाँ अच्छी तरह खा नहीं पाती व उनकी हालत जल्दी बिगड़ जाती है व शीघ्र ही उनकी मृत्यु हो जाती है। जब यह चेचक आँखों को प्रभावित करती है तब आँखों में पानी आने लगता है जो बाद में गाढ़ा हो जाता है, आखें पीप से भर जाती है और फूल जाती है। पलक चिपक जाती हैं और मुर्गी देख नहीं पाती। फलस्वरूप भूख से मृत्यु हो जाती है। यह देखा गया है कि एक ही समय में अलग-अलग मुर्गियों में तीनों किस्में हो सकती है। चूकि यह एक विषाणु जनित रोग है अतः इसका इलाज सभव नही होता परन्तु छालों या फफोलों पर कोई एक अच्छा एंटीबायोटिक मलहम लगाकर रोग की तीव्रता को कम किया जा सकता है, रोग न होने से पहले नियमित टीकाकरण ही बचाव का एकमात्र सही एवं सस्ता उपाय है।

मैरेक्स : मुर्गियों में होने वाली एक बहुत ही संक्रामक और घातक बीमारी है।यह एक हर्पीस वायरस के कारण होता है।इसमें मुर्गियों के पैरों, पंखों या गर्दन में लकवा मार जाता है। एक विशिष्ट लक्षण है 'एक पैर आगे और एक पैर पीछे' की स्थिति बन जाती है शरीर के आंतरिक अंगों जैसे लीवर, तिल्ली, और फेफड़ों में ट्यूमर बन जाते हैं।

आंखों का रंग बदल जाता है,कुछ मामलों में आंखों की पुतली का आकार बदल जाता है और वे धूसर हो जाती हैं, जिससे अंधापन हो सकता है। यह मुख्य रूप से संक्रमित पंखों की धूल और हवा के जरिए फैलता है। इसका एकमात्र प्रभावी इलाज टीकाकरण है। चूजों को हैचरी से निकलते ही पहले दिन (Day 0) HVT 'Herpes Virus of Turkeys' का टीका लगाया जाना चाहिए।फार्म में साफ-सफाई रखें और नए पक्षियों को पुराने झुंड से अलग रखें। एक बार संक्रमण होने के बाद इसका कोई प्रभावी इलाज नहीं है, इसलिए टीकाकरण ही सबसे महत्वपूर्ण है।

इन्फेक्शियस बरसल डिजीज (IBD), जिसे आमतौर पर 'गुम्बोरो' के नाम से जाना जाता है, मुर्गियों के छोटे बच्चों (विशेषकर 3 से 6 सप्ताह की आयु) में होने वाली एक गंभीर वायरल बीमारी है।यह श्बिरनावायरसश् (ठपतदंअपतने) के कारण होता है। यह वायरस मुर्गियों की 'बर्सा ऑफ फैब्रिसियस' ग्रंथि पर हमला करता है, जो उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बनाती है। इसके नष्ट होने से पक्षी अन्य बीमारियों से लड़ने में अक्षम हो जाता है। पक्षियों को गंभीर दस्त होते सफेद पानी जैसा जिससे उनके पीछे के पंख गंदे हो जाते हैं। पक्षी सुस्त होकर बैठ जाते हैं, पंख फैला देते हैं और खाना-पीना छोड़ देते हैं। पक्षियों में थराहट या कपकपी देखी जा सकती है। अचानक से बड़ी संख्या में चूजों की मौत होने लगती है। गुम्बोरों से बचने का सबसे प्रभावी तरीका सही समय पर वैक्सीन देना है। आमतौर पर यह 12-14 दिनों की उम्र में दी जाती है। शेड की पूरी तरह से सफाई और कीटाणुशोधन अनिवार्य है क्योंकि यह वायरस वातावरण में लंबे समय तक जीवित रह सकता है। प्रभावित झुंड को विटामिन और इलेक्ट्रोलाइट्स देने से तनाव कम करने में मदद मिलती है। चूंकि यह एक वायरल बीमारी है, इसलिए एंटीबायोटिक्स इसे ठीक नहीं कर सकतीं। केवल टीकाकरण और साफ-सफाई ही इससे बचा सकते हैं।

इन्फेक्शियस ब्रोंकाइटिस: मुर्गियों में होने वाला एक अत्यधिक संक्रामक श्वसन रोग है, जो 'कोरोनावायरस' परिवार के एक वायरस के कारण होता है। यह विशेष रूप से श्वसन तंत्र, गुर्दों और प्रजनन तंत्र को प्रभावित करता है। मुर्गियों में छींकना, खांसी, खर्राटे और नाक से पानी बहना देखा जाता है। लेयर मुर्गियों में अंडों की संख्या अचानक कम हो जाती है। अंडों का छिलका पतला, खुरदरा या आकार में टेढ़ा-मेढ़ा हो सकता है, और अंडे की सफेदी पानी जैसी पतली हो जाती है।वायरस के कुछ स्ट्रेन गुर्दों को प्रभावित करते हैं, जिससे पक्षी बहुत अधिक पानी पीते हैं और गीला बीट करते हैं। छोटे चूजों में यह स्थायी रूप से प्रजनन क्षमता को नुकसान पहुँचा सकता है। यह वायरस हवा के जरिए, संक्रमित दानों, पानी और उपकरणों के माध्यम से बहुत तेजी से फैलता है। इस बीमारी से बचने का सबसे अच्छा तरीका टीकाकरण है। चूजों को शुरुआती दिनों में श्लाइव वैक्सीनश् (जैसे H-120 या Ma5 स्ट्रेन) दी जाती है। प्रभावित मुर्गियों के लिए शेड का तापमान 2-3 डिग्री बढ़ा देने से उन्हें सांस लेने में राहत मिलती है। चूंकि यह एक वायरल बीमारी है, इसलिए इसका कोई सीधा इलाज नहीं है। द्वितीयक जीवाणु संक्रमण को रोकने हेतु डॉक्टर की सलाह पर एंटीबायोटिक्स दी जा सकती हैं, लेकिन मुख्य बचाव वैक्सीन ही है।

एवियन इन्फ्लुएंजा, जिसे आमतौर पर 'बर्ड फ्लू' कहा जाता है, एक अत्यंत संक्रामक और घातक वायरल बीमारी है। यह मुख्य रूप से 'इन्फ्लुएंजा टाइप-1'वायरस के कारण होती है। कई बार बिना किसी लक्षण के पक्षी अचानक बड़ी संख्या में मरने लगते हैं। सिर, आंखों के आसपास और कलगी में भारी सूजन आ जाती है। कलगी और पैरों का रंग नीला या बैंगनी होने लगता है 'Cyanosis'। सांस लेने में तकलीफ, खांसी और नाक से खून मिला स्राव निकलना। अंडों का उत्पादन गिर जाता है और छिलके बहुत नरम हो जाते हैं। यह जंगली पक्षियों (खासकर प्रवासी पक्षियों) के माध्यम से फैलता है। संक्रमित पक्षी की बीट, लार और नाक के स्राव से दाना, पानी और उपकरण दूषित हो जाते हैं। बर्ड फ्लू के कुछ स्ट्रेन (जैसे H5N1 और H7N9) पक्षियों से इंसानों में भी फैल सकते हैं, जो जानलेवा साबित हो सकते हैं। इसलिए मृत पक्षियों को छूते समय विशेष सावधानी जरूरी है। संक्रमण की पुष्टि होने पर प्रभावित क्षेत्र के सभी पक्षियों को मार दिया जाता है और उन्हें गहरा दफनाया जाता है ताकि प्रसार रुक सके। फार्म में बाहरी लोगों और जंगली पक्षियों का प्रवेश पूरी तरह वर्जित रखें।असामान्य मृत्यु दिखने पर तुरंत नजदीकी सरकारी पशु चिकित्सालय को सूचित करें। बर्ड फ्लू के दौरान चिकन या अंडे को हमेशा पूरी तरह पकाकर (70°C से ऊपर) ही खाएं, जिससे वायरस नष्ट हो जाता है।

सामान्य सावधानियां: समान आयु समूहः अलग-अलग उम्र की मुर्गियों को एक साथ न रखें, क्योंकि वयस्क मुर्गियाँ छोटे चूजों में संक्रमण फैला सकती हैं।यदि कोई मुर्गी बीमार दिखे, तो उसे तुरंत झुंड से अलग कर दें और विशेषज्ञ से परामर्श लें।

निष्कर्ष: बैकयार्ड मुर्गी पालन में 'उपचार से बेहतर बचाव है' का सिद्धांत लागू होता है। संतुलित आहार, स्वच्छ पानी और समय पर टीकाकरण के माध्यम से किसान अपनी मुर्गियों को सुरक्षित रखकर अधिकतम लाभ कमा सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

मोरिंगा (सहजन) के फायदे और नुकसान

कविता वर्मा, मंजू शुक्ला
डॉ. स्मिता सिंह डॉ संजय सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र रीवा (म.प्र.)
डॉ. अखिलेश कुमार कृषि विज्ञान केन्द्र
सीधी (म.प्र.)

प्रस्तावना: सहजन, जिसे अंग्रेजी में 'ड्रमस्टिक' और ग्रामीण भारत में 'मुनगा' के नाम से जाना जाता है, आज 'सुपरफूड' के रूप में विश्व प्रसिद्ध हो चुका है। मध्य प्रदेश, अपनी विविधतापूर्ण जलवायु और उपजाऊ मिट्टी के कारण, सहजन की खेती के लिए भारत के सबसे उपयुक्त राज्यों में से एक है। पारंपरिक रूप से सहजन का उपयोग केवल घर के पिछवाड़े या खेतों की मेड़ पर एक पेड़ के रूप में किया जाता था, लेकिन आज यह एक नकदी फसल बन चुका है। इसकी फलियों के साथ-साथ इसकी पत्तियों, फूलों और बीजों की भी बाजार में भारी मांग है। मध्य प्रदेश के मालवा, निमाड़ और चंबल क्षेत्रों में इसकी खेती तेजी से लोकप्रिय हो रही है।

मध्य प्रदेश की जलवायु और मिट्टी

जलवायु: सहजन एक उष्णकटिबंधीय (Tropical) पौधा है। इसे बढ़ने हेतु गर्म और आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है।

तापमान: सहजन के लिए 25°C से 35°C का तापमान सर्वोत्तम माना जाता है। मध्य प्रदेश का तापमान गर्मियों में उच्च रहता है, जो इस फसल के लिए अनुकूल है। हालांकि, यह पौधा 48°C तक का तापमान सहन कर सकता है, लेकिन पाला (Frost) इसके लिए हानिकारक होता है।

वर्षा: यह कम पानी में उगने वाली फसल है, इसलिए मप्र के सूखा प्रभावित क्षेत्रों (जैसे बुंदेलखंड) हेतु यह वरदान है।

मिट्टी: मध्य प्रदेश में काली मिट्टी, दोमट मिट्टी और रेतीली मिट्टी पाई जाती है। सहजन की खेती लगभग सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है।

सर्वोत्तम मिट्टी: बलुई दोमट मिट्टी सबसे अच्छी मानी जाती है।

काली मिट्टी में सावधानी: मध्यप्रदेश के कई हिस्सों में गहरी काली मिट्टी है। चूँकि सहजन की जड़ें जलभराव सहन नहीं कर सकतीं, इसलिए काली मिट्टी वाले खेतों में जल निकासी की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। मिट्टी का pH मान 6.5 से 8.0 के बीच होना चाहिए

उन्नत किस्में : मध्य प्रदेश में व्यावसायिक खेती के लिए देसी किस्मों की जगह हाईब्रिड या उन्नत किस्मों का चयन करना चाहिए जो साल में दो बार फल देती हैं।

PKM-1: यह सबसे लोकप्रिय किस्म है। पौधा लगाने के 6-7 महीने बाद फल आना शुरू हो जाते हैं। फलियों की लंबाई 60-75 सेमी होती है और वे गूदेदार होती हैं। प्रति पेड़ उपज 200-300 फलियां सालाना।

PKM-2: यह किस्म PKM-1 का उन्नत रूप है। इसकी फलियां अधिक लंबी (120-130 सेमी) और मांसल होती हैं। इसके लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है, इसलिए सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।

ODC-3: यह निर्यात के लिए सबसे अच्छी किस्म मानी जाती है। इसकी फलियां मध्यम आकार की होती हैं और लंबे समय तक ताजी रहती हैं। यह किस्म मध्य प्रदेश की विषम परिस्थितियों को भी अच्छे से सहन कर लेती है।

रोहित-1 : इस किस्म की उपज क्षमता बहुत अधिक है और फलियों का स्वाद बहुत अच्छा होता है। बाजार में इसकी मांग लगातार बढ़ रही है।

खेत की तैयारी और बुवाई (Land Preparation and Sowing):- समय: मध्य प्रदेश में बुवाई के लिए दो समय सबसे उपयुक्त हैं-

1.जून-जुलाई: मानसून की शुरुआत में (वर्षा आधारित खेती के लिए)।

2.फरवरी-मार्च: सिंचित क्षेत्रों के लिए।

खेत की तैयारी: खेत की 2-3 बार गहरी जुताई करें और पाटा लगाकर समतल कर लें। जल निकासी का विशेष ध्यान रखें। यदि खेत में काली मिट्टी है, तो 'रिज और फरो' (Ridge and Furrow) विधि अपनाएं या मेड़ पर पौधे लगाएं।

गड्ढे तैयार करना: आकार: 45 × 45 × 45 सेंमी (1.5 फीट) के गड्ढे खोदें।

दूरी

सघन खेती (High Density): 2.5 × 2.5 मीटर (लगभग 640 पौधे प्रति एकड़)।

सामान्य खेती: 3×3 मी. (लगभग 440 पौधे प्रति एकड़)।

गड्ढों को धूप में सूखने दें, फिर उनमें 10 किलो सड़ी हुई गोबर की खाद, 50 ग्रा. नीम की खली और ट्राइकोडर्मा मिलाकर भरें।

बीज उपचार और बुवाई: बीजों को बोने से पहले 24 घंटे पानी में भिगोकर रखें। बीज को 'काबेंडाजिम' (2 ग्राम/किलो बीज) से उपचारित करें ताकि फंगस न लगे। हर गड्ढे में 1-2 बीज लगभग 2-3 सेमी गहराई पर बोएं।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : सहजन तेजी से बढ़ने वाला पेड़ है, इसलिए इसे पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।

बुवाई के समय: गड्ढे भरते समय 10-15 किलो गोबर की खाद और 100 ग्राम सुपर फॉस्फेट डालें। 3 महीने बादः प्रति पौधा 100 ग्राम यूरिया 50 ग्राम पोटाश। 6 महीने बादः जब फूल आने लगें, तो 100 ग्राम यूरिया प्रति पौधा दें।

जैविक उपाय: मध्यप्रदेश में जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। आप जीवामृत और वर्मीकम्पोस्ट का प्रयोग हर महीने कर सकते हैं, जिससे फलियों की गुणवत्ता और स्वाद बढ़ेगा।

सिंचाई प्रबंधन: सहजन सूखे के प्रति सहनशील है, लेकिन व्यावसायिक उत्पादन के लिए सिंचाई आवश्यक है। गर्मियों में हर 7-10 दिन में सिंचाई करें और सर्दियों में 15-20 दिन का अंतराल रखें। ड्रिप सिंचाई मप्र के लिए सबसे अच्छी विधि है, क्योंकि इससे 40-50% पानी की बचत होती है और उर्वरक भी सीधे जड़ों तक (फर्टिगेशन द्वारा) पहुँचाया जा सकता है।

कटाई-छंटाई: सहजन की खेती में 'प्रूनिंग' या कटाई सबसे महत्वपूर्ण तकनीक है। यदि पेड़ को बढ़ने दिया जाए तो वह बहुत लंबा हो जाएगा और फलियां तोड़ना मुश्किल होगा।

पहली कटाई: जब पौधा 3 फीट (लगभग 1 मीटर) का हो जाए, तो उसका ऊपरी सिरा (Top) काट दें। इससे साइड की शाखाएं निकलेंगी।

दूसरी कटाई: जब नई शाखाएं 2-3 फीट लंबी हो जाएं, तो उन्हें भी आधा काट दें। हर साल फसल लेने के बाद, बरसात से पहले पेड़ों की छंटाई (1 मीटर ऊंचाई से) करना जरूरी है।

अंतरवर्तीय फसलें : सहजन के पौधों के बीच काफी खाली जगह रहती है। शुरुआत के 4-5 महीनों में आप अंतरवर्तीय फसलें लेकर अतिरिक्त कमाई कर सकते हैं।

उपयुक्त फसलें: मूंग, उड़द, गेंदा, मिर्च, टमाटर, अदरक, या हल्दी।

सावधानी: धान या अधिक पानी वाली फसलें सहजन के साथ न लगाएं, क्योंकि इससे सहजन की जड़ें गल सकती हैं।

रोग एवं कीट नियंत्रण: सहजन में कीट और रोग कम लगते हैं, लेकिन सावधानी जरूरी है।

इल्ली : ये पत्तियों को खा जाती हैं।

उपचार: नीम तेल (5ml/लीटर पानी) का छिड़काव करें। गंभीर स्थिति में प्रोफेनोफोस का प्रयोग करें।

*** फल मक्खी :** यह फलियों में अंडे देती है जिससे फलियां सड़ जाती

उपचार: फेरोमोन ट्रैप लगाएं और खराब फलियों को नष्ट कर दें।

*** जड़ गलन :** जलभराव के कारण होता है।

उपचार: खेत से पानी निकालें और ट्राइकोडर्मा का प्रयोग करें।

तुड़ाई और उत्पादन : उन्नत किस्मों (जैसे PKM-1) में 6-7 महीने में पहली तुड़ाई शुरू हो जाती है। जब फलियां हरी, गूदेदार और वांछित आकार की हो जाएं, तब उन्हें तोड़ें। ज्यादा पकने पर वे रेशेदार और सख्त हो जाती हैं, जिससे बाजार भाव कम मिलता है।

उत्पादन: एक पूर्ण विकसित पेड़ (दूसरे वर्ष से) सालाना 200 से 400 फलियां दे सकता है। एक एकड़ से औसतन 25-30 टन उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

आर्थिक विश्लेषण (Economic Analysis): यह अनुमानित है और बाजार भाव पर निर्भर करता है

लागत (प्रति एकड़): लगभग 40,000-50,000 रुपये (पौधे, खाद, ड्रिप, मजदूरी)।

आय: यदि एक एकड़ में 25 टन उत्पादन हो और औसत भाव 15-20 रुपये प्रति किलो भी मिले, तो कुल आय 3.75 लाख से 5 लाख रुपये हो सकती है।

शुद्ध लाभ: पहले साल में ही 3 लाख रुपये तक का शुद्ध मुनाफा कमाया जा सकता है।

विपणन और भविष्य: मध्य प्रदेश में इंदौर, भोपाल, जबलपुर और ग्वालियर की मंडियों में सहजन की अच्छी मांग है। इसके अलावा मूल्य संवर्धन में सहजन की पत्तियों को सुखाकर पाउडर बनाया जा सकता है, जो 500-800 रुपये किलो तक बिकता है। तथा गुजरात और महाराष्ट्र के रास्ते खाड़ी देशों और यूरोप में इसका निर्यात किया जा सकता है। कई आयुर्वेदिक और न्यूट्रास्यूटिकल कंपनियां अब किसानों से सीधे पत्तियां और बीज खरीद रही हैं।

निष्कर्ष: मध्य प्रदेश के किसानों के लिए सहजन की खेती 'कम लागत और अधिक मुनाफे' का सौदा है। यह न केवल आर्थिक रूप से लाभदायक है, बल्कि पर्यावरण के लिए भी अच्छा है। सही किस्म का चुनाव, जल निकासी का प्रबंधन और समय पर छंटाई (Pruning) करके किसान इससे लाखों की कमाई कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

प्रेसिजन लाइवस्टॉक फार्मिंगः एक चेतावनी उपकरण प्रणाली

दानवीर सिंह यादव, एस. नानावटी
एम.एस. जामरा, डॉ श्वेता राजोरिया
रश्मि चौधरी
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

परिचय

प्रेसिजन लाइवस्टॉक फार्मिंग (PLF) पशुधन प्रबंधन के लिए इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का एक समूह है। इसमें पशुओं की स्वचालित निगरानी शामिल होती है ताकि उनके उत्पादन/प्रजनन, स्वास्थ्य, कल्याण तथा पर्यावरण पर प्रभाव को बेहतर बनाया जा सके। PLF बड़े पशुओं जैसे गायों को "प्रति पशु" आधार पर ट्रैक करता है, जबकि छोटे पशुओं जैसे पोल्ट्री को "प्रति झुंड" आधार पर ट्रैक किया जाता है, जिसमें पूरे झुंड को एक इकाई माना जाता है। "प्रति झुंड" प्रणाली का उपयोग विशेष रूप से ब्रॉयलर उद्योग में अधिक होता है। PLF तकनीकों में कैमरा, माइक्रोफोन और अन्य सेंसर शामिल होते हैं, साथ ही इनके साथ कंप्यूटर सॉफ्टवेयर भी उपयोग में आते हैं। एकत्रित डेटा मात्रात्मक या गुणात्मक हो सकता है और यह स्थिरता से भी संबंधित हो सकता है।

प्रेसिजन लाइवस्टॉक फार्मिंग की अवधारणा

डेयरी फार्म का प्रभावी प्रबंधन केवल झुंड प्रबंधन तक सीमित नहीं होता, बल्कि प्रत्येक पशु पर भी ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि "डेयरी का सबसे छोटा उत्पादन इकाई व्यक्तिगत पशु होता है।" इस संदर्भ में, प्रेसिजन डेयरी फार्मिंग (PDF) का उद्देश्य प्रत्येक पशु की अधिकतम उत्पादन क्षमता का उपयोग करना है। यह सूचना और तकनीक आधारित प्रबंधन प्रणाली है, जो पशुओं के शारीरिक, व्यवहारिक एवं उत्पादन संकेतकों को मापकर प्रबंधन रणनीतियों, लाभ और फार्म प्रदर्शन को सुधारती है। PLF तकनीकें विश्वभर में डेयरी फार्मों में अपनाई जा रही हैं, हालांकि विभिन्न डेयरी प्रणालियों में इनके उपयोग की दर अलग-अलग है। भारत में यह अभी प्रारंभिक अवस्था में है, लेकिन इसमें सुधार की अपार संभावनाएँ हैं।

इसके अपनाने में कई कारक प्रभाव डालते हैं जैसे-

* किसान की शिक्षा * फार्म का आकार * जोखिम की धारणा * अन्य व्यवसाय का स्वामित्व

इन तकनीकों को अपनाने के लिए समय, धन और विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। सही मार्गदर्शन और प्रशिक्षण के माध्यम से किसान इनका लाभ उठा सकते हैं।

पशु स्वास्थ्य, उत्पादकता एवं कल्याण में सेंसर प्रणाली का उपयोग- विश्वभर में डेयरी फार्मिंग का स्वरूप तेजी से बदल रहा है और बड़े व व्यावसायिक फार्मों की संख्या बढ़ रही है। इसके कारण ऐसी तकनीकों की मांग बढ़ी है जो लागत और श्रम को कम करते हुए उत्पादन बढ़ा सकें। सेंसर आधारित तकनीकें पशुओं के स्वास्थ्य की स्वचालित निगरानी करती हैं। ये कम लागत और बिना हस्तक्षेप वाली तकनीकें हैं, जो पशुओं के व्यवहार के आधार पर रोगों की पहचान कर सकती हैं।

यह प्रणाली

* रोगों की शीघ्र पहचान करती है * पशु स्वास्थ्य सुधारती है * उत्पादन बढ़ाती है * लागत कम करती है विभिन्न उद्योगों में उदाहरण

1. डेयरी उद्योग

* **रोबोटिक मिल्कर**

स्वचालित दुग्ध उत्पादन में रोबोटिक मिल्कर का उपयोग होता है। इसके लाभ हैं:

* समय की बचत * अधिक उत्पादन * डेटा रिकॉर्ड
* असामान्य दूध की पहचान
* **ऑटोमैटिक फीडर-** यह उपकरण निर्धारित समय पर पशुओं को भोजन देता है।
* **एक्टिविटी कॉलर-** ये पशुओं के व्यवहार और स्वास्थ्य से संबंधित डेटा एकत्र करते हैं।
* **इनलाइन मिल्क सेंसर-**ये दूध की गुणवत्ता और संरचना में बदलाव की पहचान करते हैं।

2. मांस उद्योग

* **RFID / EID टैग-** यह तकनीक पशुओं की पहचान हेतु उपयोग की जाती है और ट्रैकिंग में मदद करती है।
* **स्मार्ट ईयर टैग-** ये पशुओं के व्यवहार और स्वास्थ्य की निगरानी करते हैं और रोगों की जल्दी पहचान करते हैं।

3. स्वाइन (सूअर) उद्योग

* **ऑटोमैटेड वेट कैमरा**
बिना तराजू के वजन मापने में सक्षम।
* माइक्रोफोन द्वारा श्वसन रोग पहचान
खांसी की आवाज से रोगों का पता लगाया जाता है।

4. पोल्ट्री उद्योग

खराब वातावरणीय परिस्थितियों से पक्षियों में रोग बढ़ सकते हैं। इसलिए: * तापमान नियंत्रण आवश्यक है
* सेंसर द्वारा वातावरण की निगरानी की जाती है

प्रेसिजन लाइवस्टॉक फार्मिंग के लाभ

* पशु स्वास्थ्य एवं कल्याण में सुधार * उत्पादन में वृद्धि
* लागत में कमी * पर्यावरणीय प्रभाव में कमी * संसाधनों का बेहतर उपयोग * किसानों को सही समय पर जानकारी उपलब्ध

चुनौतियाँ एवं जोखिम

* उच्च लागत * तकनीकी विफलता का जोखिम * समूह आधारित निगरानी में व्यक्तिगत जरूरतों की अनदेखी * कुछ तकनीकों का पशु कल्याण पर प्रभाव

निष्कर्ष

प्रेसिजन लाइवस्टॉक फार्मिंग एक आधुनिक और उन्नत तकनीक है जो पशुपालन को अधिक कुशल और लाभकारी बनाती है। यह सेंसर, स्वचालन और डेटा विश्लेषण के माध्यम से पशुओं के स्वास्थ्य, व्यवहार और पर्यावरण की निगरानी करती है।

यह तकनीक

* उत्पादन बढ़ाती है * संसाधनों की बचत करती है * पशु कल्याण सुधारती है * पर्यावरण संरक्षण में सहायक है

भविष्य में PLF पशुपालन की प्रमुख तकनीक बन सकती है, विशेषकर तब जब इसे सही प्रशिक्षण और नीतिगत समर्थन के साथ अपनाया जाए।

08/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

रोग निदान के लिए नमूने एकत्रीकरण कैसे करें

डॉ दानवीर सिंह यादव, डॉ रश्मि चौधरी,
डॉ श्वेता राजोरिया, डॉ. मोहब्बत सिंह जामरा
सहायक प्राध्यापक, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू, नानाजी देशमुख वेटरनरी साइंस यूनिवर्सिटी जबलपुर (म.प्र.)

रोगी या मृत पशु किस रोग से अथवा कौन से संक्रामक रोग से ग्रसित है। इसका पता लगाने के लिये पशुचिकित्सक को इस बात का जानकारी होनी चाहिये कि उसको कौन सा पदार्थ अथवा नमूना एकत्र करना है और उसको किस प्रकार से रक्षण करके विशिष्ट प्रयोगशालाओं मे भेजना चाहिऐ। प्रयोगशाला में विभिन्न रोगों के विशेषज्ञ आधुनिक मशीनों द्वारा रोंगो का निदान करतें है तथा रोंगो की रोकथाम हेतु महत्वपूर्ण जानकारी देते हैं ।

नमूने एकत्र करने से पहले पशुचिकित्सक को निम्न जानकारी होनी चाहिए -

* पशु के निवास का पता ।
* पशु की प्रजाति, उम्र तथा लिंग ।
* पशु के रोग के लक्षण ।
* मृत्यु से पहले, इलाज के दौरान दी जाने वाली दवाईयों।
* बीमारी से ग्रसित होनें की अवधि।
* आस-पास इस रोग से पीड़ित जानवरों की संख्या ।
* पशु को खिलाये जा रहें आहार, आवास तथा आस - पास के वातावरण की विशेष जानकारी होनी चाहिये
* मृत्यु से पूर्व जानवर द्वारा दिखायें गयें लक्षण, आस-पास के कितने जानवरों में देखे जा रहें है/रहे थे ।

उपरोक्त जानकारी के आधार पर पशुचिकित्सक शव/रोगी पशु का परीक्षण करता है। अच्छे परिणाम पाने के लियें लक्षणों के आधार पर रोगी पशु से निम्न पदार्थ एकत्र करता है -

* रक्त * श्लेष्मा * दूध * पेशाब * गोबर * प्रभावित त्वचा * घासों तथा घाव इत्यादि से द्रव को जीवाणु/विषाणु रहित रूई में एकत्र करना । * जीवित उतक का 1-2 मि.मि. बारीक उतक या द्रव ।

मृत पशु से निम्न पदार्थ जो असामान्य होता है, उसको एकत्र करता है -

* प्रभावित ऊतक।
* आंतरिक अंगो में एकत्र होने वाला द्रव।
* पेशाब की थैली में एकत्र रक्त ।
* प्रभावित अंगो से स्पर्श आलेप पट्टी ।
* आंतरिक अंगो में पाये जाने वालें सिस्ट का द्रव्य।
* आंतरिक अंगो में पाये जाने वालें छाले, फोड़े से रिसने वाले द्रव को रूई की फुरैरी से एकत्र करके स्वच्छ जीवाणु/विषाणु रहित शीशी या परखनली में सील करके प्रयोगशाला में भेजना चाहिए।

मृत या रोगी पशु से एकत्र नमूनों को उपयुक्त संरक्षण में रखकर ठीक प्रकार से लेबल लगाना चाहियें और निम्न सूचनायें प्रेषित करनी चाहिए-

* पशुस्वामी का नाम, पता
* पशु की जाति, उम्र तथा लिंग
* रोग के लक्षण
* इलाज का विवरण
* बीमारी की अवधि
* रोग पीड़ित जानवरों की संख्या
* पशु को खिलाए जानें वाले आहार का विवरण
* मृत्युदर
* शव परीक्षण में पायें गये क्षतिग्रस्त अंगो, पदार्थ इत्यादि का विवरण
* रोग के लक्षण अथवा शव परीक्षण के आधार पर संदिग्ध रोग का अनुमान
* प्रेषित किये गये नमूनों के प्रकार तथा रक्षण की विधि
* परीक्षण का नाम (जो परीक्षण पशुचिकित्सक करवाना चाहता हो)
* पशु चिकित्सक का नाम, पता, मोबाइल नम्बर तथा ई-मेल
* पदार्थ को ऊचित चपड़े से सील करके प्रयोगशाला में प्रेषित करना चाहिए ।

प्रायः संक्रामक रोगों के निदान के लिये जीवाणुओं, विषाणुओं, सीरम विज्ञानी, ऊतक विकृति विज्ञान इत्यादि सें सम्बन्धित निम्न बातों को ध्यान में रखते हुये परीक्षणों के लियें नमूनें एकत्र किये जाते है।

(1) जीवाणु परीक्षणों के लियें नमूने

* जीवाणु परीक्षण हेतु रोगी एंव मृत पशु से नमुने एकत्र करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि आस - पास का वातावरण दूषित ना हो।
* रोगी पशु से जीवाणु परीक्षण हेतु स्वच्छ जीवाणु रहित छोटी शीशी में एन्टीकाग्यूलेन्ट सहित रक्त एकत्र करके रक्त की जॉच हेतु प्रयोगशाला में भेजा जाता है।
* जीवाणु को पहिचानने हेतु रक्त पट्टिका बनाई जाती है और उसे प्रयोगशाला में जॉच हेतु भेजी जाती है।
* कुछ जीवाणुओं की पहिचान गोबर से भी की जाती है अतः लगभग 20 ग्राम गोबर को जीवाणुरहित स्वच्छ पात्र में रखकर प्रयोगशाला में भेजा जाता है।
* कुछ रोगों में मुह, नाक, योनि से निकलने वाले श्लेष्म द्रवों को जीवाणु रहित छोटी शीशी में रखकर प्रयोगशाला में भेजा जाता है।
* समस्त जीवाणु परीक्षणों के नमूने उदाहरण रक्त, द्रव्य, गोबर इत्यादि को सील करके थर्मस फ्लास्क में बर्फ के टुकड़ों के साथ रखकर विशेष वाहकों द्वारा प्रयोगशाला में भेजना चाहिंये ।

(2) विषाणु परीक्षणों के लिये नमूने

* विषाणु परीक्षणों के लिये सीरम, रक्त, तथा मुंह, नाक योनि से स्त्रावित द्रव इत्यादि एकत्र किये जातें है।
* सीरम एकत्र करने के लिये रक्त को बिना एन्टीकाग्यूलेंट के चौड़ी परखनली में एकत्र करके (ध्यान रहे परखनली का मुंह, पिछले सिरे से थोड़ा सा ऊंचा रहे) 12 घंटे के लिये साफ सुथरी जगह लिटा कर रख दिया जाता है। जब रंग रहित द्रव्य परखनली में एकत्र हो जाता है तथा रक्त जम जाता है। तब द्रव्य को साफ जीवाणु रहित छोटी शीशी में एकत्र कर लिया जाता हे।
* मुंह, नाक तथा योनि से निकलने वाले द्रवों को भी स्वच्छ जीवाणु रहित शीशी में 50 प्रतिशत बफर युक्त ग्लिरीन सेलाइन में एकत्र किया जाता है।
* रक्त को एन्टीकाग्यूलट और 50 प्रतिशत ग्लिसरीन सैलाइन के साथ स्वच्छ जीवाणुरहित शीशी में रखना चाहिए।
* विषाणु रोगों के लिये नमूनां से एकत्र फुरैरी को टिशुकल्चर या पृथक्कीकरण करने हेतु जीवाणुनाशक औषधिया मिश्रित करके प्रयोगशाला में भेजा जाता है।

विषाणु परीक्षण हेतु नमूनों के पात्र को थर्मस, थर्मोकोल के डिब्बे में बर्फ से ढक्कर प्रयोगशाला में विशेष वाहको की सहायता से भेजा जाता है।

(3) इम्यूनोलाजिकल परीक्षण के लिये नमूने - इम्यूनोलाजिकल परीक्षण हेतु सीरम की आवश्यकता होती है। सीरम को दूषित होने से बचाने हेतु सीरम को सोडियम मरथायोलेट 1:10000 या कारबोलिक अम्ल 1:200 में प्रयोगशाला में भेजा जाता है। सीरम की शीशी को सील करके थर्मस या थर्माकाल के डिब्बे में बर्फ से ढक्कर प्रयोगशाला में भेजा जाता है।

(4) ऊतक विकृति विज्ञान परीक्षण के लिये नमूने- कई रोगों का निदान उतक विकृति विज्ञान द्वारा किया जाता है। उतक का परीक्षण ऑखों द्वारा तथा सूक्ष्मदर्शी द्वारा किया जाता है। ऊतक की संरचना तथा उसमें पाये गये बदलाव उदाहरणः रक्त स्त्राव, नेक्रोसिस, इनफारक्शन, रंग का बदलना, सिस्ट, फोड़ा इत्यादि दिखाई देना। सूक्ष्मदर्शी जाच हेतु प्रभावित ऊतक को करीब आधे से एक सेन्टीमीटर मोटाई में काटकर 10% फार्मेलिन में रखा जाता है। रोग का निदान सही हो उसके लिये ऊतक को 3-4 अलग-अलग जगह से काटकर 10% फार्मेलिन में रखा जाता है। फार्मेलिन ऊतक से 10% गुना ज्यादा होना चाहियें। ये सभी नमूने चैड़े मुंहवालीा बोतल में रखना चाहिये। साथ ही विभिन्न प्रभावित अंगो से स्पर्श आलेप पट्टी भी बनाई जाती है जिससे रोग के निदान में सहायता मिलती है।

रोग निदान के लिये प्रमुख पदार्थो को एकत्र करने की विधियां

(अ) रक्त आलेप बनाने की विधि- इस कार्य हेतु साफ काच की पट्टिकाए (स्लाइड) प्रयोग में लायी जाती है। इन पट्टिकाओं को रूई या स्वच्छ बारीक सूती कपड़े से पोछा जाता है जिससे उसमें किसी भी तरह की लगी हुई चिकनाई, द्रव्य, धूल तथा गंदगी दूर हो जावे। सूक्ष्मदर्शी के लिये रक्त के पतले, पारदर्शी आलेप बनाये जाते है। आलेप बनाने के लियें प्रायः एण्टीकाग्यूलेंट रहित रक्त का उपयोग करें तो ज्यादा अच्छा रहता है। उसके लिये पशु के कान की शिरा से रक्त की दो बूंद कांच पट्टिका के एक सिरे पर रखकर, दूसरी पट्टिका (पट्टिका का किनारा चिकना होना चाहिए) की धार को रक्त वाली पट्टिका पर रक्त की बूंद में रखकर उसे 45 डिग्री के कोण के साथ नीचे झुकाकर, पटिका को धीरे-धीरे आगे बढ़ाते हुये रक्त पट्टिका बनानी चाहिए ।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

परंपरागत खेती छोड़कर मल्टीलेयर फार्मिंग से सफलता की मिसाल बने रामसनेही शर्मा की प्रेरक कहानी

डॉ. द्वारका अतिथि शिक्षक, कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)

निशा चढ़ार एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़

मध्यप्रदेश के खरगोन जिले के ग्राम दहोद (भीकनगांव क्षेत्र) के निवासी किसान रामसनेही शर्मा ने यह साबित कर दिया कि यदि सोच नई हो और मेहनत सच्ची हो, तो कम जमीन में भी बड़ी सफलता हासिल की जा सकती है। जहाँ एक ओर अधिकांश किसान पारंपरिक खेती में बढ़ती लागत और घटते मुनाफे से परेशान हैं, वहीं रामसनेही शर्मा ने दो एकड़ जमीन पर मल्टीलेयर फार्मिंग अपनाकर सालाना लगभग 6 लाख रुपये की आमदनी का नया रास्ता खोल दिया।

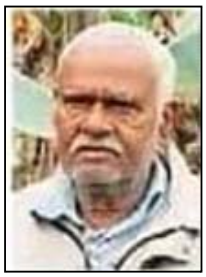

संघर्ष से शुरुआत

रामसनेही जी पहले पारंपरिक खेती करते थे। गेहूं, कपास और अन्य फसलों की खेती में लागत अधिक और लाभ कम हो रहा था। मौसम की मार, कीट प्रकोप और बाजार में उचित दाम न मिलने से वे चिंतित रहते थे। परिवार का खर्च निकालना भी मुश्किल हो जाता था। इसी दौरान उन्होंने कृषि विभाग के प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लिया। वहाँ उन्हें मल्टीलेयर फार्मिंग (बहुस्तरीय खेती) की जानकारी मिली। उन्होंने जोखिम उठाने का फैसला किया और अपनी खेती की दिशा बदलने का निश्चय किया।

मल्टीलेयर फार्मिंग क्या है?

मल्टीलेयर फार्मिंग ऐसी तकनीक है जिसमें एक ही खेत में अलग-अलग ऊँचाई और परतों में कई फसलें उगाई जाती हैं। इससे भूमि, पानी और धूप का अधिकतम उपयोग होता है। रामसनेही शर्मा ने अपने खेत में केला, पपीता, हल्दी, अदरक, सब्जियाँ और अन्य फसलें एक साथ लगाईं। ऊपरी परत में ऊँचे पौधे (जैसे केला), मध्य परत में मध्यम ऊँचाई की फसलें और निचली परत में जमीन से जुड़ी फसलें उगाई गईं। इस प्रणाली से साल भर उत्पादन मिलता है।

वैज्ञानिक सोच और मेहनत

उन्होंने ड्रिप इरिगेशन (टपक सिंचाई) प्रणाली अपनाई, जिससे पानी की बचत हुई और फसल की गुणवत्ता बेहतर बनी। जैविक खाद और संतुलित उर्वरकों का उपयोग कर मिट्टी की उर्वरता बनाए रखी। समय-समय पर कृषि वैज्ञानिकों से सलाह लेकर नई तकनीकों को अपनाया।

आज उनके खेत में लगभग 700 से अधिक केले के पौधे, साथ में अदरक, हल्दी और सब्जियाँ लहलहा रही हैं। इससे उन्हें अलग-अलग समय पर अलग-अलग फसलों से आय प्राप्त होती है।

आय में उल्लेखनीय वृद्धि

जहाँ पहले पारंपरिक खेती से सीमित आय होती थी, वहीं अब मल्टीलेयर फार्मिंग से उन्हें सालाना लगभग 6 लाख रुपये तक की आमदनी हो रही है। लागत कम और मुनाफा अधिक होने से उनका जीवन स्तर बेहतर हुआ है। बच्चों की शिक्षा, घर की सुविधाएँ और सामाजिक प्रतिष्ठाकृसबमें वृद्धि हुई है।

अन्य किसानों के लिए प्रेरणा

रामसनेही शर्मा अब आसपास के किसानों के लिए प्रेरणा बन चुके हैं। कई किसान उनके खेत का दौरा कर मल्टीलेयर फार्मिंग की जानकारी ले रहे हैं। कृषि विभाग भी उन्हें प्रगतिशील किसान के रूप में पहचान देता है।

उनका मानना है कि "अगर किसान नई तकनीक अपनाए और वैज्ञानिक तरीके से खेती करे, तो कम जमीन में भी अधिक लाभ कमा सकता है।"

निष्कर्ष

रामसनेही शर्मा की कहानी यह संदेश देती है कि बदलते समय में खेती के पारंपरिक तरीकों से आगे बढ़कर नवाचार अपनाना जरूरी है। सही मार्गदर्शन, प्रशिक्षण और मेहनत से किसान अपनी आय दोगुनी ही नहीं, कई गुना बढ़ा सकते हैं। यह सफलता सिर्फ एक किसान की नहीं, बल्कि आधुनिक कृषि की नई दिशा का प्रतीक है।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

'लसीका फाइलेरियासिस: परजीवी संक्रमण, निदान तकनीकें और नियंत्रण की समकालीन दिशा'

रीतिका चौरसिया (असिस्टेंट प्रोफेसर)
डिपार्टमेंट ऑफ वेटरनरी पैरासिटोलॉजी, कॉलेज ऑफ वेटरनरी साइंस एंड एनिमल हसबेंड्री

लसीका फाइलेरियासिस एक प्रमुख परजीवी जनित रोग है, जो विश्व के अनेक उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए चुनौती बना हुआ है। यह रोग विशेष रूप से उन स्थानों पर अधिक पाया जाता है जहाँ जल निकासी की समस्या, स्वच्छता की कमी तथा मच्छरों की अधिकता होती है। भारत में भी यह रोग कुछ क्षेत्रों में स्थानिक रूप से विद्यमान है, हालांकि राष्ट्रीय नियंत्रण कार्यक्रमों के कारण इसके प्रसार में धीरे-धीरे कमी देखी जा रही है।

यह रोग सूक्ष्म नेमाटोड परजीवियों के कारण उत्पन्न होता है, जिनमें वुचेरेरिया बैंक्रॉफ्टी, ब्रूजिया मलायी तथा ब्रूजिया टिमोरी प्रमुख हैं। इनमें वुचेरेरिया बैंक्रॉफ्टी सर्वाधिक सामान्य कारक माना जाता है। ये परजीवी मानव शरीर के लसीका तंत्र में स्थापित होकर उसके सामान्य कार्य को बाधित करते हैं। इसके परिणामस्वरूप लसीका द्रव का प्रवाह अवरुद्ध हो सकता है, जिससे अंगों में सूजन विकसित होती है, जो दीर्घकाल में एलिफेंटियासिस जैसी स्थिति का रूप ले सकती है।

फाइलेरियासिस का संचरण मच्छरों के माध्यम से होता है, जो इस रोग के वाहक के रूप में कार्य करते हैं। संक्रमित व्यक्ति के रक्त से माइक्रोफिलेरिया मच्छर के शरीर में प्रवेश करते हैं और वहाँ विकसित होकर संक्रामक अवस्था प्राप्त करते हैं। तत्पश्चात वही मच्छर किसी अन्य स्वस्थ व्यक्ति को काटते समय परजीवी को उसके शरीर में स्थानांतरित कर देता है। इस प्रकार यह रोग मानव और मच्छर के मध्य संचरण चक्र के माध्यम से फैलता है। भारत में क्यूलेक्स क्विन्क्वेफैसियाटस प्रमुख वाहक के रूप में जाना जाता है, जो प्रायः दूषित एवं स्थिर जल में पनपता है।

रोग के लक्षण प्रारंभिक चरण में स्पष्ट नहीं होते, जिससे समय पर पहचान चुनौतीपूर्ण हो जाती है। जैसे-जैसे संक्रमण बढ़ता है, प्रभावित अंगों में सूजन, भारीपन और असुविधा महसूस होने लगती है। पुरुषों में हाइड्रोसील एक सामान्य अभिव्यक्ति है। दीर्घकालिक संक्रमण के परिणामस्वरूप त्वचा मोटी और कठोर हो सकती है, जिससे व्यक्ति की दैनिक गतिविधियाँ तथा जीवन की गुणवत्ता प्रभावित होती है। यह रोग शारीरिक के साथ-साथ मानसिक और सामाजिक स्तर पर भी प्रभाव डालता है।

निदान के लिए विभिन्न पारंपरिक एवं आधुनिक तकनीकों का उपयोग किया जाता है। रक्त स्मीयर परीक्षण और माइक्रोस्कोपी पारंपरिक विधियाँ हैं, जिनसे माइक्रोफिलेरिया की पहचान की जाती है। इसके अतिरिक्त, एंटीजन आधारित परीक्षण तथा एलिसा जैसी तकनीकें भी उपयोगी हैं। आधुनिक आणविक तकनीकों, विशेषकर पीसीआर (पॉलीमरेज़ चेन रिएक्शन), के माध्यम से परजीवी के डीएनए की अत्यंत संवेदनशील पहचान संभव है। इसके साथ ही ज़ेनोमॉनिटरिंग जैसी विधियाँ मच्छरों के माध्यम से संक्रमण की निगरानी में सहायक सिद्ध हो रही हैं, जिससे व्यापक स्तर पर रोग की स्थिति का आकलन किया जा सकता है।

उपचार के लिए डाइएथाइलकार्बामाजीन, आइवरमेक्टिन तथा एल्बेंडाजोल जैसी औषधियों का उपयोग किया जाता है, जो माइक्रोफिलेरिया की संख्या को कम करने में सहायक होती हैं और संक्रमण के प्रसार को नियंत्रित करती हैं। कुछ परिस्थितियों में डॉक्सीसाइक्लिन का उपयोग भी किया जाता है। यह आवश्यक है कि इन दवाओं का सेवन केवल चिकित्सकीय परामर्श के अनुसार ही किया जाए, जिससे संभावित दुष्प्रभावों से बचा जा सके।

रोग नियंत्रण के लिए सामूहिक दवा वितरण कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण रणनीति है, जिसके अंतर्गत प्रभावित क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों को निःशुल्क दवाएँ प्रदान की जाती हैं। इसके साथ ही मच्छरों के प्रजनन स्थलों को समाप्त करना, स्वच्छता बनाए रखना तथा जल निकासी की उचित व्यवस्था सुनिश्चित करना भी अत्यंत आवश्यक है। जन-जागरूकता और सामुदायिक सहभागिता इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भविष्य की दृष्टि से, फाइलेरियासिस के प्रभावी नियंत्रण और संभावित उन्मूलन के लिए उन्नत अनुसंधान की आवश्यकता है। जीनोमिक तथा बायोमार्कर आधारित अध्ययन रोग की गहन समझ प्रदान कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त, नई औषधियों और संभावित वैक्सीन के विकास पर भी कार्य जारी है, जो इस रोग के दीर्घकालिक नियंत्रण में सहायक हो सकते हैं।

अतः, लसीका फाइलेरियासिस एक गंभीर किन्तु रोके जाने योग्य और नियंत्रित किया जा सकने वाला रोग है। उचित जागरूकता, समय पर निदान, प्रभावी उपचार तथा सामूहिक प्रयासों के माध्यम से इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है और इसके उन्मूलन की दिशा में सार्थक प्रगति की जा सकती है।

10/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

गर्मी की छुट्टी नहीं, खेत की सेहत का सुनहरा मौका–ग्रीष्मकालीन कृषि क्रियाएं

प्रकाश रेगर एम.एस.सी. (कृषि) शस्य विज्ञान, मंदसौर विश्वविद्यालय (म.प्र.)
अरुण एम.एस.सी. (कृषि) शस्य विज्ञान मंदसौर विश्वविद्यालय (म.प्र.)
डॉ. विपुल सिंह सहायक प्रोफेसर, मंदसौर विश्वविद्यालय (म.प्र.)

परिचय

गर्मी का मौसम खाली बैठने का नहीं, बल्कि खेत की मिट्टी को दोबारा ताकत देने का बेहतरीन मौका होता है। इस दौरान तापमान ज़्यादा होने से मिट्टी में जैविक प्रक्रियाएँ तेज़ी से होती हैं। अगर किसान भाई इस समय सही तरीकों को अपनाएं तो आने वाले सीज़न में अच्छी पैदावार के साथ-साथ केमिकल उर्वरकों का खर्च भी कम कर सकते हैं।

1. गहरी जुताई: मिट्टी की प्राकृतिक सफाई-पिछली फसल कटते ही खेत की गहरी जुताई कर देनी चाहिए। इसके लिए मोल्डबोर्ड या डिस्क हल सबसे अच्छा रहता है।

फायदे

* गर्मी में जब तापमान 40-45 डिग्री तक पहुँच जाता है, तो गहरी जुताई करने से धूप 6-8 इंच अंदर तक पहुँचती है और मिट्टी अपने आप साफ हो जाती है।
* मिट्टी में दबे हुए फफूँद, कीड़ों के अंडे और सूत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं।

सुझाव: मई-जून में कम से कम 2-3 बार जुताई ज़रूर करें। पहली गहरी, दूसरी हल्की और तीसरी बुवाई से पहले।

2. पराली प्रबंधन: कचरा नहीं, खाद है

धान की पराली जलाना मिट्टी के लिए बहुत नुकसानदायक है। इसे सही तरह से इस्तेमाल करें।

पराली जलाने के नुकसान:

* ऊपर की एक इंच मिट्टी के सारे फायदेमंद जीवाणु मर जाते हैं।
* एक एकड़ की पराली जलाने से करीब 12 किलो नाइट्रोजन, 2 किलो फास्फोरस और 25 किलो पोटाश नष्ट हो जाता है।
* मिट्टी की पानी सोखने की क्षमता 30:40 फीसदी घट जाती है।

सही तरीका:

* सुपर सीडर या मोल्डबोर्ड हल से पराली को खेत में मिला दें।
* 5 किलो यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें या गोबर का घोल डालें।
* 45-60 दिनों में पराली सड़कर अच्छी खाद बन जाती है।

3. हरी खाद: प्राकृतिक नाइट्रोजन का खज़ाना

गर्मी में हरी खाद वाली फसलें उगाना सबसे सस्ता और असरदार तरीका है।

कौन-सी फसलें लगाएँ:

ढैंचा : बुवाई मार्च:अप्रैल, खेत में मिलाने का समय 40-45 दिन बाद: 150-200 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़

सनई : बुवाई मार्च: अप्रैल, खेत में मिलाने का समय 50-55 दिन बाद : सूखा सहन करने की क्षमता

ग्वार : बुवाई अप्रैल:मई, खेत में मिलाने का समय 45-50 दिन बाद : कम पानी में भी अच्छी बढ़त

तरीका:

* 20:25 किलो बीज प्रति एकड़ डालें।
* जब 50 फीसदी फूल आ जाएँ, तब फसल को मिट्टी में मिला दें।
* हल्की सिंचाई करें और 15:20 दिन बाद मुख्य फसल बोएँ।

फायदा: इस तरीके से 200:250 किलो यूरिया के बराबर नाइट्रोजन मिल जाती है।

4. जैविक खाद तैयार करना

गर्मी में तापमान ज़्यादा होने से जैविक खाद जल्दी तैयार हो जाती है।

वर्मी कंपोस्ट:

* 10 फीट लंबा, 3 फीट चौड़ा और 2 फीट गहरा गड्ढा बनाएँ।
* गोबर और कचरे की परतें लगाकर 500-1000 केंचुए डालें।
* गर्मी में 45-60 दिनों में खाद तैयार हो जाती है।

नाडेप कंपोस्ट:

* 10 फीट लंबा, 6 फीट चौड़ा और 3 फीट ऊँचा ढांचा बनाएँ।
* गोबर, कचरा, पुआल और मिट्टी की परतें लगाते जाएँ।
* 3-4 महीने में खाद तैयार हो जाती है।

फायदे:

* 1 टन वर्मी कंपोस्ट में 2.5-3% नाइट्रोजन, 1.5-2% फास्फोरस और 1:1.5% पोटाश होता है।
* मिट्टी की पानी सोखने की क्षमता 20:30 फीसदी बढ़ जाती है।

5. मिट्टी की जाँच (मृदा परीक्षण)

गर्मी का समय मिट्टी की जाँच कराने के लिए सबसे सही होता है।

क्या जाँच कराएँ:

* मुख्य पोषक तत्व: नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश
* सूक्ष्म पोषक तत्व: जिंक, आयरन, मैंगनीज
* भौतिक गुण: pH मान, कार्बनिक कार्बन

तरीका:

* खेत के अलग-अलग कोनों से 6:8 इंच गहराई से मिट्टी के नमूने लें।
* पास के कृषि विज्ञान केंद्र या मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में जाँच कराएँ।

फायदा: 20-30 फीसदी उर्वरक की बचत और 10-15 फीसदी पैदावार बढ़ जाती है।

6. तालाब की सफाई

गर्मी में खेत के पास के तालाबों की गाद निकालकर खेतों में फैला दें।

फायदे:

* तालाब की गाद में 1-2% नाइट्रोजन, 0.5-1% फास्फोरस और 1-1.5% पोटाश होता है।
* केमिकल उर्वरक की ज़रूरत 25-30 फीसदी कम हो जाती है।
* तालाब गहरा होने से गर्मी में पानी सूखता नहीं है।

7. सोलराइजेशन (धूप से कीट नियंत्रण)

यह आधुनिक तरीका सूरज की गर्मी से मिट्टी को कीट-रोगमुक्त करता है।

तरीका: * खेत की जुताई करके सिंचाई करें।

* पारदर्शी पॉलीथिन से खेत को ढककर किनारों को मिट्टी से दबा दें।
* 4-6 हफ्तों के लिए ऐसे ही छोड़ दें।

असर:

* पॉलीथिन के अंदर मिट्टी का तापमान 50-60 डिग्री तक पहुँच जाता है।
* हानिकारक सूत्रकृमि, फफूँद, कीड़ों के अंडे और खरपतवार के बीज नष्ट हो जाते हैं।

कहाँ फायदेमंद: नर्सरी, सब्जियों, फूलों और मसालों की खेती के लिए यह तरीका बहुत फायदेमंद है।

8. खेत की मेड़ों और नालियों की मरम्मत- गर्मी का समय खेत की मेड़ों और पानी की नालियों को ठीक करने के लिए सबसे सही रहता है।

क्या करें: * टूटी-फूटी मेड़ों को ठीक करके मज़बूत बनाएँ। * सिंचाई वाली नालियों को साफ करके उनमें जमी गाद निकालें। * मेड़ों पर बबूल, सहजन जैसे उपयोगी पेड़ लगाएँ।

निष्कर्ष: गर्मी के महीनों में की गई ये छोटी-छोटी कोशिशें आने वाले पूरे साल की खेती को मज़बूत बनाती हैं। गहरी जुताई, पराली प्रबंधन, हरी खाद, जैविक खाद, मिट्टी की जाँच, तालाब की सफाई और सोलराइजेशन : ये सभी मिलकर मिट्टी को सेहतमंद और उपजाऊ बनाते हैं।

"स्वस्थ मिट्टी ही समृद्ध किसान की पहचान है।"

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

धान की फसल में प्रमुख कीट एवं रोग नियंत्रण: लक्षण, मात्रा एवं उपयोग

श्रीमती तामिन सहायक प्राध्यापक (पौध रोग विज्ञान)
डॉ. झरना चतुर्वेदानी अतिथि शिक्षक (कीट विज्ञान)
प्रेरणा जायसवाल अतिथि शिक्षक (सस्य विज्ञान)
रानी अवंती बाई लोधी कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, छुईखदान, जिला-खैरागढ-छुईखदान-गण्डई, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

कृषकों द्वारा मुख्यतः खरीफ में धान की खेती की जाती है तथा हमारा राज्य धान बाहुल्य है। वर्तमान में धान के फसलों पर कीट एवं रोग का प्रकोप समय के साथ-साथ बढता जा रहा है। जिसके रोकथाम के लिये कृषकों द्वारा जैविक कीट/रोग नाशक एवं रसायनिक दवाओं का उपयोग किया जाता है। प्रायः यह देखा जाता है कि धान में लगने वाले कीट एवं रोग के रोकथाम के लिये आवश्यकता से अधिक रसायनिक दवाईयों अथवा उर्वरकों का फसल पर छिड़काव किया जाता है। जिस कारण फसल में रसायनों के विपरित प्रभाव से लक्षण जैसे फसल का पीला-लाल होना एवं जल जाना, धान का वानस्पतिक वृद्धि का अधिक होना एवं बाली का न निकलना, गर्भधारण पौधों में बाली का बाहन न आना, जड़ की तरह रूपांतरण दिखना तथा गर्भावस्था के समय अत्यधिक रसायन का छिडकाव के कारण फूल का परागण न होना, जिससे बाली का खाली (Chaffy/ अविकसित/पोची/बदरा) रह जाना इत्यादि कृषकों के खेतों पर दिखाई देता है। उक्त कारणों से कृषकों के फसलों को नुकसान होने के साथ-साथ आर्थिक क्षति तथा पर्यावरण भी प्रदूषित होता है।

प्रमुख कीट और उनके लक्षण निम्नानुसार है:-

1.तना छेदक

वानस्पतिक अवस्था: मध्य शाखा सूखकर पीली पड़ जाती है (डेड हार्ट)।

बालियाँ निकलने पर: बालियाँ भुरभुरी, सफेद और खाली रह जाती हैं (सफेद बालियाँ)।

पहचान: तने के निचले हिस्से में लार्वा के छेद से नुकसान होता है, जिससे पुष्पगुच्छ सूख जाते हैं।

2.भूरा माहू

लक्षण: ये कीट पौधों का रस चूसते हैं।

पहचान: खेत में फसल जगह-जगह से पीली पड़कर सूखने लगती है, जिसे ''होपर बर्न'' (भ्वचचमत ठनतद) कहते हैं। यह अक्सर घेरों (चंजबीमे) में दिखाई देता है।

3.पत्ती लपेटक

लक्षण: इल्लियाँ पत्ती को लंबाई में मोड़कर उसके अंदर रहती हैं।

पहचान: पत्ती के हरे हिस्से को खुरचकर खाने से पत्तियों पर सफेद धारियां दिखाई देने लगती हैं, जिससे प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है।

4.गंधी बग

लक्षण: यह कीट दूधिया अवस्था (डपसाल जंहम) में दानों का रस चूसता है।

पहचान: दानों पर भूरे-काले धब्बे पड़ जाते हैं और बालियाँ खाली या बदरंग रह जाती हैं। खेत से एक अजीब सी दुर्गंध आती है।

5.गाल मिज

लक्षण: इसकी इल्ली तने के बढ़ते हुए हिस्से को नुकसान पहुँचाती है।

पहचान: मुख्य तने की जगह प्याज के पत्ते जैसी सफेद नली निकल आती है, जिससे उस पौधे में बाली नहीं बनती।

धान की फसल में होने वाले प्रमुख रोगों और उनके लक्षणों की सूची निम्नलिखित है:

1.धान का इसेंज (झोंका रोग)

लक्षण: पत्तियों पर आँख की आकृति के धब्बे बनते हैं, जो बीच में राख के रंग के और किनारों पर भूरे होते हैं।

पहचान: गर्दन तोड़ जब यह रोग बाली के नीचे की गाँठ पर हमला करता है, तो बाली काली होकर गिर जाती है और दाने नहीं भरते।

2. जीवाणु पत्ती झुलसा

लक्षण: पत्तियों के ऊपरी सिरे या किनारों से पीले-सफेद रंग की धारियां शुरू होकर नीचे की ओर बढ़ती हैं।

पहचान: सुबह के समय पत्तियों पर पीले या सुनहरे रंग की बैक्टीरिया की बूंदें (ऊज ड्रॉपलेट) दिखाई दे सकती हैं।

3. शीथ ब्लाइट

लक्षण: तने के पास वाली पत्ती की खोल (ैमंजी) पर अंडाकार, हरे-भूरे या भूरे-सफेद रंग के धब्बे पड़ते हैं।

पहचान: ये धब्बे पानी की सतह के ठीक ऊपर से शुरू होकर धीरे-धीरे ऊपर की ओर बढ़ते हैं और पूरी पत्ती को सुखा देते हैं।

4. मिथ्या कंडुआ/हल्दी रोग

लक्षण: बालियों के दानों पर पीले या नारंगी रंग के मखमली गोले बन जाते हैं

पहचान: बाद में ये गोले काले पड़ जाते हैं, जिससे चावल की गुणवत्ता खराब हो जाती है।

5. भूरा धब्बा रोग

लक्षण: पत्तियों पर छोटे, अंडाकार और गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं?

पहचान: यह रोग अक्सर कम उपजाऊ मिट्टी या पोषक तत्वों की कमी वाले खेतों में अधिक होता है।

6.लीफ ब्लास्ट (पत्ती का झोंका) * यह रोग वनस्पति वृद्धि चरण के दौरान पत्तियों पर दिखाई देता है।

आंख के आकार के धब्बे: पत्तियों पर छोटे, नीले-हरे धब्बे बनते हैं जो बाद में नाव या आंख के आकार में बदल जाते हैं।

धब्बों का रंग: धब्बों का केंद्र राख के रंग (सफेद-धूसर) का होता है और उनके किनारे गहरे भूरे या लाल-भूरे रंग के होते हैं।

गंभीर अवस्था: संक्रमण बढ़ने पर कई धब्बे आपस में मिल जाते हैं, जिससे पूरी पत्ती झुलसकर सूख जाती है।

7. नेक ब्लास्ट (गर्दन तोड़)-* यह ब्लास्ट रोग की सबसे विनाशकारी अवस्था है, जो बालियाँ निकलने के समय होती है।

गर्दन पर काले धब्बे: बाली के निचले हिस्से (जहाँ से बाली शुरू होती है) पर भूरे या काले रंग के धब्बे बन जाते हैं।

बाली का टूटना: संक्रमण के कारण बाली की गर्दन कमजोर होकर सड़ जाती है और बाली टूटकर लटक जाती है या गिर जाती है।

अतः कृषकों के आर्थिक नुकसान को कम करने एवं पर्यावरण के संतुलन के लिये धान की फसल पर लगने वाले प्रमुख कीट एवं रोग के नाम तथा उनकी रोकथाम हेतु विवरण निम्नानुसार है:-

रासायनिक प्रबंधन के मुख्य नियम एवं दिशा-निर्देश

ETL का ध्यान रखें: भूरा पौध फुदका (BPH) के लिए यदि कीटों की संख्या आर्थिक क्षति स्तर (ETL) से अधिक हो जाए, तभी कीटनाशक डालें।

छिड़काव का सही तरीका: BPH जैसे कीटों के लिए पानी को खेत से निकाल दें और स्प्रे नोजल को पौधों के आधार (Base) की ओर रखें।

दोहराव से बचें: एक ही कीटनाशक का बार-बार प्रयोग न करें, इससे कीटों में प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो सकती है।

सुरक्षा सावधानी: कीटनाशक छिड़कते समय हमेशा दस्ताने, मास्क और सुरक्षा चश्मा पहनें। हवा की दिशा के विपरीत छिड़काव न करें।

बीज उपचार: बुवाई से पहले बीजों को Carbendazim या Tricyclazole (2.0 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित अवश्य करें।

मिश्रण से बचें: एक से अधिक कीटनाशकों का ''कॉकटेल'' या टैंक मिश्रण बनाने से बचें जब तक कि वह पहले से तैयार न हो।

यूरिया का नियंत्रित प्रयोग: नाइट्रोजन (यूरिया) की अधिक मात्रा ब्लास्ट और BPH जैसे कीटों को बढ़ावा देती है, इसलिए यूरिया का प्रयोग किस्तों में करें।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।

पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)

01/205-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

हर्बल गुलाल

डॉ. निशा ठाकुर (सहायक प्राध्यापक) उ.म.एव अनु. के. अर्जुन्दा, बालोद (छ.ग.)
डॉ. पायल देवी चंद्राकर सहायक प्राध्यापक उ.म.एव अनु. के. अर्जुन्दा, बालोद (छ.ग.)
डॉ. निखिल परिहार अतिथि शिक्षक उ.म.एव अनु. के. अर्जुन्दा, बालोद (छ.ग.)

हर्बल गुलाल प्राकृतिक सामग्रियों जैसे फूलों और सब्जियों से बना एक सुरक्षित, पर्यावरण के अनुकूल रंग है, जो त्वचा और आंखों को रसायनों (केमिकल) से होने वाले नुकसान से बचाता है। यह मुख्य रूप से अरारोट या टेलकम पाउडर, हल्दी, चुकंदर, पालक, गेंदे और पलाश के फूलों से घर पर आसानी से बनाया जा सकता है।

हर्बल गुलाल के लाभ और विशेषताएं

* **त्वचा के लिए सुरक्षित:** इसमें हानिकारक केमिकल नहीं होते, जिससे एलर्जी या जलन नहीं होती।
* **पर्यावरण के अनुकूल:** यह बायोडिग्रेडेबल (जैव निम्नीकरणीय) होता है, जिससे पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं पहुँचता।
* **खुशबू:** इसमें रसायनों की तेज गंध के बजाय फूलों की प्राकृतिक सौम्य महक होती है।
* **आसान सफाई:** यह आसानी से पानी से धुल जाता है।

घर पर हर्बल गुलाल बनाने की विधि

पीला गुलाल (हल्दी): गेंदे के फूलों को पिस कर उसके रस को अलग कर लें तथा उसके रस में अरारोट पाउडर मिलाकर इसे तैयार किया जाता है, जो त्वचा के लिए फायदेमंद है।

हरा गुलाल (पालक): पालक को पिस कर उसके रस को अलग कर लें तथा उसके रस में अरारोट पाउडर मिलाकर इसे तैयार किया जाता है।

नारंगी गुलाल (पलाश): पलाश के फूलों को रात भर भिंगा कर उसे पीस ले तथा उसके पानी को अलग कर अरारोट के साथ मिलाएं।

गुलाबी गुलाल (चुकंदर): चुकंदर को कद्दूकस करके उसके रस को अलग कर लें, फिर इसमें अरारोट पाउडर मिलाकर इसे तैयार किया जाता है ।

असली हर्बल गुलाल की पहचान

* हर्बल गुलाल के रंग बहुत गहरे या चमकीले नहीं, बल्कि सौम्य होते हैं।
* यह सिंथेटिक गुलाल की तुलना में अधिक बारीक और मुलायम होता हैं।
* होली पर सुरक्षित और स्वस्थ अनुभव के लिए केमिकल युक्त रंगों के स्थान पर फूलों और सब्जियों से बने प्राकृतिक गुलाल का उपयोग करना सबसे अच्छा विकल्प हैं।

ग्राफ्टेड बैंगन की उन्नत खेती से अमृत बंजारे की आर्थिक स्थिति हुई सुदृढ़

रायपुर। श्रीमती बंजारे बताती है कि अब तक लगभग 80 टन बैंगन का उत्पादन कर चुकी है, जिससे उन्हें लगभग 9 लाख 60 हजार रुपये की आय प्राप्त हुई है। यह आय उनकी पूर्व की पारंपरिक खेती की तुलना में कहीं अधिक है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुदृढ़ता आई है। छत्तीसगढ़ के महासमुंद जिले के विकासखंड महासमुंद अंतर्गत ग्राम बम्बुरडीह की सफल कृषक श्रीमती अमृत बाई बंजारे, श्री शुद्धुराम बंजारे ने सीमित संसाधनों के बावजूद आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाकर उल्लेखनीय सफलता अर्जित की है। अमृत बंजारे बताती है कि उनकी शैक्षणिक योग्यता 5वीं कक्षा तक है। पूर्व में वे अपनी कुल 2.87 हेक्टेयर भूमि में परंपरागत रूप से धान की खेती किया करती थीं, जिसमें उत्पादन अपेक्षाकृत कम एवं लागत अधिक होने के कारण उन्हें पर्याप्त लाभ प्राप्त नहीं हो पाता था। वर्ष 2025-26 में उद्यानिकी विभाग के मार्गदर्शन में उन्होंने अपनी 1.45 हेक्टेयर सिंचित भूमि में ग्राफ्टेड बैंगन की उन्नत खेती प्रारंभ की। इस दौरान उन्होंने ड्रिप सिंचाई प्रणाली, मल्चिंग पेपर एवं अन्य आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग करते हुए वैज्ञानिक पद्धति से खेती की। इन तकनीकों के उपयोग से जहां जल की बचत हुई, वहीं फसल की गुणवत्ता एवं उत्पादन में भी वृद्धि हुई।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

स्वाद एवं विटामिन से भरपूर : आंवला मुखवास

डॉ. पायल देवी चंद्रकार (सहायक प्राध्यापक) उ.म.एव अनु, के. अर्जुन्दा, बालोद (छ.ग.)
डॉ. निशा ठाकुर सहायक प्राध्यापक उ.म.एव अनु, के. अर्जुन्दा, बालोद (छ.ग.)
डॉ. निखिल परिहार अतिथि शिक्षक उ.म.एव अनु, के. अर्जुन्दा, बालोद (छ.ग.)

आंवला मुखवास एक सेहतमंद, धूप में सुखाया हुआ पाचक है जो विटामिन सी से भरपूर होता है। यह उत्पाद महात्मा गांधी उद्यानिकी एवं वनिकी विश्वविद्यालय, दुर्ग के अंतर्गत उद्यानिकी महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, अर्जुन्दा, बालोद में बनाया गया था। इसे बनाने के लिए कद्दूकस किया हुआ आंवला, चुकंदर, अदरक का रस, भुने हुए मसाले (सौंफ, अजवाइन), काला नमक और पिसी हुई चीनी मिलाकर बनाया गया यह मिश्रण 3-4 दिनों तक सुखाया जाता है, जिससे एक चटपटा मुखवास तैयार होता है जो महीनों तक खराब नहीं होता।

आकृति- आंवला मुखवास

आवश्यक सामग्री

6-12 बड़े आंवले
1 बड़ा चुकंदर
2 छोटे चम्मच भुनी हुई सौंफ
1 छोटा चम्मच भुनी हुई अजवाइन
1 बड़ा चम्मच अदरक का रस
1 छोटा चम्मच काला नमक
2 बड़े चम्मच पिसी हुई मिश्री
वैकल्पिक: 5 इलायची

तैयारी विधि

तैयारी: आंवला और चुकंदर को धोकर सुखा लें और कद्दूकस कर लें तथा बीज निकाल दें।
मसाले: सौंफ और अजवाइन एवं अन्य मसाले को भूनकर दरदरा पीस लें।
मिलाना: एक बड़े बर्तन में कद्दूकस किया हुआ आंवला, चुकंदर, पिसे हुए मसाले, अदरक का रस, काला नमक और मिश्री मिलाएं।
सुखाना: मिश्रण को एक साफ ट्रे पर फैलाकर 3-4 दिनों तक सीधी धूप में सुखाएं, जब तक कि यह कुरकुरा और चिपचिपा न रह जाए।
भंडारण: सूखे मुखवास को एक वायुरोधी डिब्बे में रखें।

मुख्य सुझाव

उपयोग की अवधि: ठीक से सुखाने पर यह 6 महीने तक चल सकता है।
स्वच्छता: धूल से बचाने के लिए सुखाते समय इसे पतले मलमल के कपड़े से ढक दें।
विकल्प: नरम बनावट के लिए आप आंवले को कद्दूकस करने से पहले थोड़ी देर के लिए भाप में भी पका सकते हैं।

उत्पाद का महत्व

पान मसाला, तंबाकू और गुटाका का सेवन कई गुना बढ़ गया है, जबकि इनके मानव स्वास्थ्य के लिए खतरे के बारे में वैधानिक चेतावनी जारी की गई है, चूंकि निर्जलित आंवला गूदे में पर्याप्त मात्रा में विटामिन सी मौजूद होता है, इसलिए स्वास्थ्यवर्धक पोषक तत्वों से युक्त एक वैकल्पिक चबाने योग्य उत्पाद विकसित करने की आवश्यकता है। इसलिए, वर्तमान अध्ययन आंवला माउथ फ्रेशनर विकसित करने के लिए किया गया है, जो एक नया और नवोन्मेषी उत्पाद साबित हो सकता है, जो एक बेहतर विकल्प प्रदान कर सकता है।

खरीफ तैयारियों की समीक्षा खाद-बीज की कालाबाजारी पर सख्त कार्रवाई के निर्देश

रायपुर। राज्यपाल के सचिव एवं सहकारिता सचिव श्री सी.आर. प्रसन्ना खरीफ सीजन की तैयारियों, उर्वरक की निर्बाध आपूर्ति, बीज की उपलब्धता और बेमौसम बारिश से हुए नुकसान की समीक्षा की गई। कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा देने के लिए और किसानों को राहत और बीमा क्लेम का त्वरित रूप से दिलाने के निर्देश दिए गए। सूरजपुर जिले के प्रभारी सचिव श्री सी.आर. प्रसन्ना की अध्यक्षता में आज जिला संयुक्त कार्यालय के सभाकक्ष में कृषि विभाग की महत्वपूर्ण समीक्षा बैठक आयोजित की गई। बैठक में कलेक्टर श्री एस. जयवर्धन, संयुक्त कलेक्टर श्री पुष्पेन्द्र शर्मा, एस.डी.एम. श्री अजय मोड़ियम, उपसंचालक कृषि सुश्री सम्पदा पैकरा सहित कृषि विभाग से सम्बद्ध विभागों के अधिकारी उपस्थित रहे। प्रभारी सचिव श्री प्रसन्ना बैठक में पूर्व वर्षों में उर्वरकों की मांग और आपूर्ति की जानकारी संबंधित अधिकारियों से ली गई तथा वर्तमान खाद भंडारण की अद्यतन स्थिति की समीक्षा की गई। प्रभारी सचिव ने आगामी खरीफ सीजन 2026-27 के लिए जिले में गुणवत्तायुक्त खाद एवं बीज की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करने के निर्देश दिए। उन्होंने स्पष्ट किया कि रासायनिक उर्वरक का पर्याप्त भंडारण किया जाए और रैक पॉइंट से आवंटित खाद का जिले में समय पर भंडारण सुनिश्चित हो। प्रभारी सचिव ने अधिकारियों को निर्देशित किया कि समितियों में भंडारण व्यवस्था की नियमित समीक्षा की जाए। खाद एवं बीज निरीक्षकों द्वारा बीज व खाद दुकानों तथा समितियों का नियमित भौतिक निरीक्षण किया जाए, ताकि कालाबाजारी और जमाखोरी जैसी स्थिति पर पूर्णतः अंकुश लगाया जा सके।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

पशु कल्याण और 'वन हेल्थ' की ओर भारत की बढ़ती पहल

भूपिका देवांगन, भुवनेश्वरपाल सिंह कंवर
आशीष तिवारी, छत्रपाल सिंह पुहुप
पशु चिकित्सा विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय एवं पशुपालन,
दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय, अंजोरा, छत्तीसगढ़

भारत एक विशाल और विविधताओं से भरा देश है। यहां की जनसंख्या लगभग 1.46 अरब है और पशुधन की संख्या 53 करोड़ से भी अधिक है, जो दुनिया के कुल पशुधन का लगभग 20% है। ऐसे में भारत में इंसानों और पशुओं के बीच संबंध बहुत गहरा है चाहे वह गांवों की खेती हो या शहरों में पालतू जानवरों का बढ़ता चलन।

आज के दौर में यह साफ हो चुका है कि मनुष्य, पशु और पर्यावरण का स्वास्थ्य एक-दूसरे से गहराई से जुड़ा हुआ है। इसी सोच को ÷वन हेल्थ÷ कहा जाता है, जो एक समग्र दृष्टिकोण अपनाने की बात करता है।

पशु कल्याण: सिर्फ दया नहीं, जरूरत

पशु कल्याण का मतलब केवल पशुओं के प्रति संवेदनशील होना नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि उन्हें:

* पर्याप्त भोजन और पानी मिले
* सुरक्षित और स्वच्छ वातावरण मिले
* समय पर इलाज और देखभाल मिले
* डर, दर्द और तनाव से मुक्ति मिले

पशुओं के लिए "पांच स्वतंत्रताएं" इस दिशा में एक महत्वपूर्ण आधार हैं, जो उनके सम्मानजनक जीवन को सुनिश्चित करती हैं।

वन हेल्थ क्यों है आज की जरूरत?

आज दुनिया में फैल रही कई बीमारियां पशुओं से इंसानों में पहुंचती हैं, जिन्हें जूनोटिक रोग कहा जाता है। अनुमान है कि लगभग 60% मानव संक्रामक रोग पशुओं से आते हैं हर 4 महीने में एक नई जूनोटिक बीमारी उभर रही है भारत के 151 जिले ऐसे रोगों के लिए संवेदनशील हैं रेबीज, ब्रुसेलोसिस और लेप्टोस्पायरोसिस जैसी बीमारियां इसका उदाहरणहैं। इससे साफ है कि अगर पशु स्वस्थ नहीं होंगे, तो इंसान भी सुरक्षित नहीं रह सकता।

पशु कल्याण और मानव स्वास्थ्य का संबंध

पशु कल्याण का असर कई स्तरों पर पड़ता है:

* सार्वजनिक स्वास्थ्य अच्छी देखभाल से बीमारियों का फैलाव कम होता है।
* खाद्य सुरक्षा. स्वस्थ पशु बेहतर गुणवत्ता का दूध, मांस और अंडे देते हैं।

3.आर्थिक मजबूती

स्वस्थ पशु किसानों की आय बढ़ाते है और नुकसान कम करते हैं।

4.एंटीबायोटिक प्रतिरोध नियंत्रण

दवाओं के सही उपयोग से भविष्य की बड़ी स्वास्थ्य समस्याओं को रोका जा सकता है।

5.पर्यावरण संरक्षण

सही पशुपालन से प्रदूषण कम होता है और पर्यावरण संतुलित रहता है।

भारत में कानून और प्रयास

भारत में पशु संरक्षण के लिए कई महत्वपूर्ण कानून और संस्थाएं कार्यरत हैं:

* पशु क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960
* वन्य जीव संरक्षण अधिनियम, 1972
* एनिमल वेलफेयर बोर्ड ऑफ इंडिया
* राज्य और जिला स्तर की पशु संरक्षण समितियां

इसके अलावा, सरकार ने "वन हेल्थ" को बढ़ावा देने के लिए कई कदम उठाए हैं:

* नेशनल वन हेल्थ मिशन
* नागपुर में वन हेल्थ संस्थान की स्थापना
* पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम
* नवाचार और भारतीय समाधान

भारत अपनी परंपराओं और आधुनिक तकनीक को मिलाकर इस क्षेत्र में बड़ी भूमिका निभा सकता है:

* पारंपरिक ज्ञान का पुनर्जीवन.आयुर्वेद और देसी पशु चिकित्सा पद्धतियों को वैज्ञानिक आधार के साथ अपनाया जा सकता है।
* स्मार्ट तकनीक का उपयोग
* मोबाइल ऐप से पशु चिकित्सकों से जुड़ाव .।प् के माध्यम से रोग पहचान
* सामुदायिक भागीदारी गौशालाएं, पशु आश्रय स्थल और किसान समूह "वन हेल्थ" के जमीनी मॉडल बन सकते हैं।

आगे की दिशा

भारत को "वन हेल्थ" को मजबूत बनाने के लिए:

* नीतियों में पशु कल्याण को शामिल करना होगा
* गांवों में पशु चिकित्सा सुविधाएं बढ़ानी होंगी
* जागरूकता और प्रशिक्षण को बढ़ावा देना होगा
* अनुसंधान और तकनीकी नवाचार को समर्थन देना होगा
* विभिन्न विभागों के बीच बेहतर समन्वय बनाना होगा

निष्कर्ष

भारत के पास एक अनोखा अवसर है कि वह दुनिया को दिखा सके कि पशु कल्याण ही बेहतर स्वास्थ्य और विकास की नींव है। अगर हम पशुओं का ध्यान सही तरीके से रखें, तो बीमारियों का खतरा कम होगा किसानों की आर्थिक स्थिति सुधरेगी खाद्य सुरक्षा मजबूत होगी भविष्य की महामारियों से बचाव संभव होगा अब समय आ गया है कि हम पशु कल्याण को केवल सहानुभूति नहीं, बल्कि एक मजबूत राष्ट्रीय रणनीति के रूप् में अपनाएं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

गलघोटू (HS)

डॉ. कलेश्वरी कंवर, डॉ. डी.के जोल्हे
डॉ. आर.एफ. कुजुर, डॉ. आर.सी. घोष
डॉ. पी. सिंह, डॉ. नेहाभगत
डॉ. पावन सिदार, डॉ. दिव्या महिलाने
डॉ. योगेश नाग
(छत्तीसगढ़)

प्रास्तावना

ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हमारे पशु हैं, लेकिन एक सूक्ष्म जीवाणु रातों -रात इस खुशहाली को मातम में बदल सकता है। इस बीमारी का नाम है गलघोटू , जिसे वैज्ञानिक भाषा में Haemorrhagic Septicaemia (HS) कहा जाता है। यह बीमारी इतनी घातक है कि लक्षण दिखने के 24 से 48 घंटो के भीतर पशु दम तोड़ देता है।

1.क्या है गलघोटू

यह बीमारी मुख्य रूप से पास्चुरेला मल्टीसिडा (Pasteurella multocida) नामक बैक्टीरिया से फैलती है। यह ज्यादातर गाय और भैंसो को निशाना बनाती है, जिससे भैंसे इस बीमारी के प्रति अधिक संवेदनशील (Sensitive) होती हैं। अक्सर बरसात के मौसम में नमी और तापमान में बदलाव के कारण यह बैक्टीरिया सक्रिय हो जाता है।

2.बीमारी फैलने का तरीका

बैक्टीरिया खून में मिलकर Septicemia पैदा करता है। यह खून की नलियों को नुकसान पहुँचाता है, जिससे शरीर के अंगों में खून का रिसाव होने लगता है। गले के आसपास के ऊतकों में तरल पदार्थ जमा हो जाता है, जिससे पशु का दम घुटने लगता है।

3.प्रमुख लक्षण: कैसे पहचानें?

तेज बुखार: पशु का तापमान अचानक 105°F - 107°F तक पहुंच जाता

गले में सूजन: गले और जबड़े के निचले हिस्से में गर्म और दर्दनाक सूजन आ जाती है।

सांस लेने में तकलीफ: पशु जीभ बाहर निकालकर सांस लेता है और गले से ''घर-घुर'' की आवाज आती है (इसीलिए इसे गलघोटू कहते हैं।)

आंखों मे लाली: आंखे लाल हो जाती हैं और उनमें से पानी गिरने लगता है।

चारा बंद करना: पशु सुस्त होकर जुगाली करना बंद कर देता है।

आंतों का रूप: कभी-कभी पशु को खूनी

दस्त भी लग सकते हैं, हालांकि यह कम देखा जाता है।

4.यह कैसे फैलता है

अगर एक पशु बीमार है, तो उसके लार, नाक के स्त्राव या दूषित चारे और पानी के जरिए यह दूसरे स्वस्थ पशुओं में फैल जाती है। भीड़भाड़ वाली जगहों और मेलों से भी इसके फैलने का खतरा रहता है।

5.शव परीक्षण के संकेत

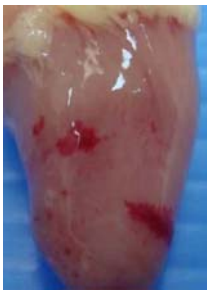

* गले के नीचे के ऊतकों में पीले रंग का जिलेटिन जैसा तरल जमा होना।
* फेफड़ों में सूजन और खून के धब्बे।
* दिल की बाहरी परत पर लाल बिंदु ।

6.बचाव ही सबसे बड़ा उपचार है।

चूंकि यह बीमारी बहुत तेजी से फैलती है, इसलिए इलाज से बेहतर टीकाकरण है-

* **टीकाकरण का सही समय:** मानसून शुरू होने से पहले (मई-जून) पशुओं को HS Vaccine लगवाना अनिवार्य है।
* **साफ-सफाई:** बीमार पशु को तुरंत अलग कर दें। बाड़े को फिनाइल या चूने से कीटाणुरहित करें।
* **मरे हुए पशु का निपटान:** यदि किसी पशु की मृत्यु हो जाए, तो उसे गहरा गड्ढा खोदकर चूने के साथ दबाएं, ताकि संक्रमण न फैले।

7.प्राथमिक उपचार

अगर लक्षण दिखें, तो बिना समय गंवाए नजदीकी पशु चिकित्सक से संपर्क करें। डॉक्टर आमतौर पर Antibiotics (जैसे Sulpha drugs या Oxytetracycline) और सूजन कम करने वाली दवाओं का उपयोग करते हैं।

खरीफ तैयारियों की समीक्षा खाद-बीज की कालाबाजारी पर सख्त कार्रवाई के निर्देश

रायपुर। राज्यपाल के सचिव एवं सहकारिता सचिव श्री सी.आर. प्रसन्ना खरीफ सीजन की तैयारियों, उर्वरक की निर्बाध आपूर्ति, बीज की उपलब्धता और बेमौसम बारिश से हुए नुकसान की समीक्षा की गई। कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा देने के लिए और किसानों को राहत और बीमा क्लेम का त्वरित रूप से दिलाने के निर्देश दिए गए। सूरजपुर जिले के प्रभारी सचिव श्री सी.आर. प्रसन्ना की अध्यक्षता में आज जिला संयुक्त कार्यालय के सभाकक्ष में कृषि विभाग की महत्वपूर्ण समीक्षा बैठक आयोजित की गई। बैठक में कलेक्टर श्री एस. जयवर्धन, संयुक्त कलेक्टर श्री पुष्पेन्द्र शर्मा, एस.डी.एम. श्री अजय मोड़ियम, उपसंचालक कृषि सुश्री सम्पदा पैकरा सहित कृषि विभाग से सम्बद्ध विभागों के अधिकारी उपस्थित रहे। उर्वरक भंडारण की समीक्षा और खरीफ तैयारी प्रभारी सचिव श्री प्रसन्ना बैठक में पूर्व वर्षों में उर्वरकों की मांग और आपूर्ति की जानकारी संबंधित अधिकारियों से ली गई तथा वर्तमान खाद भंडारण की अद्यतन स्थिति की समीक्षा की गई। प्रभारी सचिव ने आगामी खरीफ सीजन 2026-27 के लिए जिले में गुणवत्तायुक्त खाद एवं बीज की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करने के निर्देश दिए। उन्होंने स्पष्ट किया कि रासायनिक उर्वरक का पर्याप्त भंडारण किया जाए और रैक पॉइंट से आवंटित खाद का जिले में समय पर भंडारण सुनिश्चित हो।

कालाबाजारी और जमाखोरी पर कड़ा रुख

प्रभारी सचिव ने अधिकारियों को निर्देशित किया कि समितियों में भंडारण व्यवस्था की नियमित समीक्षा की जाए। खाद एवं बीज निरीक्षकों द्वारा बीज व खाद दुकानों तथा समितियों का नियमित भौतिक निरीक्षण किया जाए, ताकि कालाबाजारी और जमाखोरी जैसी स्थिति पर पूर्णतः अंकुश लगाया जा सके। उन्होंने कालाबाजारी, जमाखोरी एवं अफवाह फैलाने वालों के विरुद्ध कड़ी से कड़ी कार्रवाई करने के निर्देश दिए। साथ ही स्पष्ट किया कि खाद का वितरण नियमानुसार हो और केवल पात्र किसानों को ही खाद व बीज उपलब्ध कराया जाए, जिसके लिये उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से कार्ययोजना बनाने और क्रियान्वयन की बात कही।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

अजवाइन की उन्नत खेती और इसके चमत्कारी औषधीय गुण

डॉ. ज्योति साहू (अतिथि वैज्ञानिक, आनुवंशिकी एवं पादप -प्रजनन)
डॉ. सुष्मिता कश्यप (अतिथि वैज्ञानिक, कीट विज्ञान)
डॉ. सत्यनारायण सिंह (अतिथि वैज्ञानिक, सस्य -विज्ञान)
डॉ. ए. के. सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक, पौध-रोग विज्ञान)
डॉ.सन्दीप कुमार पैंकरा (वरिष्ठ वैज्ञानिक, सस्य -विज्ञान)
(छत्तीसगढ़)

अजवाइन (ट्रेकीस्पेरमम अमी) एपिएसी कुल का एक अत्यंत महत्वपूर्ण वार्षिक औषधीय और मसाला पौधा है। इसका उत्पत्ति स्थान मुख्य रूप से मिश्र, भारत और पूर्वी फारस को माना जाता है। अपने तीखे स्वाद और विशिष्ट सुगंध के कारण यह भारतीय रसोई का एक प्रमुख हिस्सा है। विश्व में भारत के अलावा इसकी खेती इरान, इजिप्ट, अफगानिस्तान और पाकिस्तान आदि देशों में होती है। कम पानी और कम लागत में तैयार होने वाली यह एक लाभदायक नकदी फसल है, जिसकी मांग वैश्विक स्तर पर हर्बल और आयुर्वेदिक औषधियों के रूप में लगातार बढ़ रही है।

अजवाइन के चमत्कारी औषधीय गुण: अजवाइन मात्र एक मसाला नहीं, बल्कि एक शक्तिशाली औषधि है। इसके बीजों में लगभग 5% तक आवश्यक तेल पाया जाता है जिसमें 'थाइमोल' (35-60%) की मात्रा प्रमुख होती है। **इसके मुख्य औषधीय लाभ निम्नलिखित हैं-**

पाचन तंत्र के लिए: यह पाचक, अग्निदीपक और कृमिनाशक है। आयुर्वेद में इसका उपयोग पेट दर्द, एसिडिटी, उल्टी, दस्त, अपच, और हैजा जैसी बीमारियों में सदियों से किया जा रहा है।

श्वसन और अन्य समस्याएँ: इसके चूर्ण को गर्म जल के साथ लेने से श्वास रोग और पुरानी खाँसी में लाभ मिलता है। चुटकी भर अजवाइन को लौंग व नमक के साथ चबाने से गले की खराश दूर होती है और इसे सूंघने से बंद नाक खुल जाती है।

आधुनिक औषधीय अनुसंधान: वैज्ञानिक शोधों से सिद्ध हुआ है कि अजवाइन का अर्क लीवर की 80% तक सुरक्षा करता है, दमा (अस्थमा) के रोगियों की श्वास नली को आराम पहुँचाता है, और खतरनाक बैक्टीरिया (जैसे ई. कोलाई) तथा फंगस को नष्ट करता है। इसके अर्क में 'मॉर्फिन' जैसी शक्तिशाली दर्द निवारक क्षमता भी होती है।

अन्य लाभ: अजवाइन का सत पिपरमेन्ट और कपूर के साथ मिलाकर 'अमृतधारा' बनाई जाती है जो हैजा, उदरशूल और दंत शूल में बहुत लाभकारी है।

जलवायु और उपयुक्त मिट्टी: अजवाइन मुख्य रूप से रबी के मौसम (ठंडी जलवायु) की फसल है, लेकिन देश के कुछ हिस्सों में इसे खरीफ में भी उगाया जाता है। इसकी सफल खेती के लिए 15 से 27 डिग्री सेल्सियस तापमान और 60 से 70 प्रतिशत अपेक्षित आर्द्रता अनुकूल होती है। वैसे तो इसकी खेती सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है, लेकिन जीवांश युक्त भुरभुरी चिकनी दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम है। मिट्टी का पीएच मान 6.5 से 7.5 होना चाहिए। छत्तीसगढ़ राज्य की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार डोरसा, मटासी और कन्हार मिट्टी इसके लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

उन्नत किस्में और फसल चक्र : अजवाइन की मुख्य उन्नत किस्मों में अजमेर अजवाइन-1, अजमेर अजवाइन-2, लाम सलेक्सन-1 और लाम सलेक्सन-2 शामिल हैं।

विशेष अनुशंसित किस्म (छत्तीसगढ़ अजवाइन-1): इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित छत्तीसगढ़ अजवाइन-1 एक बेहतरीन किस्म है। यह 145 दिन में पककर तैयार हो जाती है, इसमें 7% वाष्पशील तेल होता है और यह अन्य किस्मों की तुलना में 28% अधिक उपज (8-10 क्विंटल/हेक्टेयर) देती है।

फसल चक्र: खेत की उर्वरता बनाए रखने के लिए उर्द-अजवाइन, लोबिया-अजवाइन या मक्का-अजवाइन फसल चक्र अपनाना चाहिए।

खेत की तैयारी और बुवाई की तकनीक

खेत की तैयारी: मिट्टी को भुरभुरा बनाने के लिए मोल्ड बोर्ड प्लाऊ से एक गहरी जुताई करें, फिर कल्टीवेटर से 2-3 बार जुताई कर पाटा लगा दें।

बुवाई का समय: सितम्बर के आखिरी सप्ताह से लेकर नवम्बर के पहले सप्ताह तक का समय बुवाई के लिए सबसे उपयुक्त है।

बीज दर और बुवाई: सिंचित क्षेत्रों में 2.5 से 4 किलोग्राम और असिंचित क्षेत्रों में 4 से 5 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर लगता है। बीज को 1 से 1.5 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। कतार से कतार की दूरी 20 से 45 सेमी और पौधे से पौधे की दूरी 10 से 30 सेमी (भूमि और किस्म के अनुसार) रखनी चाहिए।

बीज उपचार: बुवाई से पहले बीजों को 3 ग्राम थिरम या कार्बेन्डाजिम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। एजोस्पाइरिलम एवं एजोटोबैक्टर के उपयोग से भी अच्छे परिणाम मिलते हैं।

खाद, उर्वरक और सिंचाई प्रबंधन

खाद एवं उर्वरक: खेत तैयार करते समय 10-12 टन सड़ी हुई गोबर खाद मिट्टी में मिला दें। इसके साथ ही 40 किलो नत्रजन, 20-50 किलो स्फुर और 20-50 किलो पोटाश (मृदा परीक्षण के आधार पर) प्रति हेक्टेयर डालें। बुवाई के 45 दिन बाद और फूल आते समय नत्रजन की अतिरिक्त मात्रा दें।

सिंचाई: नमी की कमी होने पर बुवाई के तुरंत बाद एक हल्की सिंचाई करें। कुल मिलाकर फसल को भूमि और मौसम के अनुसार 15 से 25 दिनों के अंतराल पर 5 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

खरपतवार, रोग एवं कीट नियंत्रण

खरपतवार नियंत्रण: बुवाई के तुरंत बाद (3 दिनों के भीतर) पेंडीमेथालिन 1 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। फसल बोने के 25 से 45 दिनों के बीच और आवश्यकता पड़ने पर 70 दिन बाद हाथों से निराई-गुड़ाई करें।

प्रमुख रोग और बचाव:

जड़ सड़न: प्रभावित पौधों के पास कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम/लीटर पानी) का घोल डालें या खेत में बुवाई के समय ट्राइकोडर्मा (1 किग्रा/2 क्विंटल गोबर खाद) मिलाएँ।

स्क्लेरोशियम स्टेमराट: कार्बेन्डाजिम (3 ग्राम/किलो बीज) से उपचार करें या बुवाई के समय ट्राइकोडर्मा (1 किग्रा/2-2.5 क्विंटल गोबर खाद) का उपयोग करें।

भभूतिया रोग: इसके नियंत्रण के लिए 0.2% घुलनशील गंधक या 0.1% कार्बेन्डाजिम का छिड़काव करें।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन: अजवाइन की फसल में मुख्य रूप से निम्नलिखित कीटों का प्रकोप देखा जाता है

1.माहू

लक्षण: माहू अजवाइन की फसल को नुकसान पहुँचाने वाला एक प्रमुख कीट है। यह कीट पौधे के ऊपरी और कोमल हिस्सों पर भारी संख्या में जमा होकर रस चूसता है। इसके अधिक प्रकोप के कारण पौधे मुरझाने लगते हैं और हल्के पीले पड़ जाते हैं। माहू अपने शरीर से एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ छोड़ता है, जिसके कारण तने और निचली पत्तियों पर काली फफूंद लग जाती है।

नियंत्रण: इसके प्रबंधन के लिए दो बार प्रणालीगत रासायनिक कीटनाशकों या वानस्पतिक कीटनाशकों का छिड़काव करने की सलाह दी जाती है। सबसे प्रभावी और सुरक्षित तरीका माहू के प्रति सहनशील किस्मों की बुवाई करना है, जैसे 'लाम सलेक्शन-1' और 'अजमेर अजवाइन-2' जिन पर इसका प्रकोप सबसे कम होता है। रासायनिक नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 स्रु या डाइमेथोएट 30 EC का छिड़काव किया जा सकता है। जैविक विकल्प के रूप में 5% नीम बीज अर्क का उपयोग बहुत फायदेमंद होता है।

2.तना मक्खी

लक्षण: इस मक्खी की सूंडियां पौधे के तने में छेद करके अंदर ही अंदर खाती हैं। इस आंतरिक नुकसान के कारण पत्तियां पीली पड़कर सूखने और लटकने लगती हैं, और अंततः एक या दो सप्ताह के भीतर पूरा पौधा मर जाता है।

नियंत्रण: इसकी रोकथाम के लिए बुवाई के समय मिट्टी में कार्बोफ्यूरान 3% जैसे दानेदार कीटनाशक का प्रयोग प्रभावी माना जाता है। खड़ी फसल में संक्रमण दिखने पर थियामेथोक्साम का छिड़काव किया जा सकता है।

3.पत्तियां खाने वाले कीट

लक्षण: इनमें मुख्य रूप से दो कीट आते हैं:

सेमी लूपर: यह कीट पौधे पर चलते हुए पत्तियों को पूरी तरह से चट कर जाता है।

पत्ती लपेटक / लीफ वेबर: इस कीट की इल्लियां पत्तियों और फूलों को अपने जाले में लपेट लेती हैं, जिससे जाले में फंसी शाखाएं और प्ररोह पीले होकर अंततः सूख जाते हैं।

नियंत्रण: शुरुआती अवस्था में जालों और इल्लियों को हाथ से तोड़कर खेत से दूर नष्ट कर देना चाहिए। प्रकोप अधिक होने पर इमामेक्टिन बेंजोएट 5 SG जैसे कीटनाशक का छिड़काव किया जा सकता है।

4.दीमक

लक्षण: दीमक मिट्टी के अंदर से अजवाइन की जड़ों को भारी नुकसान पहुँचाती है।

नियंत्रण: दीमक प्रभावित भूमियों में बचाव के लिए खेत की अंतिम जुताई के समय मिट्टी में क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत या क्लोरपायरीफॉस 3 प्रतिशत चूर्ण मिला देना चाहिए।

5. अन्य कीट (रस चूसने वाले एवं इल्लियां)

लक्षण: इसके अलावा अजवाइन में कभी-कभी जैसिड्स, सीड बग, मिज, माइट्स, तंबाकू की सुंडी और चने की सुंडी का छिटपुट प्रकोप भी देखा जाता है।

नियंत्रण (बाहरी जानकारी): रस चूसने वाले कीटों (जैसे जैसिड) के रासायनिक नियंत्रण के लिए माहू की तरह ही इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL या डाइमेथोएट 30 EC का छिड़काव किया जा सकता है। जैविक विकल्प के रूप में 5% नीम बीज अर्क का उपयोग बहुत फायदेमंद होता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि में स्टार्टअप और युवा उद्यमिता

✍रोहित कुमार, अभिषेक सिंह सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ.प्र.)

✍डॉ. ललित कुमार सनोदिया

✍डॉ. अखिलेश कुमार सिंह

✍डॉ. अवनीश यादव सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ आज भी बड़ी जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर है। परंपरागत खेती के तरीकों से अब सीमित आय प्राप्त हो रही है, जिससे युवाओं का कृषि के प्रति आकर्षण कम होता जा रहा है। ऐसे समय में कृषि स्टार्टअप और युवा उद्यमिता एक नई उम्मीद के रूप में उभर रहे हैं। आधुनिक तकनीक, नवाचार और व्यवसायिक सोच के माध्यम से कृषि को लाभकारी और आकर्षक बनाया जा सकता है।

* कृषि में तकनीकी विकास
* ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाना

युवा उद्यमिता की भूमिका

आज का युवा शिक्षित, तकनीकी रूप से सक्षम और नवाचार के प्रति उत्साही है। यदि उसे सही मार्गदर्शन और संसाधन मिलें, तो वह कृषि क्षेत्र में क्रांति ला सकता है।

युवाओं की प्रमुख भूमिकाएं

* नई तकनीकों जैसे ड्रोन, ढ्ढश्चञ्ज,ढ्ढ का उपयोग
* ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से उत्पाद की बिक्री
* जैविक खेती और मूल्य संवर्धन
* एग्री-बिजनेस मॉडल विकसित करना

कृषि स्टार्टअप के प्रमुख क्षेत्र

1.प्रिसिजन फार्मिंग (Precision Farming)

सेंसर, ड्रोन और डेटा एनालिटिक्स का उपयोग कर खेती को अधिक सटीक और लाभकारी बनाना।

2.एग्री-टेक प्लेटफॉर्म

मोबाइल ऐप और वेबसाइट के माध्यम से किसानों को बाजार, मौसम, और तकनीकी जानकारी देना।

3.जैविक खेती और प्राकृतिक खेती

रसायनों के बिना खेती कर उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद तैयार करना।

4.फूड प्रोसेसिंग और वैल्यू एडिशन

कच्चे उत्पाद को प्रोसेस कर अधिक मूल्य प्राप्त करना (जैसे टमाटर से सॉस बनाना)।

5.सप्लाई चेन और लॉजिस्टिक्स

किसानों से सीधे उपभोक्ता तक उत्पाद पहुँचाने की व्यवस्था।

सरकारी योजनाएँ और समर्थन

सरकार भी कृषि स्टार्टअप को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएँ चला रही है-

* स्टार्टअप इंडिया योजना
* प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY)
* राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY-RAFTAAR)
* मुद्रा लोन योजना

इन योजनाओं के माध्यम से वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण और तकनीकी समर्थन दिया जाता है।

कृषि स्टार्टअप के लाभ

* **आय में वृद्धि:** आधुनिक तकनीक से उत्पादन और लाभ दोनों बढ़ते हैं।
* **रोजगार सृजन:** ग्रामीण क्षेत्रों में नए रोजगार के अवसर बनते हैं।
* **तकनीकी विकास:** कृषि में नवाचार और आधुनिकता आती है।
* **स्थायी कृषि** (Sustainable Agriculture): पर्यावरण के अनुकूल खेती को बढ़ावा मिलता है।

चुनौतियाँ

* प्रारंभिक निवेश की कमी
* तकनीकी जानकारी का अभाव
* बाजार तक पहुँच में कठिनाई
* जोखिम और अनिश्चितता

समाधान और सुझाव

* युवाओं को कृषि शिक्षा और प्रशिक्षण देना
* सरकारी योजनाओं की जानकारी बढ़ाना
* डिजिटल प्लेटफॉर्म का अधिक उपयोग
* किसानों और स्टार्टअप के बीच सहयोग बढ़ाना

निष्कर्ष

कृषि में स्टार्टअप और युवा उद्यमिता भारत के भविष्य की कुंजी है। यह न केवल किसानों की आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को भी मजबूत बनाता है। यदि युवा अपनी ऊर्जा, ज्ञान और नवाचार को कृषि में लगाएँ, तो भारत को एक विकसित और आत्मनिर्भर राष्ट्र बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

मशरूम उत्पादन, महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता का मार्ग

प्रतिभा चौधरी, नीलम (स्नातकोत्तर छात्रा)
पशुधन उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग सैम हिंगीबॉटम कृषि प्रौद्योगिकी और विज्ञान विश्वविद्यालय इलाहाबाद (उ.प्र.)

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहां ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ महिलाएं हैं, वहाँ मशरूम उत्पादन केवल एक खेती नहीं बल्कि एक मौन क्रांति बनकर उभरा है। पारंपरिक खेती के विपरीत, मशरूम की खेती के लिए न तो विशाल उपजाऊ भूमि की आवश्यकता है और न ही भारी शारीरिक श्रम की। यही कारण है कि यह व्यवसाय आज महिलाओं के लिए 'घर से उद्यमिता' का सबसे सशक्त माध्यम बन गया है। राजस्थान के तपते धोरों से लेकर बिहार के सुदूर गांवों तक, महिलाएं अपनी रसोई और खाली कमरों को सफेद सोने की खान में बदल रही हैं। मशरूम की बढ़ती वैश्विक मांग और इसके चमत्कारी औषधीय गुणों ने इसे एक मुनाफे वाला सौदा बना दिया है। जब एक महिला मशरूम की थैली में बीज डालती है तो वह केवल एक फसल नहीं उगाती, बल्कि अपने परिवार के लिए बेहतर शिक्षा, बेहतर स्वास्थ्य और स्वयं हेतु आर्थिक स्वतंत्रता के बीज बोती है।

राजस्थान की जलवायु और मशरूम का तालमेल: राजस्थान जैसे शुष्क राज्य में, जहाँ पानी की कमी एक बड़ी चुनौती है, मशरूम उत्पादन एक वरदान साबित हो रहा है। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित कम पानी का उपभोग पारंपरिक फसलों की तुलना में इसमें मात्र 10-15% पानी की आवश्यकता होती है।

इनडोर फार्मिंग: चूंकि यह बंद कमरों में उगाया जाता है, इसलिए बाहर की लू और गर्मी से फसल को बचाना आसान होता है।देसी जुगाड़ राजस्थान की ग्रामीण महिलाएं झोपड़ियों और गीली बोरियों के माध्यम से प्राकृतिक कूलिंग का उपयोग कर कम लागत में बटन और ओयस्टर मशरूम उगा रही हैं।

राजस्थान की मशरूम स्टार: सफलता की कहानी राजस्थान में अनीता जैन (कोटा) और प्रगतिशील महिला किसान संतोष पचार (सीकर) जैसे नाम आज मशरूम के क्षेत्र में प्रेरणा बन चुके हैं।अनीता जैन ने न केवल मशरूम उगाना शुरू किया, बल्कि इसकी वैल्यू चेनल को समझा। उन्होंने मशरूम के पापड़, अचार और पाउडर बनाकर स्थानीय बाजारों और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर बेचना शुरू किया।उन्होंने स्वयं सहायता समूहो के माध्यम से हजारों महिलाओं को प्रशिक्षण दिया, जिससे आज वे महिलाएं प्रति माह रु. 15,000 से रु. 25,000 तक घर बैठे कमा रही हैं।

आर्थिक लाभ का गणित (एक छोटा मॉडल): एक मध्यम वर्गीय परिवार की महिला अगर 10×10 के कमरे से शुरुआत करती विवरण निवेश (अनुमानित)आय (अनुमानित)ओयस्टर मशरूम रु. 5,000 (बीज भूसा) रु. 15,000-20,000 बटन मशरूम रु. 15,000 (कम्पोस्ट केसिंग) रु. 40,000- 50,000 प्रो टिप मशरूम की खेती में वेस्ट टू वेल्थ (कचरे से कंचन) का सिद्धांत काम करता है, क्योंकि यह गेहूं और धान के भूसे पर उगाया जाता है जो आसानी से उपलब्ध है। सरकारी सहायता और प्रशिक्षण राजस्थान सरकार और केन्द्र सरकार की विभिन्न योजनाएं महिलाओं को प्रोत्साहित कर रही राष्ट्रीय बागवानी मिशनरू मशरूम यूनिट लगाने हेतु 40% से 50% तक की सब्सिडी। (कृषि विज्ञान केन्द्र) राजस्थान के लगभग हर जिले में स्थित कृषि विज्ञान केंद्र महिलाओं को मुफ्त या बहुत कम शुल्क पर 5 से 7 दिनों का प्रशिक्षण प्रदान करते हैं।

ढिंगरी मशरूम (ऑयस्टर मशरूम) की उत्पादन तकनीकी: वैसे तो मशरूम का उत्पादन वर्ष भर किया जा सकता है, लेकिन राजस्थान की जलवायु को मद्देनजर रखते हुए इसका उत्पादन सर्दियों के दिनों में करना उपयुक्त है तथा राजस्थान के लिए इसकी ढिंगरी मशरूम (ऑयस्टर मशरुम) प्रजाति सबसे उपयुक्त है।

आवश्यक सामग्री- सूखे चारे का भूसा (खाखला), बाविस्टिन (8) ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) फोर्मेलिन (150 एमएल प्रति 100 लीटर पानी), मशरूम के स्पॉन (बीज) पानी (आवश्यकता अनुसार), पानी का ड्रम

ढिंगरी मशरूम (ऑयस्टर मशरुम) उत्पादन की विधि
1 भूसे को जीवाणु मुक्त करने की विधि- सर्वप्रथम 10 किलो भूसे को पानी के ड्रम में डाल दे, बाद में उसमें 100 लीटर पानी मिला दें तथा भूसे को अच्छी तरह पानी में भिगो दे, भूसा पानी के ठीक पहले डालने से भूसा अच्छी तरह भीग जाता है अन्यथा बाद में डालने से वह पानी के ऊपर तैरने लगता है। यदि उत्पादन अधिक मात्रा में करना है तो पानी और भूसे की मात्रा उसी अनुपात में बढ़ा दे इसके बाद इसमें 8 ग्राम बाविस्टिन दवा और 150 एम एल फोर्मेलिन दवा को इसमे मिला दे उसके तुरंत बाद इसको बंद कर दे। ढक्कन को इस प्रकार बंद करे की हवा बाहर न आ पाये अब इसको 12 घंटे के लिए छोड़ दे, 12 घंटे बाद भूसे में मौजूद सभी प्रकार के जीव एवं फंफूद मर जाते है तथा भूसा सभी प्रकार के सूक्ष्मजीवों से मुक्त हो जाता है, तत्पश्चात भूसे को पानी से बहार निकल कर साफ तिरपाल पर बिछा कर उसकी नमी को कम करे तथा अतिरिक्त पानी को निकाल दे।

सूखे चारे का भूसा- * 2 स्पॉन (मशरूम का बीज) * भूसे को थैलियों और मटकों में भरना * मशरूम उगाने के लिए उपयोग में लिया जाने वाला बीज स्पॉन कहलाता है। मशरूम का मख्यःत कोई बीज नहीं

स्पॉन (मशरूम का बीज)- मशरूम उगाने के लिए उपयोग में लिया जाने वाला बीज स्पॉन कहलाता है। मशरूम का मुख्यःत कोई बीज नहीं होता है। इसको बीज का रूप देने के लिए अनाज के दानो पर मशरूम के कवक को प्रवर्धित करके इसको बीज का रूप दिया जाता है तथा इसको सूक्ष्मजीव मुक्त वातावरण में तैयार किया जाता है।

स्पॉन (मशरूम का बीज) कहाँ से प्राप्त करें- राजस्थान के किसानो के लिए बटन मशरुम स्पॉन, ऑयस्टर (ग्रे ऑयस्टर, पिंक ऑयस्टर, फ्लोरिडा ऑयस्टर व साजोर काजू ऑयस्टर) और मिल्की मशरुम स्पॉन स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर के अधीनस्थ कृषि महाविद्यालय, बीछवाल, बीकानेर के पादप रोग विज्ञान विभाग से प्राप्त किया जा सकता है। महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय उदयपुर के अधीनस्थ राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर में स्थित पादप रोग विज्ञान विभाग में भी उपलब्ध है। बीज दर 2-3 किलो स्पॉन प्रति 100 किलो भूसे की दर से उपयोग में लेवे। मशरूम का बीज मिश्रित करने के बाद इसको कम तापमान पर रखना चाहिए क्योंकि 47 डिग्री से अधिक तापमान पर यह पूरी तरह बेकार हो जाता है।

भूरे को थेलियो मे भरने की विधि-एक किलो सुखे भूसे को एक बैग में भरा जाता है। एक बैग में तीन लेयर लगानी होती है। प्रत्येक लेयर लगाने के बाद उसमे स्पॉन डालना चाहिए, इस तरह से एक बैग में तीन लेयर लगानी होती है। बैग में भरने के बाद उसमे बड़ी सुई की मदद से जगह जगह बैग के चुभे दे जिससे मशरूम को पर्याप्त ऑक्सीजन मिलती रहे। अगर मुनकीन हो तो सुई के भूसे को निर्जलीकृत के बाद सुखाना आगे रुई लगा दे तथा सुई चबाते समय रुई उस बैग के ही लगी रहने दें। जिससे सुई के द्वारा हुए छेद से कोई पेस्ट बैग के अंदर प्रवेश नहीं कर सकेगा। मशरूम उत्पादन तकनीकी अच्छे उत्पादन के लिए कमरे या जहाँ मशरूम उतपादन करना है वहाँ का तापमान 20-25 डिग्री तथा 70-80 प्रतिशत आद्रता रखनी चाहिए।

भूसे से थेलियों को अलग करना- 15 दिन बाद मशरूम का कवक जाल भूसे में पूरी तरह फैल जाता है और भूसे को पूरी तरह संघटित कर देता है। बेग में मशरूम की दूधिया बढ़वार दिखने लगती है उस समय थैली को हटाना चाहिए। किंतु ध्यान देने योग्य बात यह है की जब बढ़वार अच्छी हो उस समय हटाए क्योकि थैली हटाते ही बढ़वार एक बार हेतु रूक जाती है। थैली के ऊपरी सिरे को खोलकर सावधानीपूर्वक थैली को अलग करे और इस तरह थैली को निकाले की मशरूम की बढ़वार पर कोई नुकसान नहीं पहुंचे। सिंचाई थैली हटाते ही मशरूम को पानी देना शरू कर देना चाहिए तथा पानी देते समय इस बात का ख्याल रखना चाहिए की तेज धार सीधी बेग पर न डाले ऐसा करने पर बैग का संघटित रूप बिखर सकता है। दिन में 2 से 3 बार पानी अवश्य देना चाहिए यह मौसम और कमरे के ताजमान पर निर्भर करता है।

मशरूम की तुड़ाई- बिजाई के एक महीने बाद पहली तुड़ाई कर सकते हैं। पूर्ण विकसित मशरूम को पकड़ कर घुमा कर तोड़ ले और उस पर लगा भूसा हटा दें। महीने में 2 बार 15 दिन के अंतराल में मशरूम को तोडा जा सकता है।

मशरूम की पैकिंग- तोड़ी हुई मशरूम को थैली में 200 से 250 ग्राम के पैकेट बना कर पैकिंग करनी चाहिए। पैकिंग उस स्थान पर करे जहा तापमान कम हो और इसको सुबह सूरज निकलने के पहले मार्केट में भेज देवें।

मशरूम का उत्पादन उपज- ढ़ीगरी की पैदावार 35-40 दिनों तक आती रहती हैं साथ ही एक किलो सुखे भूसे से लगभग 500-700 ग्राम तक मशरूम प्राप्त हो सकती है। पहली फसल के कुछ दिनों बाद दुसरी फल बैंगो से आती है। ढींगरी की तुड़ाई के बाद डंठल के साथ लगी घास को काटकर हटा लिया जाना चाहिए तथा 2 घंटे बाद छिद्रदार पॉलीथीन में पैक कर बाजार में भेजना चाहिए।

भविष्य की राह और क्रियान्वयन - मशरूम उत्पादन को एक स्थायी व्यवसाय बनाने के लिए केवल उगाना काफी नहीं है, बल्कि उसे सही तरीके से बाजार तक पहुँचाना और भविष्य की संभावनाओं को समझना अनिवार्य है।

1. **वैल्यू एडिशन:** मुनाफे को दोगुना करने का मंत्र- ताजा मशरूम की शेल्फ-लाइफ कम होती है, इसलिए राजस्थान की सफल महिला उद्यमी वैल्यू एडिशन (मूल्य संवर्धन) पर जोर दे रही हैं।मशरूम सुखाना ओयस्टर मशरूम को सुखाकर उसका पाउडर बनाया जा सकता है, जिसका उपयोग सूप, बिस्कुट और हेल्थ सप्लीमेंट्स में होता है।

प्रसंस्कृत उत्पाद: मशरूम का अचार, मुरब्बा और पापड़ बनाकर महिलाएं स्थानीय मेलों और अमृता हाट जैसे सरकारी प्रदर्शनियों में ऊंचे दामों पर बेच रही हैं।

डिजिटल मार्केटिंग और ब्रांडिंग-आज की महिला उद्यमी केवल स्थानीय व्यापारियों पर निर्भर नहीं हैरूसोशल मीडिया का उपयोग व्हाट्स,प ग्रुप और फेसबुक के माध्यम से सीधे ग्राहकों तक पहुँच। पैकेजिंग आकर्षक और स्वच्छ पैकेजिंग से उत्पाद की कीमत 20-30 प्रतिशत तक बढ़ जाती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जैविक कीट प्रबंधन से बढ़ेगी आम, केला, खरबूजा एवं तरबूज में मिठास

प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ. सत्येन्द्र कुमार सिंह सह- आचार्य, कीट विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, चंद्रभानु गुप्त कृषि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकेटी, लखनऊ

डॉ. ललित कुमार सनोदिया

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह, डॉ. अवनीश यादव

सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ.प्र.)

भारत में फल उत्पादन कृषि का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और आम, केला, खरबूजा तथा तरबूज जैसे फल किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन फलों की गुणवत्ता का सबसे प्रमुख मापदंड उनकी मिठास होती है। सामान्यतः किसान कीटों और रोगों से फसल को बचाने के लिए रासायनिक कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग करते हैं, जिससे कभी-कभी फलों की प्राकृतिक गुणवत्ता और स्वाद प्रभावित हो जाता है। इसके विपरीत यदि जैविक कीट प्रबंधन अपनाया जाए तो फसल को सुरक्षित रखने के साथ-साथ फलों की गुणवत्ता और मिठास भी बेहतर हो सकती है।

जैविक कीट प्रबंधन का अर्थ है कीटों और रोगों को नियंत्रित करने के लिए प्राकृतिक और पर्यावरण-अनुकूल उपायों का उपयोग करना। इसमें नीम आधारित उत्पाद, जैविक कीटनाशक, लाभकारी कीट, सूक्ष्मजीव आधारित जैव एजेंट तथा पौधों से बने अर्क का प्रयोग किया जाता है। इन उपायों से फसल पर कीटों का प्रकोप कम होता है और पौधों की वृद्धि स्वस्थ रहती है। जब पौधे स्वस्थ और तनावमुक्त होते हैं तो उनमें प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया बेहतर होती है, जिससे कार्बोहाइड्रेट का निर्माण अधिक होता है और यही कार्बोहाइड्रेट बाद में फलों में शर्करा के रूप में जमा होकर उनकी मिठास को बढ़ाते हैं।

आम की खेती में कई प्रकार के कीट पाए जाते हैं, जैसे आम का हॉप्पर, फल मक्खी और मिलीबग। यदि इन कीटों को नियंत्रित न किया जाए तो वे पत्तियों और फलों को नुकसान पहुंचाकर उत्पादन और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करते हैं। जैविक कीट प्रबंधन में नीम तेल, नीम खली और बवेरिया बेसियाना जैसे जैव एजेंटों का प्रयोग किया जा सकता है। इसके अलावा फेरोमोन ट्रैप का उपयोग करके फल मक्खी की संख्या को कम किया जा सकता है। इन उपायों से आम के पौधे स्वस्थ रहते हैं और फल ठीक प्रकार से विकसित होते हैं, जिससे उनकी मिठास और सुगंध बेहतर होती है।

केले की फसल में भी कई कीट जैसे छेदक कीट, थ्रिप्स और एफिड्स नुकसान पहुंचाते हैं। जैविक प्रबंधन के अंतर्गत ट्राइकोडर्मा, ब्यूवेरिया और वर्टिसिलियम जैसे जैविक एजेंटों का उपयोग किया जा सकता है। साथ ही खेत में स्वच्छता बनाए रखना, संक्रमित पौधों को हटाना और नीम आधारित घोल का छिड़काव करना भी प्रभावी उपाय हैं। जब पौधों को कीटों से सुरक्षा मिलती है तो पौधे अपनी ऊर्जा का उपयोग बेहतर वृद्धि और फल विकास में करते हैं, जिससे केले के फलों में शर्करा की मात्रा बढ़ती है और उनका स्वाद अधिक मीठा हो जाता है।

बवेरिया बेसियाना (जैविक कीट नियंत्रण फफूंद)

खरबूजा और तरबूज जैसी बेल वाली फसलों में भी कीटों का प्रकोप सामान्य समस्या है। इन फसलों में विशेष रूप से फल मक्खी, एफिड्स और लाल कद्दू भृंग नुकसान पहुंचाते हैं। जैविक कीट प्रबंधन में फेरोमोन ट्रैप, पीले चिपचिपे ट्रैप और नीम तेल का प्रयोग अत्यंत प्रभावी माना जाता है। इसके अलावा लहसुन, मिर्च और नीम के अर्क से तैयार जैविक घोल का छिड़काव भी किया जा सकता है। इन उपायों से कीटों की संख्या नियंत्रित रहती है और पौधों की वृद्धि स्वस्थ बनी रहती है। परिणामस्वरूप फल अच्छी तरह विकसित होते हैं और उनमें मिठास तथा स्वाद में सुधार होता है।

जैविक कीट प्रबंधन का एक अन्य महत्वपूर्ण लाभ यह है कि इससे फलों पर रासायनिक अवशेष नहीं रहते । इससे उपभोक्ताओं को सुरक्षित और स्वास्थ्यवर्धक फल प्राप्त होते हैं। साथ ही पर्यावरण और मिट्टी की गुणवत्ता भी सुरक्षित रहती है। वर्तमान समय में बाजार में जैविक उत्पादों की मांग तेजी से बढ़ रही है, इसलिए जैविक तरीके से उगाए गए फलों का मूल्य भी अधिक मिलता है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आम, केला, खरबूजा और तरबूज जैसी फलों की फसलों में जैविक कीट प्रबंधन अपनाने से न केवल कीटों का प्रभावी नियंत्रण संभव है, बल्कि पौधों की सेहत और फलों की गुणवत्ता में भी सुधार होता है। स्वस्थ पौधे अधिक मात्रा में शर्करा का निर्माण करते हैं, जिससे फलों की मिठास बढ़ती है। इसलिए किसानों को चाहिए कि वे रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता कम करते हुए जैविक कीट प्रबंधन की तकनीकों को अपनाएं, ताकि बेहतर गुणवत्ता वाले मीठे फल उत्पादन के साथ-साथ पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य की भी रक्षा हो सके।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

बदलती सोच, बदलता भारत: कृषि में नवाचार और युवा उद्यमिता

अभिषेक सिंह, प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ. ललित कुमार सनोदिया

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह, डॉ. अवनीश यादव

सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रस्तावना

भारत को सदियों से कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है, जहाँ कृषि न केवल आजीविका का प्रमुख स्रोत रही है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक संरचना की आधारशिला भी रही है। किंतु समय के साथ कृषि क्षेत्र कई चुनौतियों से जूझता रहा-जैसे घटती जोत, जलवायु परिवर्तन, संसाधनों की कमी और किसानों की आय में अस्थिरता। इन चुनौतियों के बीच एक सकारात्मक परिवर्तन उभरकर सामने आया है, जिसे "बदलती सोच" के रूप में देखा जा सकता है।

आज का भारत तेजी से बदल रहा है, और इस बदलाव का सबसे बड़ा वाहक युवा वर्ग बनकर उभरा है। पहले जहाँ युवा कृषि से दूर रहना चाहते थे, वहीं अब वे इसे एक लाभकारी, नवाचारी और स्टार्टअप आधारित उद्यम के रूप में देख रहे हैं। आधुनिक तकनीक, डिजिटल प्लेटफॉर्म, और सरकारी योजनाओं के सहयोग से कृषि क्षेत्र में नवाचार और युवा उद्यमिता एक नई क्रांति का रूप ले चुकी है। यह परिवर्तन न केवल कृषि को सशक्त बना रहा है, बल्कि "आत्मनिर्भर भारत" के लक्ष्य को भी मजबूती प्रदान कर रहा है।

कृषि में बदलती सोच: परंपरा से प्रौद्योगिकी तक

आधुनिक कृषि में तकनीकी नवाचार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। आज की युवा पीढ़ी पारंपरिक खेती के साथ-साथ नई तकनीकों को अपनाकर उत्पादन और उत्पादकता दोनों में सुधार कर रही है। प्रिसिजन फार्मिंग, ड्रोन तकनीक, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और डेटा एनालिटिक्स जैसे उपकरणों का उपयोग अब खेतों तक पहुँच चुका है। इन तकनीकों के माध्यम से किसान अपने खेत की मिट्टी, नमी, पोषक तत्वों और फसल की स्थिति का सटीक आकलन कर सकते हैं, जिससे संसाधनों का संतुलित उपयोग संभव हो पाता है। उदाहरण के लिए, सेंसर आधारित सिंचाई प्रणाली के माध्यम से केवल आवश्यक मात्रा में ही पानी दिया जाता है, जिससे जल संरक्षण होता है और लागत में भी कमी आती है। इसी प्रकार ड्रोन द्वारा कीटनाशकों का छिड़काव न केवल समय की बचत करता है, बल्कि श्रम लागत को भी कम करता है। यह स्पष्ट है कि तकनीक ने कृषि को अधिक वैज्ञानिक, सटीक और लाभकारी बना दिया है।

कृषि में नवाचार केवल उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह विपणन, प्रसंस्करण और आपूर्ति श्रृंखला तक विस्तारित हो चुका है। आज के युवा उद्यमी एग्री-स्टार्टअप्स के माध्यम से कृषि को एक संगठित उद्योग के रूप में विकसित कर रहे हैं। वे डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग कर किसानों और उपभोक्ताओं को सीधे जोड़ रहे हैं, जिससे बिचौलियों की भूमिका कम हो रही है और किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य मिल रहा है। ई-मार्केटिंग, ऑनलाइन मंडियाँ और मोबाइल ऐप्स के माध्यम से किसान अब देश के किसी भी कोने में अपने उत्पाद बेच सकते हैं। इसके साथ ही, कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण और वैल्यू एडिशन पर भी जोर दिया जा रहा है, जैसे कि फलों से जूस बनाना, अनाज से रेडी-टू-कुक उत्पाद तैयार करना आदि। इससे न केवल किसानों की आय में वृद्धि होती है, बल्कि कृषि को एक बहुआयामी व्यवसाय के रूप में विकसित करने में भी मदद मिलती है।

युवा उद्यमिता का एक और महत्वपूर्ण पहलू कृषि विविधीकरण है। आज का युवा किसान केवल पारंपरिक फसलों तक सीमित नहीं रहना चाहता, बल्कि वह नए-नए क्षेत्रों में अपनी संभावनाएँ तलाश रहा है। बागवानी, फूलों की खेती, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, मछली पालन और डेयरी जैसे क्षेत्रों में युवाओं की भागीदारी तेजी से बढ़ रही है। इसके अलावा, हाइड्रोपोनिक्स, एरोपोनिक्स और वर्टिकल फार्मिंग जैसी तकनीकें शहरी युवाओं को भी कृषि से जोड़ रही हैं। ये तकनीकें कम स्थान और कम संसाधनों में अधिक उत्पादन की सुविधा देती हैं, जिससे शहरों में भी खेती संभव हो रही है। इस प्रकार कृषि अब केवल ग्रामीण क्षेत्र तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह शहरी अर्थव्यवस्था का भी हिस्सा बनती जा रही है। महिलाओं की भागीदारी भी इस परिवर्तन में उल्लेखनीय है, जो स्वयं सहायता समूहों और छोटे उद्यमों के माध्यम से कृषि क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

हालांकि कृषि में नवाचार और युवा उद्यमिता के इस उभरते परिदृश्य के साथ कुछ चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। तकनीकी ज्ञान की कमी, प्रारंभिक निवेश की समस्या, बाजार तक सीमित पहुँच और जलवायु परिवर्तन के

प्रभाव जैसे मुद्दे आज भी सामने हैं। कई बार छोटे और सीमांत किसान नई तकनीकों को अपनाने में सक्षम नहीं हो पाते, जिससे विकास की गति असमान हो जाती है। इन समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक है कि किसानों को नियमित प्रशिक्षण और मार्गदर्शन प्रदान किया जाए, कृषि शिक्षा को अधिक व्यावहारिक और रोजगारोन्मुख बनाया जाए, और सरकार तथा निजी क्षेत्र के बीच बेहतर समन्वय स्थापित किया जाए। सरकारी योजनाओं और वित्तीय सहायता के माध्यम से युवाओं को प्रोत्साहित किया जा सकता है, जिससे वे कृषि क्षेत्र में नवाचार और उद्यमिता को आगे बढ़ा सकें।

निष्कर्ष

भविष्य की दृष्टि से देखा जाए तो भारतीय कृषि में अपार संभावनाएँ हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) और ब्लॉकचेन जैसी उन्नत तकनीकें कृषि को और अधिक स्मार्ट और पारदर्शी बना सकती हैं। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए क्लाइमेट-स्मार्ट एग्रीकल्चर को अपनाना आवश्यक होगा, जिससे उत्पादन में स्थिरता बनी रहे। यदि युवा शक्ति, तकनीकी नवाचार और नीतिगत समर्थन एक साथ मिलकर कार्य करें, तो भारत न केवल अपनी खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकता है, बल्कि वैश्विक कृषि बाजार में भी अग्रणी भूमिका निभा सकता है। अंततः यह कहा जा सकता है कि बदलती सोच और युवा उद्यमिता के माध्यम से भारतीय कृषि एक नए युग में प्रवेश कर रही है, जहाँ यह केवल जीविका का साधन नहीं, बल्कि समृद्धि, नवाचार और आत्मनिर्भरता का प्रतीक बन चुकी है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जलवायु परिवर्तन और गेहूँ में उभरती रतुआ बीमारियां

विन्द्रेश पासवान, अतुल पासवान सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ. ओमप्रकाश यादव पादप रोगविज्ञान विभाग, कृषि संकाय, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर

डॉ. ललित कुमार सनोदिया सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज बीआर डीपीजी कॉलेज देवरिया

सार

गेहूँ भारत की प्रमुख खाद्यान्न फसलों में से एक है और देश की खाद्य सुरक्षा में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। बदलते मौसम और बढ़ते तापमान ने कृषि प्रणाली को नई चुनौतियों के सामने खड़ा कर दिया है। गेहूँ में रतुआ रोग लंबे समय से मौजूद है, परंतु हाल के वर्षों में इसका स्वरूप, फैलाव और प्रभाव बदलता दिखाई दे रहा है। यह परिवर्तन जलवायु परिवर्तन से गहराई से जुड़ा है। तापमान में वृद्धि, नमी के पैटर्न में बदलाव और मौसम की अनिश्चितता ने रतुआ रोग को अधिक सक्रिय बना दिया है। यह लेख जलवायु परिवर्तन और गेहूँ की रतुआ बीमारियों के बीच संबंध का विश्लेषण करता है और उनके प्रबंधन के व्यावहारिक उपाय प्रस्तुत करता है।

भूमिका

जलवायु परिवर्तन आज केवल वैज्ञानिक चर्चा का विषय नहीं रहा, बल्कि यह खेत और किसान के दैनिक अनुभव का हिस्सा बन चुका है। कभी असामान्य गर्मी, कभी अचानक वर्षा, तो कभी लंबे समय तक कोहरा और नमी, ये सभी परिवर्तन फसलों की वृद्धि और रोगों के विकास को प्रभावित कर रहे हैं। गेहूँ की फसल सामान्य रूप से ठंडे और संतुलित मौसम में अच्छी वृद्धि करती है। जब तापमान और नमी में असंतुलन होता है, तब रोगों के लिए अनुकूल वातावरण बन जाता है। रतुआ रोग गेहूँ की प्रमुख बीमारियों में से एक है। पहले यह रोग कुछ सीमित क्षेत्रों तक रहता था, लेकिन अब यह नए क्षेत्रों में भी दिखाई देने लगा है। यह संकेत है कि रोग का व्यवहार बदल रहा है, और इसके पीछे जलवायु परिवर्तन एक प्रमुख कारण हो सकता है।

गेहूँ में रतुआ रोग का परिचय

गेहूँ में मुख्य रूप से तीन प्रकार के रतुआ रोग पाए जाते हैं

1.पीला रतुआ 2.भूरा रतुआ 3.काला रतुआ

इन रोगों में पत्तियों और तनों पर जंग जैसे धब्बे दिखाई देते हैं। जैसे जैसे रोग बढ़ता है, पत्तियाँ सूखने लगती हैं और पौधे की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। इसका सीधा प्रभाव दाने के आकार और वजन पर पड़ता है। गंभीर स्थिति में उत्पादन में भारी कमी हो सकती है। रतुआ रोग का कारण एक प्रकार का फफूंद है जो बीजाणुओं के माध्यम से फैलता है। हवा के द्वारा ये बीजाणु दूर तक जा सकते हैं, जिससे रोग तेजी से फैल सकता है।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

तापमान में बदलाव

रतुआ रोग के विकास के लिए मध्यम तापमान अनुकूल होता है। पहले कुछ विशेष तापमान सीमा में ही यह रोग तेजी से फैलता था। लेकिन अब देखा जा रहा है कि रोग की कुछ नस्लें अधिक तापमान में भी सक्रिय रह सकती हैं। सर्दियों का छोटा होना और अचानक गर्मी का आना रोग के चक्र को प्रभावित कर रहा है। यदि गेहूँ की संवेदनशील अवस्था जैसे फूल आने या दाना बनने के समय तापमान और नमी रोग के अनुकूल हो जाएँ, तो नुकसान अधिक होता है।

नमी और वर्षा का प्रभाव

सुबह की ओस, कोहरा और हल्की वर्षा रतुआ के विकास में सहायक होते हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण कई क्षेत्रों में नमी की अवधि बढ़ गई है। लंबे समय तक पत्तियों पर नमी बने रहने से संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है।

नए क्षेत्रों में फैलाव

पहले कुछ ऊँचाई वाले या ठंडे क्षेत्रों में ही पीला रतुआ अधिक देखा जाता था। अब यह रोग मैदानी क्षेत्रों में भी दिखाई देने लगा है। इससे यह स्पष्ट होता है कि जलवायु की बदलती परिस्थितियाँ रोग के भौगोलिक विस्तार को प्रभावित कर रही हैं।

उभरती चुनौतियाँ

1.रोग की नई नस्लों का विकास
2.पुरानी किस्मों की प्रतिरोधक क्षमता का कम होना
3.रोग का जल्दी और तेजी से फैलना
4.पहचान और नियंत्रण में देरी
5.जब रोग नई नस्लों के रूप में सामने आता है, तो पहले से विकसित प्रतिरोधी किस्में भी प्रभावित हो सकती हैं। इससे शोध संस्थानों के सामने नई चुनौतियाँ खड़ी होती हैं।

किसान स्तर पर समाधान

रोग प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग

क्षेत्र के अनुसार अनुशंसित और प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना सबसे प्रभावी उपाय है। नई किस्में अक्सर बदलती परिस्थितियों को ध्यान में रखकर विकसित की जाती हैं।

समय पर बुवाई

बहुत देर से बुवाई करने पर फसल का संवेदनशील चरण ऐसे समय आ सकता है जब मौसम रोग के लिए अनुकूल हो। इसलिए संतुलित समय पर बुवाई करना महत्वपूर्ण है।

संतुलित पोषण प्रबंधन-अत्यधिक नाइट्रोजन देने से पौधे कोमल हो जाते हैं और रोग का खतरा बढ़ सकता है। संतुलित खाद का प्रयोग पौधे की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।

नियमित निगरानी-खेत का समय समय पर निरीक्षण करना चाहिए। यदि पत्तियों पर छोटे पीले या भूरे धब्बे दिखें, तो तुरंत कृषि विशेषज्ञ से सलाह लेनी चाहिए।

आवश्यक होने पर दवा का प्रयोग

यदि संक्रमण अधिक हो, तो वैज्ञानिक सलाह के अनुसार फफूंदनाशक का उपयोग किया जा सकता है। परंतु दवा का प्रयोग अंतिम विकल्प होना चाहिए।

शोध और नीति स्तर पर आवश्यक कदम

1.मौसम आधारित रोग पूर्वानुमान प्रणाली विकसित करना
2.नई और अधिक मजबूत किस्मों का विकास
3.किसानों को समय पर जानकारी उपलब्ध कराना
4.प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना

यदि किसानों को पहले से जानकारी मिल जाए कि रोग फैलने की संभावना है, तो वे समय रहते उपाय कर सकते हैं।

विश्लेषण

जलवायु परिवर्तन और रतुआ रोग के बीच संबंध केवल संयोग नहीं है। यह स्पष्ट हो रहा है कि बदलती जलवायु रोग के व्यवहार को प्रभावित कर रही है। तापमान और नमी में छोटे बदलाव भी रोग के जीवन चक्र को तेज कर सकते हैं। इससे उत्पादन, गुणवत्ता और बाजार मूल्य पर प्रभाव पड़ता है। रतुआ रोग का प्रभाव केवल खेत तक सीमित नहीं रहता। यदि उत्पादन घटता है, तो खाद्य सुरक्षा और आर्थिक स्थिरता दोनों प्रभावित होती हैं। इसलिए इसे व्यापक दृष्टिकोण से देखना आवश्यक है। केवल दवा का छिड़काव पर्याप्त समाधान नहीं है। दीर्घकालिक रणनीति में जलवायु अनुकूल कृषि पद्धतियाँ, अनुसंधान और किसान शिक्षा शामिल होनी चाहिए।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन के इस दौर में गेहूँ की रतुआ बीमारियाँ एक गंभीर चुनौती बनती जा रही हैं। बदलते तापमान और नमी ने रोग के फैलाव और प्रभाव को बढ़ाया है। यदि समय पर वैज्ञानिक उपाय अपनाए जाएँ, प्रतिरोधी किस्मों का चयन किया जाए और किसानों को सही जानकारी दी जाए, तो इस समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

भारत प्रमुख की मिट्टियाँ एवं प्रबंधन

अनुराग सिंह मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग
अमन यादव कीट विज्ञान विभाग
हर्षित सिंह सस्य विज्ञान विभाग
कमलेश पांडे पादप रोग विज्ञान विभाग
क्रोनी सिंह सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विवि कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

मिट्टी: मेंटल चट्टान की ऊपरी परत (रेगोलिथ - ठोस चट्टान को ढकने वाली ढीली, विषम-मिश्रित सामग्री की परत) जो मुख्य रूप से बहुत छोटे कणों और ह्यूमस से बनी होती है और पौधों के विकास में सहायक होती है, उसे "मिट्टी" कहा जाता है। मिट्टी मुख्य रूप से खनिज/चट्टान के कणों, सड़े हुए कार्बनिक पदार्थों के अंश, मिट्टी के पानी, मिट्टी की हवा और जीवित जीवों से मिलकर बनी होती है। मिट्टी के निर्माण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं मूल पदार्थ, भू-आकृति, जलवायु, वनस्पति, जीव-जंतु और समय।

मिट्टी चार तत्वों से बनी होती है: मूल पदार्थ से प्राप्त अकार्बनिक या खनिज अंश, कार्बनिक पदार्थ (सड़े-गले और विघटित पौधे और जानवर), वायु, पानी मिट्टी का निर्माण विशिष्ट प्राकृतिक परिस्थितियों में होता है और प्राकृतिक वातावरण के प्रत्येक तत्व मिट्टी निर्माण की इस जटिल प्रक्रिया में योगदान करते हैं जिसे "पेडोजेनेसिस" के नाम से जाना जाता है।

भारत में पाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की मिट्टी: प्राचीन काल में, मिट्टी को मुख्य रूप से दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता था - उर्वर (उपजाऊ) और उसर (बांझ), मिट्टी का पहला वैज्ञानिक वर्गीकरण वासिली डोकुचेव ने किया था। भारत में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) ने मिट्टी को 8 श्रेणियों में वर्गीकृत किया है। इसके अनुसार भारत में मिट्टी के प्रकार इस प्रकार हैं:

1.जलोढ़ मिट्टी 2. काली कपास की मिट्टी 3. लाल और पीली मिट्टी 4. लेटराइट मिट्टी 5.पर्वतीय या वन मृदा 6. शुष्क या रेगिस्तानी मिट्टी 7.लवणीय और क्षारीय मिट्टी 8.पीटयुक्त और दलदली मिट्टी

जलोढ़ मिट्टी: उत्तरी मैदानों और नदी घाटियों में जलोढ़ मिट्टी व्यापक रूप से पाई जाती है यह देश के कुल भूभाग का लगभग 40त्न हिस्सा कवर करता है ये मिट्टी मुख्य रूप से हिमालय से लाए गए मलबे से बनी है प्रायद्वीपीय क्षेत्र में, वे पूर्वी तट के डेल्टाओं और नदी घाटियों में पाए जाते हैं जलोढ़ मिट्टी का रंग हल्के भूरे से लेकर राख जैसे भूरे रंग तक भिन्न होता है जलोढ़ मिट्टी की प्रकृति रेतीली दोमट से लेकर चिकनी मिट्टी तक भिन्न होती है इनमें पोटाश की मात्रा अधिक होती है लेकिन फास्फोरस की मात्रा कम होती है।

ऊपरी और मध्य गंगा के मैदानों में दो अलग-अलग प्रकार की जलोढ़ मिट्टी विकसित हुई है - खादर और भांगर।

खादर एक नई जलोढ़ मिट्टी है जो नदियों के बाढ़ के मैदानों में पाई जाती है। खादर में हर साल नई गाद जमा होती है जिससे यह समृद्ध होती जाती है, भंगर प्राचीन जलोढ़ मिट्टी है, जो बाढ़ के मैदानों से दूर जमा हुई है, खादर और भांगर दोनों प्रकार की मिट्टी में अशुद्ध कैल्शियम कार्बोनेट के कंकर (कंक्रीशन) पाए जाते हैं। निचले और मध्य गंगा मैदानों और ब्रह्मपुत्र घाटी में ये मिट्टी अधिक बलुई और चिकनी होती है, जलोढ़ मिट्टी में गहन खेती की जाती है - मुख्य रूप से गेहूं, मक्का, गन्ना, दालें, तिलहन आदि की खेती की जाती है।

प्रबंधन: खाद का प्रयोगसिंचाई के साथ फसल चक्र अपनानानाइट्रोजन की कमी पूरी करना।

काली या रेगुर मिट्टी: काली मिट्टी को "रेगुर मिट्टी" या "काली कपास मिट्टी" के नाम से भी जाना जाता है, देश के कुल भूभाग का लगभग 15% हिस्सा कवर करता है यह दक्कन पठार के अधिकांश भाग को कवर करता है- महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु के कुछ हिस्से गोदावरी और कृष्णा नदियों के ऊपरी क्षेत्रों और दक्कन पठार के उत्तर-पश्चिमी भाग में काली मिट्टी बहुत गहरी है।इन मिट्टियों का रंग गहरे काले से लेकर भूरे रंग तक भिन्न होता है काली मिट्टी आमतौर पर चिकनी, गहरी और अभेद्य होती है। बरसात के मौसम में गीली होने पर यह बहुत फूल जाती है और चिपचिपी हो जाती है। सूखे मौसम में नमी वाष्पित हो जाती है, मिट्टी सिकुड़ जाती है और उसमें चौड़ी दरारें पड़ जाती हैं। काली मिट्टी में आयरन, चूना, एल्युमिनियम, मैग्नीशियम प्रचुर मात्रा में होते हैं और इसमें पोटैशियम भी पाया जाता है। हालांकि, इन मिट्टियों में नाइट्रोजन, फास्फोरस और कार्बनिक पदार्थ की कमी होती है। काली मिट्टी में मुख्य रूप से कपास, दालें, बाजरा, अरंडी, तंबाकू, गन्ना, खट्टे फल, अलसी आदि की खेती की जाती है।

प्रबंधन: इसमें दरारें पड़ने पर गहरी जुताई करनाजैविक कार्बन बढ़ानाऔर जल निकासी का उचित इंतजाम करना।

लाल और पीली मिट्टी: इसे "ऑम्निबस ग्रुप" के नाम से भी जाना जाता है यह देश के कुल भूभाग का लगभग 18.5% हिस्सा कवर करता है कम वर्षा वाले क्षेत्रों (दक्कन पठार के पूर्वी और दक्षिणी भाग) में पाया जाता है। पश्चिमी घाट के तलहटी क्षेत्र में , एक लंबा इलाका लाल दोमट मिट्टी से आच्छादित है। यह मिट्टी ओडिशा और छत्तीसगढ़ के कुछ हिस्सों और मध्य गंगा मैदान के दक्षिणी भागों में भी पाई जाती है क्रिस्टलीय और रूपांतरित चट्टानों में लोहे की उपस्थिति के कारण मिट्टी का रंग लाल होता है। जलयुक्त अवस्था में मिट्टी पीली दिखाई देती है बारीक कणों वाली लाल और पीली मिट्टी आमतौर पर उपजाऊ होती है जबकि मोटे कणों वाली मिट्टी कम उपजाऊ होती है इस प्रकार की मिट्टी में आमतौर पर नाइट्रोजन, फास्फोरस और ह्यूमस की कमी होती है लाल और पीली मिट्टी में मुख्य रूप से गेहूं, कपास, तिलहन, बाजरा, तंबाकू और दालों की खेती की जाती है।

प्रबंधन: नाइट्रोजनफास्फोरस और चूना (lime) मिलाकर उर्वरता में सुधार।

रेगिस्तानी मिट्टी: इसे शुष्क मिट्टी के रूप में भी जाना जाता है, और यह देश के कुल भूमि क्षेत्र का 4.42त्न से अधिक हिस्सा है। इसका रंग लाल से लेकर भूरा तक होता है रेगिस्तानी मिट्टी की बनावट रेतीली से लेकर बजरीदार होती है, इसमें नमी की मात्रा कम होती है और पानी को रोककर रखने की क्षमता भी कम होती है ये मिट्टी खारी प्रकृति की है और कुछ क्षेत्रों में नमक की मात्रा इतनी अधिक है कि पानी को वाष्पित करके साधारण नमक प्राप्त किया जाता है इन मिट्टियों में फॉस्फेट की मात्रा सामान्य है लेकिन नाइट्रोजन की कमी है।

मिट्टी की निचली परतों में कैल्शियम की मात्रा बढ़ने के कारण 'कंकर' की परतें बन जाती हैं। ये कंकड़ की परतें पानी के प्रवेश को रोकती हैं और इस प्रकार सिंचाई के माध्यम से पानी उपलब्ध होने पर, मिट्टी की नमी पौधों की निरंतर वृद्धि हेतु आसानी से उपलब्ध हो जाती है पश्चिमी राजस्थान में रेगिस्तानी मिट्टी बहुतायत में पाई जाती है और इसमें ह्यूमस और कार्बनिक पदार्थ बहुत कम मात्रा में होते हैं।

प्रबंधन: ड्रिप सिंचाईखारापन कम करने के लिए जिप्सम का उपयोगऔर वृक्षारोपण से कटाव रोकना।

लेटराइट मिट्टी: यह नाम लैटिन शब्द "लेटर" से लिया गया है जिसका अर्थ ईंट होता है देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 3.7त्न हिस्सा है ये मानसूनी जलवायु की विशिष्ट मिट्टी हैं, जिसकी विशेषता मौसमी वर्षा है। बारिश के साथ, चूना और सिलिका बह जाते हैं, और लौह ऑक्साइड और एल्यूमीनियम से भरपूर मिट्टी बच जाती है, जिससे लेटराइट मिट्टी का निर्माण होता है लेटराइट मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ, नाइट्रोजन, फॉस्फेट और कैल्शियम की कमी होती है, हालांकि, आयरन ऑक्साइड और पोटाश प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, मध्य प्रदेश और असम और ओडिशा के पहाड़ी क्षेत्रों में लेटराइट मिट्टी पाई जाती है केरल, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश की लाल लेटराइट मिट्टी काजू जैसे वृक्ष फसलों की खेती के लिए उपयुक्त है।

लैटेराइट मिट्टी हवा के संपर्क में आने पर तेजी से और अपरिवर्तनीय रूप से कठोर हो जाती है, यह गुण दक्षिण भारत में भवन निर्माण ईंटों के रूप में इसके उपयोग का कारण बनता है।

प्रबंधन: पोटाश और फॉस्फेट उर्वरकों का प्रयोग करकेइसे खेती योग्य बनाना।

पर्वतीय मिट्टी: इस प्रकार की मिट्टी उन वन क्षेत्रों में पाई जाती है जहां पर्याप्त वर्षा होती है मिट्टी की बनावट उस पर्वतीय वातावरण पर निर्भर करती है जहां वे पाए जाते हैं ये मिट्टी ऊपरी ढलानों पर मोटे कणों वाली होती है और घाटी के किनारों पर बलुई और गाद वाली होती है हिमालय के हिम-आच्छादित क्षेत्रों में, इन मिट्टी का अपरदन होता है और ये अम्लीय होती हैं जिनमें ह्यूमस की मात्रा कम होती है। निचली घाटियों में पाई जाने वाली मिट्टी उपजाऊ होती है। इसे वन मृदा भी कहा जाता है।

प्रबंधन: जैविक खाद का प्रयोग और सीढ़ीदार खेती।

पीट और दलदली मिट्टी : ये मिट्टी भारी वर्षा और उच्च आर्द्रता वाले क्षेत्रों में पाई जाती है, और यह वनस्पतियों के अच्छे विकास में सहायक होती है पीटयुक्त मिट्टी ह्यूमस और कार्बनिक पदार्थों से भरपूर होती है ये मिट्टी आम तौर पर भारी और काले रंग की होती है। कई जगहों पर ये मिट्टी क्षारीय होती है। ये दक्षिणी उत्तराखंड, बिहार के उत्तरी भाग और पश्चिम बंगाल, ओडिशा और तमिलनाडु के तटीय क्षेत्रों में पाए जाते हैं।

प्रबंधन: जल निकासी की व्यवस्था करना और धान की खेती के लिए उपयोग करना।

खारी और क्षारीय मिट्टी: इन मिट्टी में सोडियम, मैग्नीशियम और पोटेशियम की मात्रा अधिक होती है, इसलिए ये अनुर्वर होती हैं। नमक की उच्च मात्रा मुख्य रूप से शुष्क जलवायु और खराब जल निकासी के कारण होती है इसकी बनावट रेतीली से लेकर दोमट तक होती है ये मिट्टी शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में, और जलभराव वाले और दलदली क्षेत्रों में पाई जाती है इन मिट्टियों में कैल्शियम और नाइट्रोजन की कमी है ये मिट्टी मुख्यतः पश्चिमी गुजरात, पूर्वी तट के डेल्टा क्षेत्रों और पश्चिम बंगाल के सुंदरबन क्षेत्रों में पाई जाती है। कच्छ के रण में दक्षिण-पश्चिमी मानसून नमक के कण लाता है और वहाँ एक परत के रूप में जमा हो जाते हैं। डेल्टा के निकट समुद्र का जल भी मिट्टी की लवणता को बढ़ा देता है जल निकासी में सुधार करके, जिप्सम या चूना डालकर और बरसीम, धैनचा आदि जैसी नमक प्रतिरोधी फसलों की खेती करके इन मिट्टी को पुनः उपजाऊ बनाया जा सकता है। इन्हें रेह, उसर, कल्लर, राकर, थुर और चोपन भी कहा जाता है। ये मुख्य रूप से राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और महाराष्ट्र में पाए जाते हैं। इस मिट्टी में सोडियम क्लोराइड और सोडियम सल्फेट मौजूद होते हैं। यह दलहनी फसलों के लिए उपयुक्त है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

वैश्विकरण के दौर में कृषि व्यवसाय प्रबंधन की चुनौतियां और अवसर

सर्वेश कुमार एमबीए (खाद्य एवं कृषि व्यवसाय प्रबंधन) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ. ललित कुमार सनोदिया

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह (सहायक प्रोफेसर) कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ सत्येंद्र कुमार सिंह सह-आचार्य, कीट विज्ञान विभाग, कृषि संकाय

प्रस्तावना: वर्तमान समय में वैश्वीकरण ने कृषि क्षेत्र को एक नई दिशा और पहचान प्रदान की है। पहले जहाँ कृषि केवल स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति तक सीमित थी, वहीं अब यह वैश्विक बाजार से जुड़कर एक संगठित व्यवसाय के रूप में विकसित हो चुकी है। आधुनिक तकनीकों, संचार साधनों और अंतरराष्ट्रीय व्यापार नीतियों के कारण कृषि उत्पादों की पहुँच देश की सीमाओं से बाहर तक हो गई है। इस बदलते परिवेश में कृषि व्यवसाय प्रबंधन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है, जो किसानों को उत्पादन से लेकर विपणन तक हर स्तर पर मार्गदर्शन प्रदान करता है।

कृषि व्यवसाय प्रबंधन के अंतर्गत वैश्वीकरण की चुनौतियाँ और अवसर: वैश्वीकरण के दौर में कृषि व्यवसाय प्रबंधन किसानों के लिए एक अवसर और चुनौती दोनों के रूप में सामने आया है। एक ओर यह किसानों को अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुँच प्रदान करता है, वहीं दूसरी ओर उन्हें कड़ी प्रतिस्पर्धा और उच्च गुणवत्ता मानकों का सामना भी करना पड़ता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि किसान पारंपरिक खेती से आगे बढ़कर कृषि को एक व्यवसाय के रूप में समझें और उसके अनुसार प्रबंधन की रणनीतियाँ अपनाएँ। सबसे पहले यदि अवसरों की बात करें, तो वैश्वीकरण ने कृषि उत्पादों के लिए नए बाजारों के द्वार खोले हैं। आज भारतीय कृषि उत्पाद जैसे बासमती चावल, मसाले, फल, सब्जियाँ और जैविक उत्पादों की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारी मांग है। इससे किसानों को अपनी उपज के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त करने का अवसर मिलता है। इसके अलावा, निर्यात के माध्यम से विदेशी मुद्रा अर्जित होती है, जो देश की अर्थव्यवस्था को भी सशक्त बनाती है।डिजिटल क्रांति ने भी कृषि व्यवसाय को एक नई गति दी है। ई-नाम (राष्ट्रीय कृषि बाजार), ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स और मोबाइल एप्स के माध्यम से किसान अब सीधे खरीदारों से जुड़ सकते हैं। इससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है और किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य मिलता है। साथ ही, डिजिटल जानकारी के माध्यम से किसान मौसम, बाजार मूल्य और नई तकनीकों की जानकारी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं, जिससे वे बेहतर निर्णय ले पाते हैं।

आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग भी एक महत्वपूर्ण अवसर के रूप में सामने आया है। सटीक कृषि ड्रोन तकनीक, जैविक खेती और उन्नत बीजों के उपयोग से उत्पादन में वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार संभव हुआ है। इससे किसानों की आय बढ़ने के साथ-साथ कृषि अधिक टिकाऊ भी बनती है।हालांकि, इन सभी अवसरों के साथ कई गंभीर चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। वैश्विक बाजार में प्रतिस्पर्धा बहुत अधिक होती है, जहाँ केवल उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद ही टिक पाते हैं। विकसित देशों के किसान उन्नत तकनीकों और अधिक संसाधनों के कारण बेहतर उत्पादन करते हैं, जिससे भारतीय किसानों के लिए प्रतिस्पर्धा करना कठिन हो जाता है।इसके अतिरिक्त, अंतरराष्ट्रीय मानकों और गुणवत्ता नियंत्रण नियमों का पालन करना भी एक बड़ी चुनौती है। निर्यात के लिए उत्पादों को विशेष मानकों जैसे फाइटोसैनिटरी मानकों का पालन करना होता है, जो छोटे और सीमांत किसानों के लिए कठिन हो सकता है। इन मानकों को पूरा करने के लिए तकनीकी ज्ञान और संसाधनों की आवश्यकता होती है, जो हर किसान के पास उपलब्ध नहीं होते। मूल्य अस्थिरता भी एक प्रमुख समस्या है। वैश्विक बाजार में कीमतों में अचानक उतार-चढ़ाव होता रहता है, जिसका सीधा प्रभाव किसानों की आय पर पड़ता है। कई बार किसान अधिक उत्पादन कर लेते हैं, लेकिन बाजार में कीमत गिरने के कारण उन्हें उचित लाभ नहीं मिल पाता। इससे उनकी आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है।जलवायु परिवर्तन भी कृषि व्यवसाय के लिए एक बड़ी चुनौती बनकर उभरा है। अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़ और तापमान में बदलाव जैसी समस्याएँ उत्पादन को प्रभावित करती हैं। इससे कृषि जोखिमपूर्ण हो जाती है और किसानों को नुकसान उठाना पड़ता है।

इन चुनौतियों का समाधान कृषि व्यवसाय प्रबंधन के माध्यम से किया जा सकता है। इसके अंतर्गत किसानों को फसल विविधीकरण अपनाने की सलाह दी जाती है, जिससे वे एक ही फसल पर निर्भर न रहें और जोखिम को कम कर सकें। इसके साथ ही, मूल्य संवर्धन जैसे प्रसंस्करण, पैकेजिंग और ब्रांडिंग के माध्यम से किसान अपनी उपज का मूल्य बढ़ा सकते हैं।किसान उत्पादक संगठन और सहकारी समितियाँ भी किसानों के लिए एक प्रभावी समाधान हैं। इनके माध्यम से छोटे किसान एक साथ मिलकर बड़े बाजारों में अपनी पहुँच बना सकते हैं, संसाधनों का साझा उपयोग कर सकते हैं और बेहतर कीमत प्राप्त कर सकते हैं।सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाएँ भी कृषि व्यवसाय को मजबूत बनाने में सहायक हैं। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, न्यूनतम समर्थन मूल्य (कृषि ऋण और सब्सिडी जैसी योजनाएँ किसानों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती हैं और उन्हें जोखिम से बचाती हैं।

निष्कर्ष: अंत में, यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण के इस युग में कृषि व्यवसाय प्रबंधन किसानों के लिए अत्यंत आवश्यक हो गया है। यह न केवल उन्हें आधुनिक तकनीकों और बाजार की जानकारी प्रदान करता है, बल्कि उन्हें बदलती परिस्थितियों के अनुरूप ढलने में भी सहायता करता है। यदि किसान वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर, आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके और सही प्रबंधन रणनीतियाँ अपनाकर कार्य करें, तो वे वैश्वीकरण की चुनौतियों को अवसरों में बदल सकते हैं और अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं। साथ ही, इससे देश की कृषि और अर्थव्यवस्था दोनों को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण योगदान मिलेगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

खेती में प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन

डॉ. शेष नारायण सिंह (विषय वस्तु विषेषज्ञ कृषि प्रसार)
डॉ. प्रवेश कुमार मृदा विज्ञान
इं. अशोक कुमार पाण्डेय प्रभारी
अधिकारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहना, सिद्धार्थनगर
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या, 224229 (उ.प्र.)

गर्मी में खेत की गहरी जुताई: गर्मियों में खेत की जुताई का अर्थ है- गर्मी के तेज धूप में खेत का गहरी जुताई, मिट्टी पलटकर ऊपर लाना एवं सूर्य की तपती किरण में मिट्टी को कीटाणुरहित करना। भारत में ग्रीष्मकालीन जुताई का प्राथमिक उद्देश्य अगली फसल के लिए मिट्टी तैयार करना है। इस विधि से मिट्टी में पहले से उपस्थित हानिकारक खरपतवारों के बीज, कवक और कीटों के लार्वा धूप में अधिक तापमान से नियंत्रित हो जाते हैं। वैसे गर्मी में खेत की जुताई आमतौर पर ट्रैक्टर से डिस्क प्लाऊ अथवा मोल्डबोल्ड प्लाऊ के माध्यम से करना चाहिए । यदि खेत में नमी है, तो देशी मेस्टन हल का उपयोग कर जुताई किया जा सकता है।

हरी खाद का प्रयोगः- खेती में हरी खाद का महत्व इस वजह से है कि यह मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है। हरी खाद से मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ती है और मिट्टी की संरचना में सुधार होता है। हरी खाद का इस्तेमाल करने से मिट्टी में जीवांष कार्बन की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है एवं मिट्टी से होने वाली बीमारियों और खरपतवारों का नियंत्रण होता है।

हरी खाद के लाभ- हरी खाद के प्रयोग से मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है। हरी खाद के प्रयोग से मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ती है। हरी खाद के प्रयोग से मिट्टी की अम्लीयता और क्षारीयता में सुधार होता है। हरी खाद के प्रयोग से मिट्टी का क्षरण कम होता है। हरी खाद के प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की आवष्यकता कम होती है। हरी खाद के प्रयोग से पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। हरी खाद के प्रयोग से पौधों की गुणवत्ता युक्त वृद्धि होती है।

हरी खाद के लिए दलहनी और गैर-दलहनी फसलों का इस्तेमाल किया जाता है। जैसे कि, ढैंचा, मूंग, उर्द, सनई इत्यादि।

वर्मी कम्पोस्ट: कृषि में वर्मी कंपोस्ट की आवष्यकता इस वजह से है कि यह मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती है और फसलों की बेहतर वृद्धि होती हैं।वर्मीकंपोस्ट को केंचुआ खाद भी कहा जाता है। यह जैविक खेती का अहम हिस्सा है।

वर्मी कंपोस्ट के लाभ-वर्मीकंपोस्ट के प्रयोग से मिट्टी की बनावट बेहतर होती है। इसके प्रयोग से मिट्टी में वायु का संचार बेहतर होता है। वर्मीकंपोस्ट के प्रयोग से मिट्टी की जल अवशोषण और जलधारण क्षमता बढ़ती है। वर्मीकंपोस्ट के प्रयोग से मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ती है। वर्मीकंपोस्ट के प्रयोग से मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है। वर्मीकंपोस्ट से खरपतवार कम उगते हैं और पौधों में रोग कम लगते हैं। वर्मीकंपोस्ट से फसलों की पैदावार गुणवत्ता सुधरती है।

वर्मीकंपोस्ट बनाने के लिए जैविक रूप से अपघटित होने वाले कचरे का इस्तेमाल किया जाता है। जैसे कि फल-सब्जियों के छिलके, कागज, मंडियों का कचरा, पैकिंग का कचरा, पालतू जानवरों का मल-मूत्र (गोबर-मूत्र)। वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए क्षेत्र का आकार आवश्यकतानुसार रखा जाता है किन्तु मध्यम वर्ग के किसानों के लिए 100 वर्गमीटर क्षेत्र पर्याप्त रहता है। अच्छी गुणवत्ता की केंचुआ खाद बनाने के लिए सीमेन्ट तथा इटों से पक्की क्यारियां (Vermi-beds) बनाई जाती हैं। प्रत्येक क्यारी की लम्बाई 3 मीटर, चौड़ाई 1 मीटर एवं ऊँचाई 30 से 50 सेमी. रखते हैं। 100 वर्गमीटर क्षेत्र में इस प्रकार की लगभग 90 क्यारियां बनाई जा सकती है। क्यारियों को तेज धूप व वर्षा से बचाने और केंचुओं के तीव्र प्रजनन के लिए अंधेरा रखने हेतु छप्पर और चारों ओर टाट पट्टियों से हरे नेट से ढकना अत्यन्त आवश्यक है।

फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेष: फसल चक्र में दलहनी फसलों की खेती (मटर, चना, मसूर, राजमा, उड़द, कुलथी, मूंग) महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे मिट्टी में नाइट्रोजन-स्थिर करने वाले जीवाणु के साथ मिलकर खरपतवार को कम करती हैं और मिट्टी को सुदृढ़ करती हैं।

दलहनी फसलों का महत्व, फसल चक्र में इनका इस्तेमाल, और इनकी विषेषता-दलहनी फसलों से फसल चक्र में मिट्टी में पोषक तत्वों की पूर्ति होती हैं। दलहनी फसलों की जड़ों में राइजोबियम जीवाणु होते हैं, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को मिट्टी में स्थिर करतें हैं। दलहनी फसलों के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है। दलहनी फसलों के प्रयोग से मृदा क्षरण कम होता है। दलहनी फसलों के प्रयोग से खेतों में खरपतवार कम उगते हैं। दलहनी फसलों के प्रयोग से खेती में कम सिंचाई की जरूरत होती है।

उपयोगी फसल चक्र- धान-चना-सूर्यमुखी अथवा अगेती धान -सब्जी मटर- गेहूँ अथवा धान-चना-मूँग अथवा गन्ना-गेहूँ-मूँग अथवा मक्का-मटर-मूँग अथवा उर्द-आलू-सरसों।

गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद: गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद का इस्तेमाल जैविक उर्वरक के रूप में किया जाता है। यह मिट्टी की संरचना को सुधारती है और पौधों को जरूरी पोषक तत्व प्रदान करती है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ती है और मिट्टी की उर्वरता भी बढ़ती है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से मिट्टी में वायु संचार बढ़ता है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से मिट्टी में जलधारण क्षमता बढ़ती है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से मिट्टी का कटाव कम होता है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से पौधों की जड़ें अच्छी तरह से विकसित होती हैं और अच्छी तरह पैदावार होती है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से मिट्टी में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है। गोबर एवं कम्पोस्ट की खाद से मिट्टी के प्राकृतिक गुण में सुधार होता है।

अन्तःफसली खेती: कृषि में, बहुफसलीय खेती या मल्टीक्रॉपिंग एक वर्ष के दौरान एक ही भूमि पर एक ही फसल के बजाय दो या दो से अधिक फसलें उगाने की प्रथा है। जब कई फसलें एक साथ उगाई जाती हैं, तो इसे अंतःफसली खेती भी कहा जाता है। यह फसल प्रणाली किसानों को उनकी फसल उत्पादकता और उनकी आय को दोगुना करने में मदद करती है। जैसे- आलू के साथ राई, आलू के साथ गेहूँ, गन्ना के साथ सरसों, गन्ना के साथ गेहूँ, चना के साथ अलसी, रबी मक्का के साथ सब्जी वाली मटर इत्यादि।

फसल अवशेष प्रबंधनः- फसल अवशेष पौधे का वह भाग होता है जो फसल की कटाई और मड़ाई के उपरांत खेत में छोड़ दिया जाता है, जैसे भूसा, तना, डंठल, पत्ते तथा छिलके इत्यादि फसल अवशेष कहलाते हैं। सबसे ज्यादा फसल अवशेष अनाज वाली फसलों में तथा सबसे कम दलहनी फसलों से मिलते हैं। खरीफ सीजन में लगभग 500 लाख टन फसल अवशेष का उत्पादन होता है इन अवशेषों का सिर्फ 20 से 25 प्रतिशत ही इस्तेमाल हो पाता है बाकी को जला दिया जाता है।

फसल अवशेषों को खेत की मिट्टी में मिलाने से लाभ

फसल अवषेष प्रबंधन से कार्बनिक पदार्थ की उपलब्धता में वृद्धि, कार्बनिक पदार्थ ही एकमात्र ऐसा स्रोत है जिसके द्वारा मिट्टी में उपस्थित विभिन्न पोषक तत्व फसलों को उपलब्ध हो पाते हैं। मिट्टी के भौतिक गुणों में सुधार- मृदा में फसल अवशेषों को मिलाने से मृदा की परत में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ने से मृदा की कठोरता कम होती है। मिट्टी की जल धारण क्षमता एवं मिट्टी के वायु संचरण में वृद्धि होती है तथा भूमि से पानी के भाप बनकर उड़ने में कमी आती है। मृदा की उर्वरा शक्ति में सुधार होता है जैसे उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा, विद्युत चालकता एवं मिट्टी का पी.एच. मूल्य नियंत्रित रहता है जिससे फसल को पोषक तत्व आसानी से प्राप्त होता है। अवशेषों को खेतों में आच्छादन के रूप में उपयोग करने से पौधों को वातावरण की विषम परिस्थितियों में जैसे कि ठण्ड एवं लू से बचाया जा सकता है। आच्छादन से भूमि में मौजूद पानी का वाष्पीकरण कम हो जाता है जिससे नमी ज्यादा समय तक बनी रहती है। खरपतवार भी नहीं पनपते और भूमि का तापमान भी अनुकूल बना रहता है। अवशेषों को भूमि में मिलाने से सूक्ष्मजीवों को भोजन एवं आवास मिलने के साथ साथ उनकी संख्या में भी वृद्धि होती है।

जैव उर्वरक का प्रयोग: कृषि में जैविक उर्वरकों का प्रयोग करने से कई फायदे होते हैं। यह उर्वरक पर्यावरण के लिए अनुकूल होते हैं और कम लागत वाले होते हैं। जैविक उर्वरकों का इस्तेमाल करने से मिट्टी की बनावट में सुधार होता है और पौधों की उपज बढ़ती है।

जैविक उर्वरकों के लाभ: जैविक उर्वरकों के इस्तेमाल से फसलों की पैदावार 10-20: तक बढ़ जाती है। इनके प्रयोग से फलों और अनाजों का स्वाद बरकरार रहता है तथा चमकदार अनाज उत्पादन होता है। इनके प्रयोग से जड़ों का विकास तेज होता है। इनके प्रयोग से पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। इसके प्रयोग से पौधे तेज हवा, अधिक बारिश, और सूखे जैसी स्थितियों में भी सहनषील होते हैं। यह उर्वरक मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाये रखने में उपयोगी होता है।जैव उर्वरक राइजोबियम, एजोटोबेक्टर, एजोस्पाइरिलम, फास्फोटिका, नील हरित शैवाल, अजोला निम्न प्रकार उपलब्ध हैं।

जल प्रबन्धनः- जल प्रबन्धन फसलोत्पादन का आधार है। फसलें पोषक तत्वों को घुलनषील रूप में ही ग्रहण करती हैं। जल की अनुपलब्धता में पौधे की समस्त क्रियाएं करना बंद कर देते हैं। ऐसी स्थिति में पौधों की वृद्धि के क्रांतिक अवस्थाओं में जल की पर्याप्त उपलब्धता होनी चाहिए। वर्षा न होने की स्थिति में फसलों की वृद्धि की क्रांतिक दषाओं में अनिवार्य रूप से सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई हल्की की जानी चाहिए, अधिक पानी देने से पौधों की श्वसन क्रिया प्रभावित होती है तथा वह पीले पड़ने लगते हैं। खेत को समतल करें। लेजर लैण्ड लेबलर से समतल किये खेत में 40 प्रतिषत पानी की बचत होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि–पशुपालन एकीकरण से संसाधन दक्षता और आय वृद्धि

राघवेंद्र सिंह पाल, प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)
डॉ. ललित कुमार सनोदिया
डॉ. अखिलेश कुमार सिंह
डॉ. अवनीश यादव सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रस्तावना

भारतीय कृषि प्रणाली में छोटे और सीमांत किसानों की संख्या अधिक है, जहाँ सीमित संसाधनों के साथ अधिक उत्पादन और आय प्राप्त करना एक बड़ी चुनौती है। ऐसे में कृषि और पशुपालन का एकीकृत मॉडल किसानों के लिए एक प्रभावी समाधान बनकर उभर रहा है। यह प्रणाली न केवल संसाधनों का बेहतर उपयोग सुनिश्चित करती है, बल्कि किसानों की आय बढ़ाने और जोखिम को कम करने में भी सहायक होती है।

कृषि-पशुपालन एकीकरण

कृषि-पशुपालन एकीकरण का अर्थ है फसल उत्पादन और पशुधन प्रबंधन को इस प्रकार जोड़ना कि दोनों एक-दूसरे के पूरक बन जाएँ। इस प्रणाली

में खेत और पशु एक साथ कार्य करते हैं, जिससे संसाधनों का अधिकतम उपयोग संभव होता है और अपशिष्ट को भी उपयोगी संसाधन में बदला जा सकता है।इस एकीकृत प्रणाली का सबसे बड़ा लाभ संसाधन दक्षता में वृद्धि है। उदाहरण के लिए, फसलों के अवशेष जैसे भूसा, पत्तियाँ और चारा पशुओं के लिए भोजन का काम करते हैं, वहीं पशुओं से प्राप्त गोबर और मूत्र का उपयोग खेत में जैविक खाद के रूप में किया जाता है। इससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है और मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है।इसके साथ ही, यह प्रणाली पर्यावरण के लिए भी लाभकारी है। गोबर से जैविक खाद और बायोगैस का उत्पादन किया जा सकता है, जिससे ऊर्जा की जरूरत पूरी होती है और प्रदूषण भी कम होता है। इस प्रकार, यह प्रणाली टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देती है।

आय वृद्धि के दृष्टिकोण से भी कृषि-पशुपालन एकीकरण अत्यंत महत्वपूर्ण है। किसान केवल फसलों पर निर्भर न रहकर दूध, अंडा, मांस आदि से अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकता है। इससे आय के स्रोत विविध हो जाते हैं और किसी एक फसल के खराब

होने की स्थिति में भी किसान को आर्थिक सुरक्षा मिलती है।इसके अलावा, यह प्रणाली रोजगार के अवसर भी बढ़ाती है। पशुपालन से जुड़े कार्य जैसे दुग्ध उत्पादन, चारा प्रबंधन, पशु देखभाल आदि ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार प्रदान करते हैं, जिससे पलायन की समस्या भी कम होती है।

हालांकि, इस प्रणाली को अपनाने में कुछ चुनौतियाँ भी हैं। किसानों में तकनीकी जानकारी की कमी, उचित प्रशिक्षण का अभाव, पशु स्वास्थ्य सेवाओं की सीमित उपलब्धता और प्रारंभिक निवेश की समस्या प्रमुख बाधाएँ हैं। लेकिन यदि सरकार और संबंधित संस्थाएँ किसानों को प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और बाजार सुविधा प्रदान करें, तो इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।आज के समय में कई सफल उदाहरण देखने को मिलते हैं, जहाँ किसानों ने एकीकृत कृषि-पशुपालन प्रणाली अपनाकर अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि की है। विशेष रूप से डेयरी, मछली पालन, और बकरी पालन को फसल उत्पादन के साथ जोड़कर बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा रहे हैं।

निष्कर्ष

अंततः, कृषि-पशुपालन एकीकरण एक ऐसा मॉडल है जो सीमित संसाधनों में अधिक उत्पादन, पर्यावरण संरक्षण और किसानों की आय वृद्धि को एक साथ सुनिश्चित करता है। यदि इसे वैज्ञानिक ढंग से अपनाया जाए और उचित समर्थन मिले, तो यह प्रणाली भारतीय कृषि को अधिक लाभकारी और टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

02/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

आम में एपिकोटाइल ग्राफ्टिंग की सफलता पर पौध की जड़ की आयु के प्रभाव का अध्ययन

अश्विनी कुमार फल विज्ञान विभाग, कृषि संकाय
अभिषेक सिंह सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय
प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ. लवकुश पांडेय, डॉ. ललित कुमार सनोदिया
डॉ. अखिलेश कुमार सिंह (सहायक प्रोफेसर)
कृषि संकाय विभाग, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया)
विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

परिचय (Introduction)

आम (Mangifera indica L.) भारत में "फलों का राजा" माना जाता है और इसका आर्थिक एवं पोषणीय महत्व अत्यधिक है। भारत आम का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। उच्च गुणवत्ता वाले फल प्राप्त करने के लिए उन्नत किस्मों का वानस्पतिक (Vegetative) प्रसार आवश्यक होता है।

आम के वानस्पतिक प्रसार के लिए विभिन्न तकनीकें उपयोग की जाती हैं जैसे- * वेनियर ग्राफ्टिंग * स्टोन ग्राफ्टिंग * एपिकोटाइल ग्राफ्टिंग

इनमें एपिकोटाइल ग्राफ्टिंग सबसे तेज और किफायती विधि मानी जाती है। इसमें अंकुरित बीज से प्राप्त छोटे पौधों (Rootstock) पर मनचाही किस्म की टहनी (Scion) को जोड़ा जाता है। ग्राफ्टिंग की सफलता कई कारकों पर निर्भर करती है, जैसे-

* रूटस्टॉक की आयु
* तापमान और आर्द्रता
* स्कायन की गुणवत्ता
* प्रबंधन तकनीकइनमें रूटस्टॉक की आयु एक महत्वपूर्ण कारक है, क्योंकि यह पौधे की वृद्धि और ग्राफ्ट यूनियन के बनने की क्षमता को प्रभावित करती है।

उद्देश्य (Objectives)

इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. विभिन्न आयु के रूटस्टॉक पर एपिकोटाइल ग्राफ्टिंग की सफलता का अध्ययन करना।
2. आम के पौध उत्पादन के लिए उपयुक्त रूटस्टॉक आयु निर्धारित करना।
3. ग्राफ्टेड पौधों की प्रारंभिक वृद्धि का मूल्यांकन करना।

सामग्री एवं विधि

1. **प्रयोग स्थल-** यह प्रयोग फल विज्ञान विभाग के नर्सरी क्षेत्र में किया गया।

2. **पौध सामग्री**

* **रूटस्टॉक:** स्थानीय आम के बीजों से तैयार पौधे
* **स्कायन:** उन्नत किस्म के स्वस्थ पौधों से प्राप्त टहनियाँ

3. उपचार

रूटस्टॉक की विभिन्न आयु के आधार पर चार उपचार निर्धारित किए गए-

उपचार	रूटस्टॉक की आयु
T1	10 दिन
T2	15 दिन
T3	20 दिन
T4	25 दिन

4. ग्राफ्टिंग विधि

अंकुरित बीज से निकले पौधों की शीर्ष भाग (Epicotyl) पर चीरा लगाकर स्कायन को जोड़ा गया औरपॉलीथीन टेप से बांधा गया।

5. प्रेक्षण (Observations)

* ग्राफ्टिंग की सफलता प्रतिशत
* कलिका फूटने का समय
* पौध की ऊँचाई
* पत्तियों की संख्या

6. डेटा विश्लेषण

प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण कर तुलना की गई।

परिणाम एवं चर्चा

प्रयोग के परिणामों से पता चला कि रूटस्टॉक की आयु का ग्राफ्टिंग की सफलता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।

उपचार	ग्राफ्टिंग सफलता (%)
T1 (10 दिन)	55%
T2 (15 दिन)	80%
T3 (20 दिन)	75%
T4 (25 दिन)	60%

* 15 दिन के रूटस्टॉक पर ग्राफ्टिंग की सफलता सबसे अधिक (लगभग 80त्न) पाई गई। इसका कारण यह हो सकता है कि इस अवस्था में पौधे के ऊतक सक्रिय होते हैं और ग्राफ्ट यूनियन जल्दी बनता है।
* 20 दिन के पौधों में भी सफलता अच्छी रही, लेकिन 25 दिन के पौधों में यह कम हो गई। अधिक आयु होने पर तने की कठोरता बढ़ जाती है जिससे ग्राफ्टिंग कठिन हो जाती है।

निष्कर्ष

इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि-

* एपिकोटाइल ग्राफ्टिंग की सफलता रूटस्टॉक की आयु पर निर्भर करती है।
* 15-20 दिन की आयु वाले रूटस्टॉक आम के पौध उत्पादन के लिए सबसे उपयुक्त पाए गए।
* इस तकनीक से कम समय में बड़ी संख्या में गुणवत्तापूर्ण पौधे तैयार किए जा सकते हैं।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

किसानों को फसलों में अधिक लाभ कैसे मिले

आशीष रजक, डॉ. ललित कुमार सनोदिया
डॉ. रवि प्रकाश गुप्ता, डॉ. अवनीश कुमार यादव
डॉ. अखिलेश कुमार सिंह
प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) वि.वि. प्रयागराज (उ.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ अधिकांश किसान अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर हैं। लेकिन बढ़ती लागत, मौसम की अनिश्चितता और बाजार की समस्याओं के कारण किसानों को पर्याप्त लाभ नहीं मिल पाता। ऐसे में सही तकनीकों और योजनाओं को अपनाकर किसान अपनी फसलों से अधिक लाभ कमा सकते हैं।

1. उन्नत बीजों का चयन

अच्छी गुणवत्ता वाले एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग करने से उत्पादन में वृद्धि होती है। उन्नत किस्में रोगों और कीटों के प्रति अधिक सहनशील होती हैं, जिससे नुकसान कम होता है।

2. मृदा परीक्षण और संतुलित उर्वरक उपयोग

मिट्टी की जांच (Soil Testing) करवाकर उसकी उर्वरता के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। इससे फसल की पैदावार बढ़ती है और अनावश्यक खर्च भी कम होता है।

3. आधुनिक सिंचाई तकनीक

ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई जैसी तकनीकों का उपयोग करने से पानी की बचत होती है और फसल की वृद्धि बेहतर होती है। इससे उत्पादन लागत कम होकर लाभ बढ़ता है।

4. फसल विविधीकरण

केवल एक ही फसल पर निर्भर रहने के बजाय किसान विभिन्न फसलें उगाएं, जैसे दलहन, तिलहन और सब्जियाँ। इससे जोखिम कम होता है और आय के स्रोत बढ़ते हैं।

5. जैविक खेती अपनाना

जैविक खेती से उत्पाद की बाजार में अधिक कीमत मिलती है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के स्थान पर जैविक खाद और प्राकृतिक तरीकों का उपयोग करना चाहिए।

6. फसल संरक्षण

कीट एवं रोग नियंत्रण के लिए समय-समय पर निगरानी और उचित उपाय अपनाना जरूरी है। इससे फसल की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों में सुधार होता है।

7. सरकारी योजनाओं का लाभ

सरकार द्वारा किसानों के लिए कई योजनाएं चलाई जा रही हैं, जैसे-

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि (PM-KISAN)
प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (PMFBY)

इन योजनाओं का लाभ उठाकर किसान अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं।

8. बाजार की जानकारी और सही समय पर बिक्री

किसानों को बाजार की कीमतों की जानकारी रखनी चाहिए और फसल को सही समय पर बेचना चाहिए। मंडी के अलावा ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का उपयोग भी लाभकारी हो सकता है।

9. भंडारण और प्रसंस्करण

फसल को तुरंत बेचने के बजाय सही तरीके से भंडारण करने पर बेहतर कीमत मिल सकती है। साथ ही, प्रसंस्करण (Processing) से उत्पाद का मूल्य बढ़ाया जा सकता है।

निष्कर्ष

यदि किसान आधुनिक तकनीकों, उन्नत बीजों, संतुलित उर्वरकों और सरकारी योजनाओं का सही उपयोग करें, तो वे अपनी फसलों से अधिक लाभ कमा सकते हैं। खेती को वैज्ञानिक और व्यावसायिक दृष्टिकोण से अपनाना आज के समय की आवश्यकता है।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कार्यस्थल में कार्यरत वयस्कों में चिंता और लैंगिक अंतर: एक संक्षिप्त अध्ययन

सबा खान गृह विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

सार (Abstract)

चिंता (Anxiety) विश्व स्तर पर एक प्रमुख मानसिक स्वास्थ्य समस्या है, जिसका प्रभाव विशेष रूप से कार्यरत वयस्कों में अधिक देखा जाता है। विभिन्न शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि कार्यस्थल पर चिंता के स्तर में लैंगिक अंतर महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रस्तुत संक्षिप्त अध्ययन में वर्ष 2000 से 2025 तक प्रकाशित शोधों के आधार पर कार्यरत पुरुषों और महिलाओं में चिंता के स्तर, उसके कारणों तथा प्रभावों का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन से यह पाया गया कि महिलाओं में चिंता का स्तर पुरुषों की तुलना में अधिक होता है। इसके प्रमुख कारणों में कार्य-परिवार संतुलन का दबाव, भावनात्मक श्रम, असमान कार्य परिस्थितियाँ तथा सामाजिक अपेक्षाएँ शामिल हैं। वहीं पुरुषों में चिंता का संबंध अधिकतर नौकरी की असुरक्षा, आर्थिक जिम्मेदारियों और प्रदर्शन के दबाव से जुड़ा पाया गया। कार्यस्थल के प्रमुख तनाव कारकों में अत्यधिक कार्यभार, शिफ्ट ड्यूटी, प्रबंधकीय सहयोग की कमी, तथा कार्य-जीवन असंतुलन प्रमुख हैं। यह अध्ययन यह भी दर्शाता है कि लैंगिक संवेदनशील नीतियों और मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों की आवश्यकता है, जिससे कार्यस्थल को अधिक सुरक्षित और सहायक बनाया जा सके।

मुख्य शब्द: चिंता, लैंगिक अंतर, कार्यस्थल, मानसिक स्वास्थ्य, कार्य तनाव

परिचय (Introduction)

चिंता विकार आज के समय में सबसे सामान्य मानसिक समस्याओं में से एक है, जो कार्यरत वयस्कों के जीवन और कार्यक्षमता को प्रभावित करता है। आधुनिक कार्यस्थल में बढ़ते दबाव, प्रतिस्पर्धा, नौकरी की अनिश्चितता तथा तकनीकी बदलावों के कारण कर्मचारियों में तनाव और चिंता का स्तर बढ़ रहा है। लैंगिक दृष्टिकोण से देखें तो महिलाओं और पुरुषों में चिंता के अनुभव और अभिव्यक्ति में अंतर पाया जाता है। महिलाएँ अक्सर अधिक भावनात्मक दबाव, पारिवारिक जिम्मेदारियों और सामाजिक अपेक्षाओं के कारण अधिक चिंता का अनुभव करती हैं। वहीं पुरुषों में चिंता का प्रमुख कारण आर्थिक जिम्मेदारी और कार्य प्रदर्शन से जुड़ा होता है। इस अध्ययन का उद्देश्य कार्यस्थल पर चिंता के स्तर में लैंगिक अंतर को समझना तथा उसके प्रमुख कारणों का विश्लेषण करना है।

विधि (Methodology)

यह अध्ययन एक संक्षिप्त साहित्य समीक्षा (Short Review) पर आधारित है, जिसमें 2000 से 2025 तक प्रकाशित शोधों का विश्लेषण किया गया।

* अध्ययन में केवल कार्यरत वयस्कों (18-65 वर्ष) को शामिल किया गया।
* चयनित शोधों में पुरुष और महिला दोनों के लिए अलग-अलग डेटा उपलब्ध था।
* प्रमुख स्रोतों में PubMed, Scopus, Web of Science आदि शामिल रहे।
* चिंता को मापने के लिए मानकीकृत उपकरणों जैसे GAD-7, HAM-A आदि का उपयोग किया गया।

परिणाम एवं चर्चा (Results and Discussion)

1. लैंगिक आधार पर चिंता का स्तर

* अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि अधिकांश शोधों में महिलाओं में चिंता का स्तर पुरुषों की तुलना में अधिक पाया गया। कई देशों में यह अंतर 10-20% तक देखा गया।

2. कार्यस्थल के प्रमुख तनाव कारक

* अत्यधिक कार्यभार * शिफ्ट कार्य
* नौकरी की असुरक्षा * प्रबंधकीय सहयोग की कमी * कार्य-परिवार असंतुलन

महिलाओं में विशेष रूप से "डबल बर्डन" (घर और काम दोनों का दबाव) चिंता का मुख्य कारण है।

3. पुरुषों और महिलाओं में अंतर

* **महिलाएँ:** भावनात्मक दबाव, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ
* **पुरुष:** आर्थिक दबाव, नौकरी की असुरक्षा

4. सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव

सामाजिक मान्यताएँ भी चिंता को प्रभावित करती हैं। पुरुष अक्सर अपनी भावनाओं को व्यक्त नहीं करते, जिससे चिंता छिपी रह सकती है।

निष्कर्ष (Conclusion)

यह अध्ययन दर्शाता है कि कार्यस्थल पर चिंता एक गंभीर समस्या है, जिसमें लैंगिक अंतर स्पष्ट रूप से देखा जाता है। महिलाओं में चिंता का स्तर अधिक होने के पीछे सामाजिक, पारिवारिक और कार्य संबंधी कारक जिम्मेदार हैं, जबकि पुरुषों में आर्थिक और पेशेवर दबाव प्रमुख कारण हैं।

इसलिए आवश्यक है कि कार्यस्थल पर लैंगिक संवेदनशील नीतियाँ, मानसिक स्वास्थ्य सहायता सेवाएँ तथा संतुलित कार्य वातावरण विकसित किया जाए।

भविष्य की दिशा (Future Scope)

* दीर्घकालिक (Longitudinal) अध्ययन किए जाएं।
* गैर-द्विआधारी (Non-binary) लैंगिक समूहों को शामिल किया जाए।
* विकासशील देशों में अधिक शोध की आवश्यकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

फलों और सब्जियों का तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

डॉ तेजराज सिंह हाड़ा सहायक आचार्य (उद्यान विज्ञान), बलवंत विद्यापीठ रूरल इंस्टिट्यूट, बिचपुरी, आगरा (उ.प्र.)

फलों और सब्जियों में नुकसान बहुत ज़्यादा (20-40%) होता है। लगभग 10-15% ताज़े फल और सब्जियां मुरझाकर बासी हो जाती हैं, जिससे उनकी मार्केट वैल्यू और कस्टमर उन्हें पसंद नहीं करते। इन नुकसानों को कम करने से खेती के लिए और ज़मीन लाए बिना उनकी सप्लाई बढ़ाई जा सकती है। इससे प्रदूषण को कंट्रोल में रखने में भी मदद मिलेगी। गलत तरीके से संभालने और स्टोर करने से टिशू टूटने के कारण फिजिकल नुकसान होता है। मैकेनिकल नुकसान में चोट लगना, फटना, कटना, फंगस और बैक्टीरिया से माइक्रोबियल खराब होना शामिल है, जबकि फिजिकल नुकसान में सांस लेने, ट्रांसपिरेशन, पिगमेंट, ऑर्गेनिक एसिड और स्वाद में बदलाव शामिल हैं। लगभग 36% सब्जियां सॉफ्ट-रॉट बैक्टीरिया के कारण खराब होती हैं, जबकि 30% फल पेनिसिलियम स्पीशीज़ के कारण खराब होते हैं। सही प्री-हार्वेस्ट और पोस्टहार्वेस्ट ट्रीटमेंट से नुकसान को कम किया जा सकता है।

कटाई से पहले के फैक्टर :

किस्मों का चुनाव : ऐसी किस्में जो ज़्यादा पैदावार दें, बेहतर रखने की क्वालिटी दें, धीरे पकें और आस-पास के हालात में ज़्यादा शेल्फ-लाइफ़ दें और बेहतर प्रोसेसिंग क्वालिटी दें, उन्हें डेवलप करके कमर्शियली उगाया जाना चाहिए।

कल्चरल ऑपरेशन : कल्चरल ऑपरेशन फलों और सब्ज़ियों की शेल्फ-लाइफ़ बढ़ाने में मदद करते हैं। फ्रूनिंग या थिनिंग से फलों का साइज़ बढ़ता है और TSS और एसिडिटी कम होती है। जब ट्राइफोलिएट ऑरेंज, टैंगेलो या क्लियोपेट्रा को रूटस्टॉक के तौर पर इस्तेमाल किया जाता है, तो खट्टे फलों की कटाई के बाद की क्वालिटी काफ़ी बढ़ जाती है। K, Mg और Zn के इस्तेमाल से फलों की क्वालिटी बेहतर होती है, जबकि ज़्यादा N और P से क्वालिटी खराब होती है। कटाई से पहले ज़्यादा सिंचाई से शेल्फ-लाइफ़ और सेंसरी क्वालिटी कम हो जाती है, जबकि कम सिंचाई से फसल की मैच्योरिटी बढ़ जाती है। जड़ वाली फसलों के लिए, जड़ों को कांटेदार होने से बचाने के लिए मिट्टी को अच्छी तरह से तैयार करना ज़रूरी है। अनियमित सिंचाई से गाजर और मूली फट जाती हैं और प्याज़ के बाहरी छिलके फट जाते हैं। प्याज और लहसुन में, बेहतर क्वालिटी बनाए रखने के लिए कटाई से 3 हफ़्ते पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। नाइट्रोजन वाले फ़र्टिलाइज़र का ज़्यादा इस्तेमाल करने से टिशू तेज़ी से खराब होते हैंद्य पत्तागोभी में मोलिब्डेनम की कमी से हार्ट-रॉट होता है, मटर में मैंगनीज़ की कमी से दलदली धब्बे पड़ते हैं और ज़्यादा सिंचाई और फ़र्टिलाइज़र से आलू में खोखला हार्ट होता है।

कटाई से पहले के ट्रीटमेंट : फलों और सब्ज़ियों की कटाई के बाद की शेल्फ़-लाइफ़, कटाई से पहले केमिकल के इस्तेमाल से बेहतर होती है। कटाई से पहले 15 दिनों के गैप पर टॉप्सिन-रू (0.1%) या बाविस्टिन (0.1%) के तीन स्प्रे आम में एन्थ्रेक्नोज़ और स्टेम-एंड रॉट को कंट्रोल कर सकते हैं। इसी तरह, नागपुर मैंडरिन की कटाई के बाद की सड़न को 15 दिनों के गैप पर 0.1% बेनलेट या 0.1% टॉप्सिन-रूया 0.1% बाविस्टिन के 3 प्रीहार्वेस्ट स्प्रे से कंट्रोल किया जा सकता है। कटाई से पहले मैलिक हाइड्राज़ाइड का इस्तेमाल स्टोरेज के दौरान प्याज़ और आलू में स्प्राउटिंग को कम करता है। रबी और खरीफ प्याज में, रोपाई के 75-90 दिन बाद 1,500-2,000ppm मैलिक हाइड्राज़ाइड का इस्तेमाल करने से हवादार जगहों पर 4-5 महीने तक स्टोर करने पर अंकुरण कम हो जाता है। टमाटर और प्याज की कटाई के बाद की बीमारियों को 10 दिन के गैप पर 0.2% डाइफोलाटन के 3 प्रीहार्वेस्ट स्प्रे से कंट्रोल किया जा सकता है।

परिपक्वता: फलों की कटाई के बाद की गुणवत्ता और स्टोरेज लाइफ परिपक्वता से कंट्रोल होती है। अगर फलों को परिपक्वता के सही स्टेज पर तोड़ा जाए, तो उनकी क्वालिटी बहुत अच्छी होती है। सब्ज़ियों को तब तोड़ा जाता है जब वे अपने सबसे बड़े साइज़ की हो जाती हैं और फिर भी नरम होती हैं। जड़ वाली फसलों में ज़्यादा मैच्योरिटी से वे स्पंजी और गूदेदार हो जाती हैं। उनकी कटाई में देरी नहीं करनी चाहिए। प्याज़ और लहसुन की कटाई में देरी से उनकी स्टोरेज क्वालिटी कम हो जाती है। कटाई दिन के ठंडे समय में करनी चाहिए। फल को जितनी जल्दी हो सके छाया में ले जाना चाहिए। गर्मी के मौसम में कटाई करने से खेत की गर्मी बढ़ जाती है, जिससे फल मुरझा जाते हैं और सिकुड़ जाते हैं। बारिश के दौरान या उसके तुरंत बाद कटाई नहीं करनी चाहिए क्योंकि इससे माइक्रो-ऑर्गेनिज़्म के बढ़ने के लिए सबसे अच्छे हालात बनते हैं। अगर बारिश के दौरान खट्टे फल तोड़े जाएं तो वे खराब हो सकते हैं क्योंकि उनका छिलका फूल जाता है और आसानी से चोट लगने, धूप से झुलसने और ओलियोसेलोसिस (एपिडर्मल ऑयल सेल्स को नुकसान) का खतरा रहता है।

कटाई के बाद के फैक्टर :

क्योरिंग : कटाई के तुरंत बाद क्योरिंग की जाती है। इससे स्किन मज़बूत होती है। यह प्रोसेस काफ़ी ज़्यादा तापमान और आद्रता पर होता है, जिसमें बाहरी टिशू का सबराइज़ेशन होता है, जिसके बाद घाव का पेरिडर्म बनता है जो इन्फेक्शन और पानी की कमी के खिलाफ एक असरदार बैरियर का काम करता है। इसके लिए ज़्यादा टेम्परेचर और ज़्यादा ह्यूमिडिटी अच्छी होती है। आलू, शकरकंद, अरबी, प्याज़ और लहसुन को स्टोरेज या मार्केटिंग से पहले क्योरिंग किया जाता है। शकरकंद में, यह कंडीशन 33°C और 95% की रिलेटिव ह्यूमिडिटी पर सबसे तेज़ होती है। आलू के कंदों को 2 दिनों के लिए 18°C पर और फिर 90% रिलेटिव ह्यूमिडिटी पर 10-12 दिनों हेतु 7°-10°C पर रखा जाता है। क्योरिंग से नमी की मात्रा भी कम हो जाती है, खासकर प्याज़ और लहसुन में। प्याज़ के बल्ब की ऊपरी पत्तियों को सुखाने से उन्हें स्टोरेज में माइक्रोबियल इन्फेक्शन से बचाया जा सकता है। खेत में प्याज़ क्योरिंग के लिए ज़्यादा से ज़्यादा सुरक्षित तापमान 3-5 दिनों हेतु 37.8°C है। प्याज को क्रेट में 40°C पर 16 घंटे तक आर्टिफिशियल तरीके से पकाने से स्टोरेज में सड़न कम होती है।

डिग्रीनिंग: डिग्रीनिंग फलों में हरे पिगमेंट को डीकंपोज़ करने का प्रोसेस है, जिसमें आमतौर पर एथिलीन या दूसरे ऐसे ही मेटाबोलिक इंड्यूसर का इस्तेमाल करके फल को उसका खास रंग दिया जाता है, जैसा कि कंज्यूमर पसंद करते हैं। यह केला, आम, खट्टे फल और टमाटर पर लागू होता है। किसी फल को डिग्रीनिंग करने में लगने वाला समय उसके नेचुरल रंग टूटने और मैच्योर होने की डिग्री पर निर्भर करता है। फल का रंग जितना ज़्यादा हरा और मैच्योर होगा, क्लोरोफिल को मनचाहे लेवल तक कम करने में उतना ही कम समय लगेगा। डिग्रीनिंग खास ट्रीटमेंट रूम में कंट्रोल्ड टेम्परेचर और ह्यूमिडिटी के साथ की जाती है, जिसमें एथिलीन (20 ppm) की कम सांद्रता डाली जाता है। एथिलीन की सप्लाई गैस सिलेंडर से की जानी चाहिए। इन कमरों में CO, लेवल को 1% से नीचे रखने के लिए अच्छी तरह से वेंटिलेशन होता है, जिससे रंग ज़्यादा नहीं आता। अगर केरोसिन का धुआं डिग्रीनिंग रूम के बाहर रखा जाता है, तो वह डक्ट के ज़रिए फोर्स्ड वेंटिलेशन से कमरे में अंदर आ जाता है। आग लगने का खतरा होने के बावजूद, केरोसिन के धुएं से शुद्ध एथिलीन के मुकाबले फलों का रंग बेहतर होता है। ऐसा अच्छे वेंटिलेशन की वजह से होता है। सबसे अच्छा डिग्रीनिंग टेम्परेचर 27°C है। ज़्यादा तापमान डिग्रीनिंग में देरी करता है। रिलेटिव ह्यूमिडिटी 85-90% होनी चाहिए। ज़्यादा ह्यूमिडिटी लेवल डिग्रीनिंग के दौरान कंडेंसेशन का कारण बनता है और इससे डिग्रीनिंग धीमी होती है और सड़न बढ़ती है। हालांकि कम ह्यूमिडिटी सड़न को रोकती है, लेकिन बहुत ज़्यादा सिकुड़न और छिलका टूटने का कारण बनती है।

प्री-कूलिंग : ज़्यादा तापमान फलों और सब्ज़ियों की क्वालिटी बनाए रखने के लिए नुकसानदायक होता है। खासकर जब कटाई गर्मी के दिनों में की जाती है। प्रीकूलिंग खेत की गर्मी को हटाने का एक तरीका है। यह उपज की सांस लेने की प्रक्रिया को धीमा कर देता है, माइक्रोऑर्गेनिज़्म के हमले की संभावना को कम करता है, पानी की कमी को कम करता है और स्टोरेज या ट्रांसपोर्ट के कूलिंग सिस्टम पर लोड को कम करता है। मटर और भिंडी जो जल्दी खराब हो जाते हैं, उन्हें तुरंत ठंडा करने की ज़रूरत होती है। कभी-कभी पकने का स्टेज और उपज के खेत की गर्मी का लेवल भी प्रीकूलिंग की ज़रूरत तय करता है। उदाहरण के लिए, जब तक टमाटर 26.7°C से ऊपर न हों और पकने में देरी हो, तब तक प्रीकूलिंग की कोई ज़रूरत नहीं है। एयर कूलिंग में, कोल्ड स्टोरेज से ठंडी हवा मिल सकती है। जमने से बचने के लिए तापमान -1°C से कम नहीं होना चाहिए। जहां रात का तापमान कम होता है, वहां रात में ठंडा करने के लिए स्टोर रूम के दरवाज़े खोले जा सकते हैं। वॉटर कूलिंग (हाइड्रोकूलिंग) में, खेत की गर्मी जल्दी निकल जाती है। इसका इस्तेमाल पत्तेदार सब्ज़ियों के लिए उनका तापमान और ताज़गी बनाए रखने के लिए किया जाता है। तापमान कम करने के लिए बर्फ़ डाली जा सकती है। लेकिन, ठंड से सेंसिटिव फलों और सब्ज़ियों में ठंड लगने से होने वाले नुकसान से बचने के लिए तापमान को कंट्रोल करना चाहिए। 500 ppm बाविस्टिन के साथ 12°-15°C पर हाइड्रोकूलिंग करने से आम की शेल्फ-लाइफ़ बढ़ जाती है। अल्फांसो आम में, यह स्पंजी टिशू के मामले को भी कम करता है।

धोना और सुखाना : ज़्यादातर फलों और सब्ज़ियों को कटाई के बाद धोया जाता है ताकि उनका लुक बेहतर हो, वे मुरझाएं नहीं और माइक्रो-ऑर्गेनिज़्म के प्राइमरी इनोकुलम लोड को हटाया जा सके। इसलिए धोने के पानी में फंगीसाइड/बैक्टीरियासाइड का इस्तेमाल करना चाहिए। धोने से केले के पकने में देरी होती है और उनकी शेल्फ-लाइफ़ बेहतर होती है। धोने के बाद, ज़्यादा पानी निकाल देना चाहिए, नहीं तो माइक्रोबियल खराब हो सकते हैं। जड़ और कंद वाली फसलों को अक्सर धोया जाता है ताकि उनसे चिपकी मिट्टी हट जाए।

छँटाई और ग्रेडिंग : कच्चे, बीमार और बुरी तरह से खराब फलों और सब्ज़ियों को छाँटा जाता है। ज़्यादातर देशों के घरेलू व्यापार के अपने स्टैंडर्ड होते हैं और इंटरनेशनल व्यापार के लिए भी स्टैंडर्ड तय किए गए हैं। ग्रेड साइज़, वज़न, रंग और शेप के आधार पर दिए जाते हैं। ग्रेडिंग हाथ से या मशीन से की जाती है।

कीटाणुनाशक : पपीता, आम, खरबूज़ा और दूसरे फल फ्रूट फ्लाई के हमले के लिए कमज़ोर होते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

पोषक तत्व दक्षता हेतु जैव उर्वरक व बायोस्टिमुलेंट्स का एकीकृत उपयोग

मुस्कान सिन्हा सस्य विज्ञान विभाग
हर्षित सिंह सस्य विज्ञान विभाग
अनुराग सिंह मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग
क्रोनी सिंह, महिमा देवी सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज,अयोध्या (उ.प्र.)

प्रस्तावना: सतत कृषि को बढ़ावा देने के लिए पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता को अनुकूलित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता से तात्पर्य किसी पौधे की पोषक तत्वों का कुशलतापूर्वक उपयोग करके वृद्धि और उत्पादकता बढ़ाने तथा पर्यावरणीय नुकसान को कम करने की क्षमता से है। हाल के वर्षों में जैव उर्वरक पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता बढ़ाने की एक कारगर रणनीति के रूप में उभरे हैं। पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता की अवधारणा, सतत कृषि में इसके महत्व और जैव उर्वरकों द्वारा पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता में सुधार के संभावित तरीकों का विश्लेषण किया गया है। फसलों में पोषक तत्व उपयोग दक्षता बढ़ाने और टिकाऊ खेती हेतु जैव उर्वरकों (जैसे Azotobacter, PSB) और बायोस्टिमुलेंट्स (ह्यूमिक एसिड, सीवीड अर्क) का एकीकरण एक प्रभावी दृष्टिकोण है। यह संगम सूक्ष्मजीव गतिविधि को बढ़ाकर, जड़ों का विकास कर और पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाकर उपज में 25-40% तक वृद्धि कर सकता है साथ ही रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करता है।

जैव उर्वरक लाभकारी सूक्ष्मजीवों से युक्त जीवित यौगिक होते हैं, विशेष रूप से पादप वृद्धि संवर्धक राइजोबैक्टीरिया, कवक और शैवाल जो पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाते हैं, फसल उत्पादकता में वृद्धि करते हैं और पर्यावरण की दृष्टि से टिकाऊ तरीके से मृदा स्वास्थ्य में सुधार करते हैं। 2050 तक वैश्विक जनसंख्या 10 अरब के करीब पहुंचने के साथ ये सूक्ष्मजीव युक्त उर्वरक जो पर्यावरण प्रदूषण और मृदा क्षरण का कारण बनते हैं, कृत्रिम उर्वरकों के स्थान पर तेजी से महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं। जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों की तुलना में अधिक सुरक्षित होते हैं क्योंकि ये पर्यावरण को कम नुकसान पहुँचाते हैं, अधिक लक्षित प्रभाव दिखाते हैं, और कम मात्रा में भी अधिक प्रभावी होते हैं। इसके अलावा, ये सूक्ष्मजीव बढ़ने की क्षमता रखते हैं और पौधों तथा स्थानीय सूक्ष्मजीवों द्वारा नियंत्रित भी होते हैं। साथ ही, ये तेजी से अपघटन करते हैं और रोगजनकों तथा कीटों में प्रतिरोध विकसित होने की संभावना कम होती है।

बायोइनोकुलेंट्स मिट्टी, पौधों और पशुओं के जीवन पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं डालते है क्योंकि ये पर्यावरण के अनुकूल अत्यधिक प्रभावी होते हैं और इन्हें जैव कीटनाशक के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है, जो पौध उत्पादों पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं डालते। पौधों को खनिज पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है, जो रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ जैव उर्वरकों और जैविक खाद के उपयोग से उपलब्ध कराए जा सकते हैं। इससे मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ती है और फसलों की स्थिरता बनी रहती है। सूक्ष्मजीव इनोकुलेंट्स ऐसे जीव होते हैं जिन्हें किसी विशेष उद्देश्य के लिए वातावरण में डाला जाता है, इनमें बैक्टीरिया, फफूंद और अन्य सूक्ष्मजीव शामिल होते हैं। जैव उर्वरक शब्द उन उत्पादों के लिए उपयोग किया जाता है जिनमें जीवित या सुप्त सूक्ष्मजीव होते हैं जैसे बैक्टीरिया, फफूंद, एक्टिनोमाइसीट्स और शैवाल। इनका प्रयोग करने पर ये वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करते हैं, मिट्टी के पोषक तत्त्वों को घुलनशील या गतिशील बनाते हैं तथा पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थ स्रावित करते हैं। आजकल जैव उर्वरक और जैव कीटनाशक पारंपरिक अकार्बनिक उर्वरकों और रासायनिक कीटनाशकों के विकल्प के रूप में उपलब्ध हैं।

जैव उर्वरकों का वैश्विक बाजार: जिसकी कीमत 2018 में 1.57 बिलियन अमेरिकी डॉलर थी, 2022 से 2027 के बीच 12.1% की वार्षिक वृद्धि दर से बढ़ने की संभावना है। वर्तमान में इस क्षेत्र में कई छोटी और कुछ बड़ी कंपनियाँ कार्य कर रही हैं जिससे यह बाजार काफी विखंडित है। यदि इस क्षेत्र में कड़े नियम लागू किए जाते हैं, तो भविष्य में यह बाजार अधिक संगठित हो सकता है, जैसा कि वैश्विक स्तर पर जैव कीटनाशकों के बाजार में देखा गया है।

पोषक तत्व उपयोग दक्षता में बायोफर्टिलाइज़र की भूमिका: बायोफर्टिलाइज़र (जैव-उर्वरक) मिट्टी में सूक्ष्मजीवों के माध्यम से पोषक तत्वों (नाइट्रोजन, फास्फोरस) को घुलनशील बनाकर और वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करके पौधों को उपलब्ध कराते हैं। ये रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता को 25त्न तक कम करते हैं, जड़ तंत्र को मजबूत करते हैं, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करते हैं और पोषक तत्व उपयोग दक्षता बढ़ाते हैं।

नाइट्रोजन स्थिरीकरण : Rhizobium, Azotobacter और नीली-हरी शैवाल (Blue-green algae) हवा से नाइट्रोजन लेकर उसे पौधों के उपयोग योग्य रूप में बदलते हैं, जिससे नाइट्रोजन की दक्षता बढ़ती है।

फास्फोरस घुलनशीलता : पीएसबी (PSB - Phosphate Solubilizing Bacteria) मिट्टी में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस को घोलकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं।

पोषक तत्वों का गतिशीलता: माइकोराइजा कवक मिट्टी से फास्फोरस, जस्ता और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को अवशोषित कर जड़ों तक पहुँचाते हैं, जिससे अवशोषण बढ़ता है।

जड़ों का विकास: ये सूक्ष्मजीव ऑक्सीजन और साइटोकिनिन जैसे हार्मोन पैदा करते हैं, जो जड़ों को मजबूत बनाकर पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाते हैं।

रासायनिक खादों पर निर्भरता में कमी: ये उर्वरकों के रिसाव को रोकते हैं और मिट्टी में पोषक तत्वों को लंबे समय तक बनाए रखते हैं।

बायोफर्टिलाइज़र के मुख्य प्रकार:

राइजोबियम: दलहनी फसलों के लिए।

एज़ोटोबैक्टर/एज़ोस्पिरिलम: गेहूँ, मक्का, कपास जैसी गैर-दलहनी फसलों के लिए ।

पीएसबी (PSB): सभी फसलों में फास्फोरस की उपलब्धता हेतु।

बायोफर्टिलाइज़र के फायदे:

* फसल की पैदावार 20-30% तक बढ़ती है।
* मिट्टी की जैविक उर्वरता और संरचना में सुधार होता है।
* बायोस्टिमुलेंट्स :-मिट्टी की सक्रियता बढ़ाकर, जड़ों का विकास तेज करके और पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाकर पोषण उपयोग दक्षता में सुधार करते हैं। ये सूखा या गर्मी जैसे तनावों में भी पौधों को पोषक तत्व ग्रहण करने में मदद करते हैं, जिससे रासायनिक उर्वरकों की निर्भरता कम होती है और पैदावार बढ़ती है।

पोषक तत्व उपयोग दक्षता सुधारने में बायोस्टिमुलेंट्स की प्रमुख भूमिका:

जड़ प्रणाली का विकास: बायोस्टिमुलेंट्स जड़ों की लंबाई और घनत्व बढ़ाते हैं, जिससे पौधों को मिट्टी में अधिक गहराई और क्षेत्रफल से पोषक तत्व व पानी सोखने में मदद मिलती है।

पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि: ये मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीवों को सक्रिय करते हैं जो अघुलनशील पोषक तत्वों (जैसे फास्फोरस) को घुलनशील रूप में बदलकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं।

तनाव सहनशीलता: सूखे, अत्यधिक गर्मी, ठंड या लवणता जैसी विपरीत परिस्थितियों में, जब पौधे सामान्य रूप से पोषक तत्व नहीं ले पाते तब बायोस्टिमुलेंट्स चयापचय को सुचारू रखकर अवशोषण जारी रखते हैं।

आधुनिक कृषि में उर्वरकों का उपयोग अत्यधिक अल्प-प्रभावी है उर्वरकों का एक बड़ा भाग पर्यावरण में निकल जाता है, जिससे पर्यावरणीय क्षरण होता है। उर्वरक उपयोग को बिना पौधों के पोषण को नुकसान पहुँचाए कम करने का एक तरीका यह है कि बायोस्टिमुलेंट्स के उपयोग द्वारा फसलों की पोषक तत्त्वों को अवशोषित करने की क्षमता को बढ़ाया जाए। बायोस्टिमुलेंट्स के प्रयोग से पौधों द्वारा पोषक तत्त्वों के अवशोषण पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभावों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। इसके अंतर्गत कार्य करने वाले तंत्र भी शामिल हैं, जैसे मिट्टी की संरचना में सुधार, पोषक तत्त्वों की घुलनशीलता में वृद्धि, जड़ों की संरचना में परिवर्तन, पौधों की शारीरिक क्रियाओं में सुधार तथा सहजीवी संबंधों का विकास।

भविष्य के अनुसंधान के लिए सुझावों में सबसे प्रभावी पदार्थों की पहचान करना, सक्रिय अवयवों को अलग करना तथा यह स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करना शामिल है कि ये पोषक तत्त्वों के अवशोषण को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। इन लाभकारी प्रभावों और तंत्रों को ग्रीनहाउस तथा खेतों के प्रयोगों में लगातार और विश्वसनीय रूप से प्रमाणित किया जाना आवश्यक है।

निष्कर्ष- जैव उर्वरक और बायोस्टिमुलेंट्स का उपयोग मृदा सूक्ष्मजीवों को सक्रिय कर, पोषक तत्वों की घुलनशीलता बढ़ाकर और जड़ प्रणाली को मजबूत करके पोषक तत्व उपयोग दक्षता में वृद्धि करता है। यह तकनीक न केवल रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करती है बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता के साथ फसल की उपज और गुणवत्ता भी बढ़ाती है। जैव उर्वरक और बायोस्टिमुलेंट्स मिट्टी के स्वास्थ्य को बहाल करते हैं और पौधों को प्रतिकूल पर्यावरणीय तनाव (सूखा, गर्मी) में भी पोषक तत्वों को बेहतर ढंग से अवशोषित करने में मदद करते हैं, यह मिट्टी में पोषक तत्वों को घुलनशील बनाकर और जड़ों के सतही क्षेत्रफल को बढ़ाकर, रसायनों की बर्बादी को रोकते हैं। इनका उपयोग कृषि की लागत कम करता है और सिंथेटिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से होने वाले प्रदूषण को कम करके एक सुरक्षित पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

जायद मूंग एवं उड़द में रसचूशक कीटों का समेकित प्रबंधन

डॉ. कैलाश चन्द्र अहीर सहायक आचार्य (कीट विज्ञान) कृषि अनुसंधान उपकेन्द्र, अकलेरा (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा)

डॉ. सीताराम यादव राजकीय कृषि महाविद्यालय, नावा (राज.)

पौध संरक्षण रसायनों का अंधाधुंध उपयोग होने से पर्यावरण में असंतुलन के साथ फसल लागत एवं कीटों में प्रतिरोधकता को बढावा मिलता है। नई तकनीकों का विकास तो कर रहे हैं, किन्तु साथ ही इन तथ्यों पर भी ध्यान रखना अति आवश्यक हो गया है कि फसलों में हानिकारक जीवों व रोगजनकों की संख्या निर्धारित आर्थिक क्षति स्तर से ऊपर बढ रही है या नहीं। प्रबंधन की नई तकनीकों में जीवो एवं नाशी कीटों की पारस्परिक निर्भरता एवं वातावरण में स्वच्छता व सुरक्षा पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है। पर्यावरण एवं वातावरण का दूषित होना, सामाजिक, आर्थिक एवं नैतिक दृष्टि से अपराध है, यही कारण है कि विश्वभर में विषैले रसायनों का कम उपयोग, जैविक एवं पारस्परिक तकनीकों से किया जाने वाला फसल संरक्षण लोकप्रिय हो रहा है, जिसे समेकित नाशीजीव प्रबंधन कहते है।

जायद में दलहनी फसल के रूप में मूंग एवं उड़द की खेती मुख्य रूप से की जाती है। मूंग एवं उड़द में सामान्यतया रस चूषक कीटों का प्रकोप अधिक होता है, जिसके कारण पौधे का विकास पूर्ण रूप से नही हो पाता और उपज में कमी आती है। मूंग एवं उड़द की फसल में लगने वाले मुख्य रस चूषक कीट निम्न है:

1 चैपा /मोयला: एफिस क्रासीवोरा

पोषक पौधे: मूंग, उडद, मटर आदि।

क्षति प्रवृति: शिशु व प्रौढ द्वारा रस चूसना।

पहचान के लक्षण: इस कीट की शिशु भूरे रंग का होता है तथा पंख वाले वयस्क में पंख काले रंग के होते है।

जीवन चक्र: इस कीट की मादा का जीवन 10-12 दिन का होता है, जिसमें वह बिना निषेचन के 8-20 शिशु पैदा कर देती है। नवजात शिशु भूरे रंग के होते है तथा 5-8 दिन मे 4 मोल्ट द्वारा वयस्क अवस्था में आ जाते है। इस कीट में प्रजनन सालभर होता है। इसमें पंख व पंखविहिन दोनों प्रकार की अवस्थायें पायी जाती है।

नुकसान की प्रकृति: शिशु व प्रौढ दोनों ही पतियों की निचली सतह पर रहकर रस चूसते हैं एवं साथ में शहद जैसा चिपचिपा पदार्थ भी निकालते हैं जिससे पौधे पर अन्य रोगजनक फफूँद व जीवाणु भी पैदा हो जाते हैं। परिणामस्वरूप पौधे बौने रह जाते हैं तथा फूल व कलियों का उचित विकास नहीं हो पाता है।

मूंग फसल पर चेंपा का प्रकोप

समेकित नाशीकीट प्रबन्धन:

(अ) शस्य व यांत्रिक नियन्त्रण: * अगेती बुआई करें। * नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों का अधिक मात्रा में इस्तेमाल ना करें।

(ब) जैविक नियन्त्रण: क्राईसोपा एवं कोक्सिनेला इस कीट पर परभक्षी हैं। जैविक नियंत्रण में इस कीट के लिए खेतों में परभक्षी कीटों को छोडनें पर ही ज्यादा जोर दिया जाता है।

(स) रासायनिक नियन्त्रण: प्रति हैक्टेयर 100 - 125 मि. ली. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. या थायामेथोक्सास 25 डब्ल्यू. जी. आदि में से किसी एक का छिडकाव करें।

2. सफेद मक्खी: बेमिसिया टेबेसाई

पोषक पौधे: दलहनी फसलें, कपास, तम्बाकू, टमाटर आदि।

क्षति प्रवृति: शिशु व प्रौढ द्वारा पतियों से रस चूसना।

पहचान के लक्षण: सफेद मक्खी के वयस्क दूधिया सफेद/हल्का पीले रंग का होता है। पंख सफेद, जूँ की तरह होते हैं। इनके शिशु सुस्त व धीमें चलने वाले होते है, जो पत्ति के नीचे झुण्ड में मिलते है।

जीवनचक्र: यह कीट पूरे वर्ष प्रजनन करता है। मादा पत्ति के नीचे एक-एक करके पीले रंग के अण्डे देती है। जिनसे 3 से 13 दिन में शिशु निकलते है। शिशु अवस्था 9 से 10 दिन की होती है। कीट का पूरा जीवनचक्र 14 से 22 दिन में पूरा हो जाता है व वर्ष में 12 पीढियाँ पाई जाती है।

नुकसान की प्रकृति: इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही पतियों की निचली सतह पर बैठकर पतियों का रस चूसते हैं तथा शहद जैसा चिपचिपा पदार्थ भी छोडतें है जिस पर फफूँद उत्पन्न होकर पतियों का रंग काला कर देती है एवं पतियॉ पूर्ण विकसित होने से पूर्व ही झड जाती है। यह कीट विषाणु रोग फैलाने में भी सहायक होता है।

समेकित नाशीकीट प्रबन्धन:

(अ) शस्य व यांत्रिक नियन्त्रण: * प्रतिरोधी किस्मों की बुवाई करें। * प्रति है. 30 से 35 पीले या चिपचिपे ट्रेप लगाने चाहिए।* खेतों में तथा आस - पास की जगहों से पीली बूटी, पीली कंघी आदि खरपतवार नष्ट कर दें * नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों का अधिक मात्रा में इस्तेमाल ना करें।

(ब) जैविक नियन्त्रण: * अण्डों से शिशु निकलने पर शिशु परजीवी एन्करसीया शैफी खेतों में छोडें। * इस कीट पर परभक्षी कीट जैसे - क्राईसोपा, कारनिया आदि का खेतों में ज्यादा से ज्यादा संरक्षण करें। * अगस्त - सितम्बर में नीम का कम से कम छः बार छिडकाव करें। * सफेद मक्खी दिखाई देते ही फिश आयल रेसिन सोप 1.5 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर से छिडकाव करें।

(स) रासायनिक नियन्त्रण: प्रति हैक्टेयर 75 ग्राम क्लोथियानिडिन 50 डब्ल्यू. जी. अथवा 1 - 1.25 ली. ट्राइजोफोस 40 ई. सी. अथवा 150 - 200 ग्राम ऐसिटामिप्रिड 20 एस.पी. अथवा 100 - 125 मि. ली. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. आदि मे से किसी एक का छिडकाव करें।

3 हरा तेला (जैसिड):

पोषक पौधे: मोठ, मूंग, कपास, बैगन, भिण्डी आदि।

क्षति प्रवृति: शिशु व प्रौढ़ द्वारा पतियों का रस चूसना।

पहचान के लक्षण: छोटे हरे रंग के हॉपर, शिशु व वयस्क पत्तियों की निचली सतह पर पाये जाते है। आगे के पंख के पिछले भाग में एक बिन्दुसा होता है। शिशु बहुधा हरे रंग के होते है, वयस्क कीट 3 मिमी लम्बा होता है। यह टमाटर के अलावा कपास भिण्डी, आलू, बैंगन व जंगली पौधों को नुकसान पहुँचाता है।

जीवन चक्र: यह कीट पूरे साल पाया जाता है, मादा पीले रंग के अण्डे पतियों के नीचे की शिराओं पर देती है। अण्डों से 4 से 11 दिन में शिशु निकलते है एवं ये 7 से 21 दिन पत्तियों से ही रस चूसते रहते है। ये कीट हमेशा पत्तियों के निचली सतह पर बैठे देखे जा सकते है।

नुकसान की प्रकृति: इस कीट की मादा पतियों के किनारों मे निचली शिराओं को चीर कर उसके अंदर अण्डें देती हैं। अण्डों से शिशु निकलकर पतियों की निचली सतह से रस चूसतें हैं जिससे पतियॉ मुडनें लगती है और इनका रंग लाल, पीला हो जाता है। इस कीट का अत्यधिक प्रकोप होने पर पतियॉ सूखकर झड जाती हैं और पौधे की बढवार रूक जाती हैं।

समेकित नाशीकीट प्रबन्धन:

(अ) शस्य व यांत्रिक नियंत्रण: * अगेती बुआई करें। * खेतों में प्रति है. 3 - 4 प्रकाश प्रपंच का शाम को 8 से 11 बजे तक उपयोग करना चाहियें। * प्रति है. 30 से 35 पीले या चिपचिपे ट्रेप भी लगाने चाहिये। * नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक का प्रयोग कम से कम करना चाहिये।

(ब) जैविक नियन्त्रण: खेतों में इस कीट पर परभक्षी कीट जैसे क्राइसोपा, कॉक्सीनेलिडस आदि का सरक्षंण करें एवं खेतों में समय - समय पर नीम के बीजों के पाउडर या नींबौली के पाउडर का छिडकाव करते रहना चाहिये।

(स) रासायनिक नियन्त्रण: प्रति हैक्टेयर 100-125 मि- ली- इमिडाक्लोप्रिड 17-8 एस- एल- या 625 ग्रा- ऐसीफेट 75 एस- पी- या 65 ग्रा- थायामेथोक्साम 25 डब्ल्यू- जी- में से किसी एक का छिड़काव करें।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं

पता: अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

01/205-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

अनाजों एवं बीजों का रखरखाव व भण्डारण

जितेंद्र कुमार शर्मा, हर्ष वर्धन सिंह शेखावत
विजय कमल मीना, लेखा
नीशु जोशी एवं सौरभ जोशी
कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

फसलों की कटाई के बाद उनके बीजों का रख रखाव व भण्डारण महत्वपूर्ण हैं क्योंकि देष की बढ़ती जनसख्या, प्राकृतिक आपदायें, मौसम की अनिष्चितता तथा अच्छे बीजों की बढ़ती मांग के कारण फसल बुआई के लिए बीज की उपलब्धता को सुनिष्चित करना बहुत ही आवष्यक है। भण्डारण में कीटों, फंजाई, बैक्टीरिया चुहों, गिलहरी तथा पक्षियों आदि से हानि होती है। कटाई के बाद बीज के रख रखाव एवं भण्डारण पर विषेष ध्यान देने की आवष्यकता होती है। यद्यपि फसल की कटाई से पहले भी ऐसे अनेक कारक है जो बीज की भण्डारण क्षमता पर अपना प्रभाव डालते है। इन कारकों में उत्पादन के समय वातावरण का तापमान, वर्षा, आर्द्रता, उर्वरकों का प्रयोग एवं सिंचाई आदि प्रमुख हैं जिसका प्रभाव बीज के निकास पर पड़ता हैं। और ये सभी कारक बीज की भण्डारण क्षमता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करते है। अतः किसानों एवं बीज उत्पादन करने वाली संस्थाओं को उत्पादन के दौरान भी ध्यान देना बहुत आवष्यक होता है। फसल को पूर्ण रूप से पकते तथा सूखे मौसम की स्थिति में जब हवा नमी कम रहती है। और हवा पष्चिम से पूर्व की तरफ बह रही हो तब काटना चाहिऐं। अन्यथा बीज मे नमी बने रहने की संभावना रहती है। जिसके कारण भण्डारण में कीटों के लगने की सम्भावनाऐं अधिक रहती है।

भण्डारण गृह में लगने वाले कीट एवं माइक्रोबस और उनकी क्रियाषीलता

भंडारण कीट	तापक्रम वृद्धि हेतु डिग्री सेल्सियस	अनुकूलतम तापमान वृद्धि हेतु	आपेक्षिक आर्द्रता प्रतिषत
कीट	21-42	27-37	30-90
माइट्स	8-31	19-30	60-100
फंगस	8-80	20-40	60-100
माइक्रोबस	8-40	26-28	90-100

बीज प्रोद्योगिकी: समुचित बीज भण्डारण से बीज की गुणवत्ता में किसी प्रकार का सुधार संभव नही हैं केवल गुणवत्ता को संरक्षित किया जा सकता हैं फसल की कटाई के बाद बीज की गुणवश्रा, उनकी अंकुरण क्षमता तथा उनके ओज पर जो भौतिक कारक प्रभाव डालते हैं उनमें मौसम की आर्द्रता, मौसम का तापमान, बीज की नमी का प्रतिषत व भण्डारगृह की दषा प्रमुख हैं। ये सभी भौतिक कारक, जैविक कारकों जैसे कीट, रोडन्ट, (चूहे आदि) पंछी, माइटस, फफूंद एवं बैक्टीरिया आदि प्रभावित करते है। अधिकतम कीटों की क्रियाषीलता 11-20 प्रतिषत बीज में नमी तथा 27-37 डिग्री सेल्सियस तापमान पर होती है। इनकी क्रियाषिलता को रोकने के लिए विषेष प्रबंधन की आवष्यकता होती हैं जिनका विवरण इस प्रकार है।

बीजों का प्रबंधन

1.सर्वप्रथम बीजों के रखरखाव व भण्डारण के लिए बीजों की भौतिक दषा को सुधारना बहुत आवष्यक हैं बीज के लिए उगाई गई फसल को काटने के बाद उसकी भली प्रकार सफाई करना तथा अच्छी तरह से सुखाना चाहिऐ। सुखाने के बाद इस बात का ध्यान रखना चाहिऐं कि सब्जियों के बीजों में 5-7 प्रतिषत नमी तथा खाद्यान्नों के बीजों में 8-10 नमी होनी चाहिऐं। आमतौर पर 250 से तापमान तथा 25-30 वायुमण्डलीय प्रतिषत एवं 8-10 प्रतिषत बीजों में नमी होने पर सभी प्रकार के बीजों को एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता हैं बीजों को सुखाने के बाद ग्रेडिग करना अति आवष्यक होता हैं इन सभी क्रिया को करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिऐं किसी भी प्रकार का मिश्रण न हो। मडाई के पष्चात बीज को सीधे भण्डारण गृह में रखने से उनमें कीटों को प्रकोप बहुत तेजी से होता हैं बीज को ग्रेडिंग करने से पहले बीज संसाधनषाला (प्रोसेसिंग प्लाट) की सफाई अच्छी प्रकार से करनी चाहिएं तथा सफेदी भी कर देना चाहिऐ।

2.ग्रेडिंग करने से बीज की भण्डारण क्षमता में सुधार होता हैं क्योंकि ग्रेडिंग के दौरान छोटे, कटे हुऐ हल्के दाने एवं खरपतवार आदि के बीज अलग कर दिये जायें। जिन पर कीटों का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक व शीघ्र होता है। बीज संसाधनषाला में ग्रेडिंग से पुर्व मेलाथियान 50 ई.सी. एक लीटर दवा 25 लीटर पानी में घोलकर अथवा डेल्टा मेथ्रिन 30 ई.सी. एक लीटर दवा को 100 लीटर पानी में घोलकर फर्ष तथा दीवारों पर छिड़काव करना चाहिये। 5 लीटर दवा का घोल 100 वर्गमीटर क्षेत्रफल के लिए पर्याप्त रहता है। आमतौर से कीटों का आक्रमण बीज संसाधनषाला से पुर्व आंरभ हो जाता हैं। इसलिए बीज की ग्रेडिंग में देरी नही करना चाहिऐ।

3.यदि बीजों की शीघ्र ग्रेडिंग करना सभंव नही हो तो ग्रेडिंग से पहले बीज को एल्यूमिनियम फास्फाइड से घ्रमण अवष्य कर लेना चाहिऐ, बीजों को घ्रमण करने के लिए एल्यूमिनियम फास्फाइड 3 ग्राम की 2-3 गोली प्रति टन बीज के हिसाब से एक गेाली प्रति घन मीटर क्षेत्रफल के हिसाब से बोरिया के ऊपर रखकर तुरंत पॉलिथीन की चादर से इस प्रकार ढक देना चाहिए ताकि वायु का आवागमन न हो तथा दरवाजों को भी जहां से हवा तथा कीट घुसने का आदेष हो मिट्टी आदि से बंद कर देना चाहिऐ। घ्रुमण करते समय इस बात का ध्यान रहे की बीज में 10 प्रतिषत से अधिक नमी न हो अन्यथा बीज के अकुंरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। सामान्यतः घ्रमण के कुछ दिन बाद ग्रेडिंग किया जा सकता हैं बीज की ग्रेडिंग एवं भण्डारण के दौरान दीमक का प्रभाव दिखाई देने पर दीवारों, छतों, एवं फर्ष आदि क्लोरोपायरीफास 2 मिली प्रति लीटर की दर से घोल बनाकर समय-समय पर छिड़काव करते रहना चाहिऐ।

भण्डारण गृह में लंबी अवधि हेतु बीज के लिए तापमान व आर्द्रता

भंडारण की अवधि	भण्डारण गृह का तापमान डिग्री सेल्सियस	आर्दता प्रतिशत
1 वर्ष	20-25	45-50
1-3 वर्ष	15	45-50
3-5 वर्ष	2-4	40-50
5 वर्ष से अधिक	10	40-45

3 भण्डार गृह में धान्य बीजो के लिये बीज नमी प्रतिषत

भण्डारण की अवधि (30 से 32 डिग्री तापमान पर)	बीज नमी प्रतिशत
4 वर्ष	8 से 10
2 वर्ष	9 से 11
1 वर्ष	10 से 12
0.5 वर्ष	11 से 13

4.बीज को ग्रेडिंग करने के बाद भण्डारण ग्रह में रखना चाहिए। भण्डारण ग्रह में बीज को रखने से पुर्व बीज भण्डारण की अच्छी तरह सफाई आदि करनी चाहिऐ तथा भण्डारण गृह में मैलाथियान या डेल्टामेथ्रिन का छिड़काव अवष्यक करना चाहिऐ। भण्डारण गृह इस प्रकार का होना चाहिऐ कि उसमें किसी प्रकार की खिड़की न हो तथा उसमे हवा का आवागमन रहित एक दरवाजा होना चाहिऐ। भण्डारण ग्रह में एक या दो कमरों के आकार के अनुसार एक्जास्ट पंखा होना चाहिऐ। एक्जास्ट पंखा का प्रयोग तभी करना चाहिऐ जब बीज गोदाम के बाहर का तापमान व आर्द्रता अंन्दर से कम हो।

5.बीज को ग्रेडिंग करने के बाद भण्डार गृह में रखने से पूर्व मैलाथियान 5 प्रतिषत 0.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज को उपचारित करना चाहिए लेकिन इस बात का ध्यान रखे की उपचारित बीज किसी भी प्रकार खाने के उपयोग में न लायें।

6.भंडारण करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बीज हमेषा नई बोरिया मे ही भरना चाहिए। पुरानी बोरियों के बीज को भरने से कीटों के फैलाने की संम्भावना रहती है। तथा पुरानी बोरियों में पहले भरी गई फसल या प्रजाति के बीज चिपके रहते हैं जिससे मिश्रण की संभावना भी बनी रहती है। यदि पुरानी बोरिया को प्रयोग करना आवष्यक हो तो बोरिया की अच्छी प्रकार सफाई करके मैलाथियान अथवा डेल्टमेथ्रिन में घोल के डुबोकर दो दिन तक तेज धूप में सुखाने के बाद ही इन बोरियों का प्रयोग करें। पुरानी बोरियों में एल्यूमिनियम फास्फाइड से धुमण करने के बाद भी प्रयोग किया जा सकता है।

7.भण्डारण गृह में बीज के रखते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिऐ कि बिना ग्रेडिंग बीजों के साथ नहीं रखा जाऐं। आमतौर पर एक फसल का बीज ही एक साथ रखना चाहिऐ। क्योंकि प्रत्येक फसलों कि बीजों की भण्डारण क्षमता अलग-अलग होती है। तिलहन वाली फसलों में वसा अधिक होने के कारण इनकी भण्डारण क्षमता सबसे अधिक होती है। तथा दलहन वाली फसलों मे प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण इनकी भण्डारण क्षमता सबसे कम होती है। गेहूँ, जौ, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि बीजों में कार्बोहाइड्रेट अधिक होने के कारण इनकी भण्डारण क्षमता दलहन से अधिक एवं तिलहन से कम होती हैं। अतः कुषल प्रबंधन के लिए अनाज, दलहन तिलहन एवं सब्जियों के बीजों के लिए अलग-अलग भण्डार गृह होने चाहिऐ।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

कृषि विकास में सहकारिताओं की भूमिका

लक्ष्मी मीना पी.एच.डी. स्कॉलर, प्रसार शिक्षा विभाग, एम.पी.यू.ए.टी., उदयपुर (राजस्थान)

सरजीत यादव पी.एच.डी. स्कॉलर, प्रसार शिक्षा विभाग, एम.पी.यू.ए.टी., उदयपुर (राजस्थान)

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ आज भी बड़ी संख्या में लोग अपनी आजीविका के लिए कृषि और इससे जुड़े व्यवसायों पर निर्भर हैं। ऐसे में किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करना, उनकी उत्पादकता बढ़ाना तथा उन्हें आधुनिक तकनीकों से जोड़ना अत्यंत आवश्यक है। इन उद्देश्यों की पूर्ति में सहकारिता आंदोलन की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सहकारिता एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें समान उद्देश्य वाले लोग मिलकर सामूहिक रूप से कार्य करते हैं और लाभ-हानि को साझा करते हैं।

सहकारिता की धारणा "सबके लिए एक और एक के लिए सब" के सिद्धांत पर आधारित है। यह प्रणाली किसानों को आत्मनिर्भर बनाने, संसाधनों का बेहतर उपयोग करने तथा सामाजिक और आर्थिक विकास को गति देने में सहायक होती है। भारत में सहकारिता आंदोलन का इतिहास काफी पुराना है और यह समय के साथ विकसित होकर किसानों के लिए एक मजबूत सहारा बन चुका है।

कृषि क्षेत्र में सहकारिताओं की भूमिका कई तरह की है। सबसे पहले, सहकारी समितियाँ किसानों को सस्ती दरों पर कृषि आदान (inputs) जैसे बीज, उर्वरक, कीटनाशक आदि उपलब्ध कराती हैं। इससे किसानों की उत्पादन लागत कम होती है और उन्हें समय पर आवश्यक संसाधन मिल पाते हैं। इसके अलावा, सहकारी संस्थाएँ किसानों को ऋण सुविधा भी प्रदान करती हैं, जिससे वे साहूकारों के चंगुल से बचकर कम ब्याज दर पर वित्तीय सहायता प्राप्त कर सकते हैं।

आज के डिजिटल युग में सहकारिताओं की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो गई है। आधुनिक तकनीकों जैसे मोबाइल ऐप, ऑनलाइन पोर्टल और डिजिटल भुगतान प्रणालियों के माध्यम से सहकारी संस्थाएँ किसानों तक तेजी से जानकारी और सेवाएँ पहुँचा रही हैं। इससे किसान बाजार भाव, मौसम की जानकारी और सरकारी योजनाओं के बारे में समय पर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म के उपयोग से सहकारिताओं की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता बढ़ी है और किसानों का भरोसा भी मजबूत हुआ है। इसके साथ ही, सहकारिताएँ किसानों को प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण के अवसर भी प्रदान करती हैं। विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों, कार्यशालाओं और प्रदर्शन (डेमो) के माध्यम से किसानों को नई कृषि तकनीकों, उन्नत बीजों और बेहतर प्रबंधन पद्धतियों के बारे में जानकारी दी जाती है। इससे न केवल उनकी उत्पादन क्षमता बढ़ती है, बल्कि वे आधुनिक कृषि अपनाकर अपनी आय में भी वृद्धि कर सकते हैं। इस प्रकार, सहकारिताएँ किसानों को ज्ञान, संसाधन और अवसर प्रदान कर उनके समग्र विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

सहकारिताएँ विपणन के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। छोटे और सीमांत किसानों के लिए अपने उत्पादों को उचित मूल्य पर बेचना एक बड़ी चुनौती होती है। सहकारी विपणन समितियाँ किसानों से उनकी उपज खरीदकर उन्हें उचित मूल्य दिलाने में मदद करती हैं। इससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है और किसानों को उनकी मेहनत का सही प्रतिफल मिल पाता है। इसके अतिरिक्त, सहकारी संस्थाएँ भंडार और प्रसंस्करण की सुविधाएँ भी उपलब्ध कराती हैं। इससे किसानों को अपनी उपज को सुरक्षित रखने और उसे मूल्य संवर्धन के माध्यम से अधिक लाभ प्राप्त करने का अवसर मिलता है। उदाहरण के रूप में, डेयरी सहकारिताओं ने भारत में दुग्ध उत्पादन और विपणन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है।

भारत में कई सफल सहकारी संस्थाओं ने कृषि विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया है। उर्वरक क्षेत्र में KRIBHCO (Krishak Bharati Cooperative Limited) और IFFCO (Indian Farmers Fertiliser Cooperative Limited) जैसी संस्थाओं ने किसानों को गुणवत्तापूर्ण उर्वरक उपलब्ध कराकर उनकी उत्पादकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसी प्रकार, डेयरी क्षेत्र में AMUL (Anand Milk Union Limited) ने सहकारिता के माध्यम से किसानों को सशक्त बनाते हुए देश को दुग्ध उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया है।

सहकारिताएँ न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक विकास में भी योगदान देती हैं। यह किसानों में सहयोग, एकता और सामूहिक निर्णय लेने की भावना को बढ़ावा देती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उत्पन्न करना, महिला सशक्तिकरण और गरीबी उन्मूलन में भी सहकारी संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। स्वयं सहायता समूह (SHGs) और महिला सहकारी समितियाँ ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में सहायक सिद्ध हो रही हैं।

हालांकि, सहकारिता क्षेत्र को कुछ चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है। कई स्थानों पर सहकारी संस्थाओं में पारदर्शिता की कमी, राजनीतिक हस्तक्षेप, प्रबंधन की कमजोरी और जागरूकता की कमी जैसी समस्याएँ देखी जाती हैं। इसके अलावा, आधुनिक तकनीकों को अपनाने में भी कुछ सहकारी संस्थाएँ पीछे रह जाती हैं, जिससे उनकी कार्यक्षमता प्रभावित होती है।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए सहकारी संस्थाओं में सुधार आवश्यक है। पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देना, पेशेवर प्रबंधन को अपनाना तथा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग करना समय की मांग है। किसानों को सहकारिता के महत्व के बारे में जागरूक करना और उन्हें सक्रिय रूप से इसमें भाग लेने के लिए प्रेरित करना भी आवश्यक है।

अंततः कहा जा सकता है कि सहकारिताएँ कृषि विकास की रीढ़ हैं। यह किसानों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने, उनकी आय बढ़ाने तथा उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यदि सहकारिता आंदोलन को सही दिशा और उचित समर्थन मिले, तो यह भारतीय कृषि को नई ऊँचाइयों तक ले जा सकता है और किसानों के जीवन स्तर में उल्लेखनीय सुधार ला सकता है। इस प्रकार, सहकारिता न केवल कृषि विकास का एक प्रभावी माध्यम है, बल्कि यह समग्र ग्रामीण विकास और सामाजिक समृद्धि का आधार भी है। इसलिए, आवश्यक है कि सरकार, संस्थाएं और किसान मिलकर सहकारिता आंदोलन को और अधिक मजबूत बनाएं, ताकि "सशक्त किसान, समृद्ध भारत" का सपना साकार हो सके।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

खेत से बाजार तक: आधुनिक तकनीक से लाभकारी खेती के उपाय

डॉ. मुनेश्वर प्रसाद मंडल सहायक प्राध्यापक सह-कनीय वैज्ञानिक, पादप कार्यकी एवं जीव रसायन विभाग
भोला पासवान शास्त्री कृषि महाविद्यालय, पूर्णिया, (बिहार)

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के करोड़ों किसान खेती पर निर्भर हैं, लेकिन अक्सर देखा जाता है कि अच्छी पैदावार होने के बावजूद किसानों को उचित लाभ नहीं मिल पाता। इसका मुख्य कारण उत्पादन से लेकर विपणन (मार्केटिंग) तक आधुनिक तकनीकों का सीमित उपयोग है। आज आवश्यकता इस बात की है कि किसान केवल फसल उत्पादन तक सीमित न रहें, बल्कि खेत से बाजार तक की पूरी प्रक्रिया को वैज्ञानिक और आधुनिक तरीके से अपनाएं।

सबसे पहले खेती की शुरुआत उन्नत और प्रमाणित बीजों के चयन से करनी चाहिए। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित उन्नत किस्में अधिक उत्पादन देने के साथ-साथ रोग एवं कीटों के प्रति अधिक सहनशील होती हैं। इसके साथ ही मिट्टी परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए, जिससे उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ मिट्टी की उर्वरता भी बनी रहती है। आधुनिक खेती में यंत्रीकरण का भी महत्वपूर्ण योगदान है। ट्रैक्टर, पावर टिलर, सीड ड्रिल, रीपर और हार्वेस्टर जैसे कृषि यंत्रों के उपयोग से समय और श्रम दोनों की बचत होती है। इससे खेती की लागत कम होती है और कार्य समय पर पूरा हो जाता है।

इसके अलावा सूक्ष्म सिंचाई तकनीक जैसे ड्रिप और स्प्रिंकलर प्रणाली का उपयोग भी लाभकारी है। इन तकनीकों से पानी की बचत होती है और पौधों को आवश्यक मात्रा में नमी मिलती है। जलवायु परिवर्तन के इस दौर में जल संरक्षण की तकनीकें खेती को टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आज के समय में केवल उत्पादन बढ़ाना ही पर्याप्त नहीं है। किसानों को अपनी फसल के उचित भंडारण और प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) पर भी ध्यान देना चाहिए। यदि फसल की सही तरीके से सफाई, ग्रेडिंग और पैकेजिंग की जाए, तो बाजार में उसका मूल्य अधिक मिलता है। उदाहरण के लिए, सब्जियों और फलों को साफ और आकर्षक पैकेजिंग में बेचने से बेहतर कीमत प्राप्त होती है।

इसके साथ-साथ किसानों को फसल विविधीकरण की ओर भी ध्यान देना चाहिए। केवल पारंपरिक फसलों पर निर्भर रहने के बजाय सब्जी, फल, फूल, औषधीय एवं सुगंधित पौधों की खेती को अपनाने से आय के नए अवसर मिल सकते हैं। इससे जोखिम भी कम होता है और किसानों को पूरे वर्ष आय प्राप्त हो सकती है।आज डिजिटल तकनीक भी किसानों के लिए काफी उपयोगी साबित हो रही है। मोबाइल फोन और इंटरनेट के माध्यम से किसान मौसम की जानकारी, बाजार भाव और कृषि विशेषज्ञों की सलाह आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। कई सरकारी और निजी प्लेटफॉर्म किसानों को सीधे बाजार से जोड़ने का कार्य कर रहे हैं, जिससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है और किसानों को बेहतर मूल्य मिलता है।

किसानों को किसान उत्पादक संगठन (FPO) या सहकारी समूहों से जुड़ना भी लाभकारी हो सकता है। समूह में कार्य करने से किसान अपनी उपज को बड़ी मात्रा में बाजार तक पहुंचा सकते हैं और बेहतर कीमत प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही वे कृषि यंत्र, भंडारण सुविधा और विपणन व्यवस्था का सामूहिक रूप से लाभ उठा सकते हैं। अंततः यह कहा जा सकता है कि यदि किसान आधुनिक तकनीकों, वैज्ञानिक प्रबंधन और बेहतर विपणन व्यवस्था को अपनाएं, तो खेती को अधिक लाभकारी बनाया जा सकता है। उत्पादन से लेकर बाजार तक हर चरण में सुधार लाकर ही किसानों की आय में वास्तविक वृद्धि संभव है। इस प्रकार ÷खेत से बाजार तक÷ आधुनिक तकनीकों का उपयोग न केवल खेती को अधिक उत्पादक बनाएगा, बल्कि किसानों को आत्मनिर्भर और समृद्ध बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

✍डॉ. दिनेश रजक, डॉ. विशाल कुमार
✍डॉ. देवेन्द्र कुमार प्रसंसकरण एवं खाद्य अभियन्त्रिकी विभाग, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी महविद्यालय, डॉ. रा.प्र.कें.कृ.वि.पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)

कटाई उपरांत फसलों का प्राथमिक स्तर पर प्रसंस्करण कार्य

प्रस्तावना

कृषि क्षेत्र में फसल उत्पादन केवल पहला चरण है; इसके बाद फसलों का उचित रूप से संभालना और संसाधित करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। कटाई के तुरंत बाद फसलों का प्राथमिक स्तर पर प्रसंस्करण करना उनके भंडारण, गुणवत्ता और बाजार मूल्य के लिए अनिवार्य है। फसलों में नमी, मिट्टी, कीट और अन्य अशुद्धियाँ हो सकती हैं, जो उन्हें सीधे उपभोग या भंडारण के लिए अनुपयुक्त बनाती हैं। प्राथमिक प्रसंस्करण में सफाई, छंटाई, सुखाना, भंडारण और पैकेजिंग जैसी प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं, जो फसल की गुणवत्ता बनाए रखने और नुकसान कम करने में सहायक होती हैं। यह न केवल किसानों की आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करता है, बल्कि उपभोक्ताओं को सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता वाली खाद्य सामग्री भी उपलब्ध कराता है। इस प्रकार, कटाई उपरांत फसलों का प्राथमिक प्रसंस्करण कृषि उत्पादन की श्रृंखला में एक अहम चरण है, जो फसल की उपज, टिकाऊपन और लाभप्रदता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फसलों की कटाई के तुरंत बाद उनका प्राथमिक प्रसंस्करण करना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। यह कार्य फसलों की गुणवत्ता बनाए रखने, भंडारण अवधि बढ़ाने और बाजार में मूल्य सुनिश्चित करने में मदद करता है।

प्राथमिक प्रसंस्करण: कटाई उपरांत फसलों का प्राथमिक प्रसंस्करण वह पहला चरण है, जिसमें फसलों को सीधे खेत से बाजार या भंडारण के लिए तैयार किया जाता है। इसका उद्देश्य फसल की गुणवत्ता बनाए रखना, उसकी हृद्धद्दद्ध द्धद्धद्द बढ़ाना और उपभोक्ताओं तक सुरक्षित उत्पाद पहुंचाना है।

1. **प्राथमिक प्रसंस्करण के मुख्य चरण**

(क) सफाई: कटाई के तुरंत बाद फसलों में अक्सर मिट्टी, धूल, पत्थर, कीट, अनचाहे पौधों के अवशेष और अन्य अशुद्धियाँ मिल जाती हैं। इनको हटाना प्राथमिक प्रसंस्करण का पहला और सबसे महत्वपूर्ण चरण है। इन्हें हटाने के लिए हाथ से झाड़ना, छानना या मशीनों का उपयोग किया जाता है। उदाहरणः गेहूँ, धान या मटर की सफाई करना।

(ख) छंटाई: कटाई के बाद फसलों की छंटाई एक महत्वपूर्ण चरण है, जिसमें फसलों को आकार, रंग, वजन, गुणवत्ता और किस्म के अनुसार अलग किया जाता है। अच्छे और खराब दानों या फलों को अलग करना। इससे उपभोक्ताओं को उच्च गुणवत्ता वाला उत्पाद मिलता है। यह फसल की बाजार मूल्य, भंडारण क्षमता और उपभोक्ता संतुष्टि बढ़ाने में मदद करता है।

(ग) सुखाना: कटाई के बाद फसलों में नमी अधिक होती है, जो उनकी भंडारण क्षमता और गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है। इसलिए फसलों का सुखाना प्राथमिक प्रसंस्करण का एक महत्वपूर्ण चरण है। ताजे फसलों में नमी अधिक होती है, जो भंडारण में खराबी पैदा कर सकती है। धूप में सुखाना या आधुनिक ड्रायर मशीनों का उपयोग करना अति आवश्यक होता है ताकि अनाज का भण्डारण अधिक दिन किया जा सके। उदाहरणः चावल, मसाले, फल इत्यादि।

(घ) भंडारण: कटाई और प्राथमिक प्रसंस्करण के बाद फसलों को सुरक्षित रूप से संग्रहीत करना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। भंडारण का उद्देश्य फसल की गुणवत्ता, पोषण और आर्थिक मूल्य को लंबे समय तक बनाए रखना है। सुखाई के बाद फसलों को सुरक्षित भंडारण में रखा जाता है। भंडारण में नमी और कीट नियंत्रण बहुत जरूरी है। उचित भंडारण से फसल लंबे समय तक सुरक्षित रहती है।

i. भंडारण का उद्देश्य- * फसल को कीट, रोग और फफूंदी से बचाना * मौसम और बाहरी परिस्थितियों के प्रभाव से सुरक्षा। * लंबी अवधि तक उपभोग या बिक्री के लिए सुरक्षित रखना। * आर्थिक नुकसान और फसल की बर्बादी को कम करना।

ii. भंडारण के प्रकार-(क) पारंपरिक भंडारण (Traditional Storage): * मिट्टी, लकड़ी या झोपड़ी जैसी पारंपरिक संरचनाओं में फसल संग्रहित की जाती है।

* **उदाहरण:** खलिहान, मिट्टी के बर्तनों में अनाज भंडारण।
* छोटे पैमाने पर और कम लागत वाला तरीका।

(ख) आधुनिक भंडारण - * नियंत्रित तापमान और नमी वाले गोदामों या सिलों में फसल संग्रहित की जाती है।

* **उदाहरण:** सिलोज़, थर्मल कंट्रोल्ड गोदाम।
* बड़े पैमाने पर उत्पादन और लंबी अवधि के लिए उपयुक्त।

(ग) ठंडी भंडारण (Cold Storage)- * फल और सब्जियों के लिए, तापमान नियंत्रित कोल्ड स्टोरेज का उपयोग। * फसल की ताजगी और पोषण बनाए रखने में मदद करता है। * उदाहरण-सेब, आलू, टमाटर।

iii. भंडारण में महत्वपूर्ण बिंदु- * नमी नियंत्रित रखना * तापमान नियंत्रित रखना * कीट और रोग नियंत्रण * उचित वेंटिलेशन सुनिश्चित करना

iv. भंडारण का महत्व- * फसल की जीवन अवधि बढ़ाना। * बाजार की मांग के अनुसार बिक्री की सुविधा। * किसान की आय और आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करना। * फसल का अपव्यय और नुकसान कम करना।

(ड) पैकेजिंग: कटाई, सफाई, छंटाई, सुखाने और भंडारण के बाद फसलों की पैकेजिंग उन्हें बाजार में सुरक्षित रूप से पहुँचाने और उपभोक्ताओं तक गुणवत्तापूर्ण उत्पाद पहुँचाने का अंतिम चरण है। इससे फसल टूटने, गीली होने या कीट लगने से बचती है।

i. पैकेजिंग का उद्देश्य-* फसल को परिवहन के दौरान टूटने, गीली होने या कीट/रोग के नुकसान से बचाना। * फसल की गुणवत्ता और ताजगी बनाए रखना। * बिक्री के लिए आकर्षक और उपयुक्त रूप में तैयार करना। * वजन और मात्रा सुनिश्चित करना।

ii. पैकेजिंग के प्रकार

(क) पारंपरिक पैकेजिंग- * पुआल, बोर, झोले या लकड़ी के बक्से। * छोटे पैमाने पर और स्थानीय बिक्री के लिए उपयुक्त। * उदाहरणः गेहूँ, मक्का, आलू।

(ख) आधुनिक पैकेजिंग - * प्लास्टिक बैग, थैले, कंटेनर, वैक्यूम पैकिंग और सिलो बैग। * बड़े पैमाने पर उत्पादन और लंबी दूरी की बिक्री के लिए उपयुक्त।

* **उदाहरण:** चावल, दाल, बीन्स।

(ग) ठंडी पैकेजिंग- * ताजे फल और सब्जियों के लिए, तापमान नियंत्रित पैकेजिंग। * फसल की ताजगी और पोषण बनाए रखने में मदद करता है।

* **उदाहरण:** सेब, स्ट्रॉबेरी, टमाटर।

iii. पैकेजिंग में ध्यान देने योग्य बातें-* फसल के अनुसार सही सामग्री का चयन करना। * पैकिंग का आकार और वजन मानक अनुसार होना। * पैकेजिंग पर उचित लेबलिंग और जानकारी देना। * परिवहन और भंडारण के लिए मजबूत और सुरक्षित पैकेजिंग।

iv. पैकेजिंग का महत्व- * फसल की सुरक्षा और गुणवत्ता सुनिश्चित करना। * बाजार में फसल का मूल्य बढ़ाना। * उपभोक्ता की संतुष्टि और विश्वास बढ़ाना। * आर्थिक नुकसान और फसल की बर्बादी कम करना।

निष्कर्ष: कटाई उपरांत फसलों का प्राथमिक स्तर पर प्रसंस्करण कृषि उत्पादन की श्रृंखला में एक अत्यंत महत्वपूर्ण चरण है। इसमें फसल की सफाई, छंटाई, सुखाना, भंडारण और पैकेजिंग शामिल हैं, जो फसल की गुणवत्ता, पोषण और टिकाऊपन बनाए रखने में सहायक होते हैं।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

संरक्षित खेती, आर्थिक समृद्धि

आलोक कुमार (जिला कृषि पदाधिकारी)
कालीकान्त चौधरी उप परियोजना निदेशक आत्मा
रौशन कुमार उप परियोजना निदेशक (आत्मा)
प्रमोद कुमार तिवारी प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी (आत्मा)
वैभव पाण्डेय प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी सिवान सदर
मनीष पाण्डेय प्रखण्ड तकनीकी प्रबंधक, जिला कृषि कार्यालय सिवान, कृषि विभाग (बिहार)

पारंपरिक खेती (गेहूँ/धान) एक बीघे में साल भर में लगभग 15,000 से 20,000 रुपये की शुद्ध बचत होती थी। संरक्षित खेती FLD तकनीक अपनाने के बादए अब वे उसी एक बीघे जमीन से सालाना 1.5 लाख से 2.5 लाख तक की शुद्ध आय प्राप्त कर रहे हैं। लागत में कमी और बेहतर बाजार मूल्य ने उनकी आर्थिक स्थिति को मजबूत कर दिया है। बिहार के सिवान जिले के हुसैनगंज प्रखंड अंतर्गत नवलपुर गाँव के निवासी राधे श्याम यादव आज क्षेत्र के किसानों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गए हैं। राधे श्याम यादव जी को आधुनिक खेती में रुचि तब से आई जब वे गुजरात में रोजगार कर रहे थे। आत्मा (ATMA) सिवान और उद्यान विभाग के मार्गदर्शन में उन्होंने फ्रंट लाइन डिमॉन्स्ट्रेशन (FLD) के तहत संरक्षित खेती (Protected Cultivation) की पद्धति अपनाकर अपनी खेती को एक नयी दिशा प्रदान की है। ''पारंपरिक खेती से आधुनिकता की ओर'' कदम राधे श्याम यादव पहले पारंपरिक फसलों की खेती करते थे जिसमें लागत अधिक और मुनाफा कम था। मौसम की अनिश्चितता और कीटों एवं रोगो के प्रकोप के कारण अक्सर उन्हें नुकसान उठाना पड़ता था। इसी बीच उन्हें आत्माए सिवान और उद्यान विभाग के अधिकारियों से संरक्षित खेती के बारे में जानकारी मिली।

विभाग के मार्गदर्शन और FLD (अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन) योजना के तहतए उन्होंने अपने एक बीघे खेत में संरक्षित खेती की शुरुआत की। सरकारी अनुदान और तकनीकी सहायता से उन्होंने आधुनिक शेड-नेट संरचना तैयार की। उद्यान विभाग एवं आत्मा सिवान का तकनीकी सहयोग, उद्यान विभाग के विशेषज्ञों ने उन्हें मिट्टी की जाँच, उत्तम बीज चयन और ड्रिप सिंचाई (Drip Irrigation) जैसी तकनीकों का प्रशिक्षण दिया। FLD के तहत उन्हें नई किस्मों के प्रदर्शन और खेती के उन्नत तरीकों को सीधे अपने खेत पर आजमाने का मौका मिलाए जिससे उनके आय में अप्रत्याशित वृद्धि हुई एवं आत्मविश्वास बढ़ा।

संरक्षित खेती के मुख्य लाभ

राधे श्याम जी बताते हैं कि एक बीघे में इस तकनीक के प्रयोग से उन्हें निम्नलिखित लाभ हुए-

बेमौसम उत्पादनः वे अब साल भर सब्जियाँ और फूल उगा सकते हैंए अगेती फसल उत्पादन से जिससे उन्हें बाजार में तब अच्छा भाव मिलता है जब आम किसान पैदावार नहीं ले पाते।

कीटों से सुरक्षाः नेट के अंदर खेती होने के कारण कीटनाशकों का प्रयोग लगभग शून्य तक कम हो गया है।

बेहतर गुणवत्ताः उनकी फसल की चमक और आकार खुला खेत की तुलना में काफी बेहतर हैए जिसे व्यापारियो द्वारा पंसद किया जाता है एवं क्रय कर लेते है।

आय में वृद्धि और सामाजिक प्रभाव

आज राधे श्याम यादव की आय पारंपरिक खेती की तुलना में कई गुना बढ़ गई है। उनकी सफलता को देख नवलपुर और आसपास के गांवों के किसान भी अब उद्यान विभाग से संपर्क कर रहे हैं। वे अब न केवल एक सफल किसान हैंए बल्कि अन्य किसानों के लिए एक (प्रशिक्षक) की भूमिका भी निभा रहे हैं।

राधे श्याम जी को फ्रंट लाइन डिमॉन्स्ट्रेशन योजना के तहत विभाग द्वारा उन्नत किस्म के बीजए सूक्ष्म सिंचाई और कीट प्रबंधन का प्रशिक्षण दिया गया। उन्होंने अपने एक बीघे खेत में शेड.नेट हाउस का निर्माण कियाए जिससे फसलें बाहरी वातावरण और कीटों के प्रकोप से सुरक्षित रहीं।

प्रमुख फसलें और आय का विवरण

उन्होंने मुख्य रूप से निम्नलिखित उच्च मूल्य वाली फसलों पर ध्यान केंद्रित किया-

खीरा और रंगीन शिमला मिर्चः संरक्षित वातावरण में उन्होंने बेमौसम खीरा और लाल-पीली शिमला मिर्च की खेती की। जहां आम किसानों को सीजन में कम भाव मिलता है वहीं राधे श्याम जी ने बेमौसम उत्पादन कर बाजार में 40 से 60 रुपये प्रति किलो तक का भाव प्राप्त किया।

फूलों की खेती (जरबेरा/गुलाब) उन्होंने प्रयोग के तौर पर फूलों की खेती भी कीए जिसकी मांग सिवान और आसपास के शहरों में काफी अधिक है।

राधे श्याम यादव जी आज न केवल खुद समृद्ध हुए हैंए बल्कि उन्होंने स्थानीय युवाओं के लिए रोजगार के अवसर भी पैदा किए हैं। वे कहते हैं। आत्मा और उद्यान विभाग के मार्गदर्शन ने मुझे यह सिखाया कि कम जमीन में भी आधुनिक तकनीक से लखपति बना जा सकता है। राधे श्याम यादव की यह कहानी प्रमाणित करती है कि यदि किसान सरकारी योजनाओं (जैसे आत्मा और उद्यान विभाग की FLD) का सही लाभ उठाएं और वैज्ञानिक तरीकों को अपनाएंए तो खेती वाकई एक मुनाफे का सौदा बन सकती है।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

04/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

बंपर मुनाफे हेतु एग्रीकल्चर बिजनेस आइडिया

डॉ. कृशानु वरिष्ठ शोध अध्येता, आईसीएआर-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान केंद्र करनाल, हरियाणा

श्वेता यादव शोध छात्रा, आईसीएआर-आईसीएआर-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (132001), हरियाणा

शची तिवारी शोध छात्रा, विभाग वनस्पति विज्ञान, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय मेरठ 250005 (उ.प्र.)

कृषि विविधीकरण से आत्मनिर्भर किसान की ओरः भारत जैसे कृषि प्रधान देश में आज खेती अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है–घटती जोत का आकार, बढ़ती लागत, जलवायु परिवर्तन, बाजार में अस्थिरता और बढ़ती जनसंख्या। ऐसी स्थिति में केवल पारंपरिक फसल उत्पादन पर निर्भर रहना अब पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता है कि किसान खेती को व्यवसाय (Agri-Entrepreneurship) के रूप में अपनाएँ और कृषि विविधीकरण के माध्यम से अपनी आय के अनेक स्रोत विकसित करें। विशेषकर लघु एवं सीमांत किसान यदि सहायक कृषि व्यवसाय अपनाते हैं, तो वे कम भूमि में भी अधिक आय अर्जित कर सकते हैं। आइए विस्तार से समझते हैं ऐसे लाभकारी कृषि व्यवसायों को।

1. डेयरी व्यवसाय (गौ/भैंस पालन)

भारत विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश है। इस क्षेत्र के संगठित विकास में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (NDDB) की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

क्यों है डेयरी लाभकारी?

* प्रतिदिन नकद आय (दूध बिक्री) * गोबर से जैविक खाद व बायोगैस * पशु आधारित कृषि प्रणाली (Integrated Farming System)
* दूध, दही, घी, पनीर जैसे वैल्यू एडेड उत्पाद

प्रारंभिक योजना * 2:4 पशुओं से शुरुआत * उन्नत नस्लों का चयनः साहीवाल, गिर, मुर्रा * संतुलित आहार और टीकाकरण * स्वच्छ शेड व पानी की व्यवस्था

निवेश और सहायताः सरकार डेयरी उद्यमिता विकास योजनाओं के अंतर्गत ऋण व सब्सिडी प्रदान करती है। ?5 लाख से रु. 10 लाख तक ऋण उपलब्ध हो सकता है। यदि किसान दूध का प्रसंस्करण (Processing) शुरू कर दें तो लाभ और बढ़ जाता है।

2. बकरी पालन

कम लागत, अधिक लाभः बकरी पालन छोटे किसानों के लिए अत्यंत उपयुक्त व्यवसाय है। इसे "गरीबों की गाय" भी कहा जाता है।

प्रमुख लाभः

* कम पूंजी निवेश * तेज प्रजनन दर * कम रखरखाव * मांस और दूध दोनों में बाजार मांग

नस्ल चयनः

* **मांस हेतुः** सिरोही, बरबरी
* **दूध हेतुः** जमुनापारी

राज्य सरकारें बकरी पालन हेतु सब्सिडी और प्रशिक्षण देती हैं। पशुपालन विभाग से संपर्क कर योजना की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

3. मछली पालन

जल से आयः भारत में मछली की खपत तेजी से बढ़ रही है। मत्स्य पालन कम समय में अधिक लाभ देने वाला व्यवसाय है। मत्स्य क्षेत्र को बढ़ावा देने हेतु प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना (PMMSY) चलाई जा रही है।

संभावनाएं * तालाब, टैंक या बायोफ्लॉक तकनीक * मिश्रित मत्स्य पालन (रोहू, कतला, मृगल) * मछली बीज उत्पादन * प्रोसेसिंग व पैकेजिंग

सरकार द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से ऋण सुविधा भी उपलब्ध है।

4. मधुमक्खी पालन

मीठी क्रांति की ओरः कम भूमि वाले किसान भी मधुमक्खी पालन से अच्छा लाभ कमा सकते हैं। यह व्यवसाय खेती के साथ आसानी से किया जा सकता है। इस क्षेत्र के विकास में राष्ट्रीय मधुमक्खी बोर्ड और नाबार्ड महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

आय के स्रोतः * शहद * मधुमोम * रॉयल जेली * परागण सेवाएं। परागण के कारण फसल उत्पादन में 20-30% तक वृद्धि संभव है।

5. मुर्गी पालन

बढ़ती मांग का व्यवसायः आज अंडे और चिकन की मांग लगातार बढ़ रही है। शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में यह व्यवसाय तेजी से फैल रहा है।

लाभ * कम समय में उत्पादन * नियमित नकद आय * कम स्थान में अधिक मुर्गियाँ

पोल्ट्री उद्योग को बढ़ावा देने में नाबार्ड सहायता प्रदान करता है। सरकार सामान्य वर्ग को 25% और एससी/एसटी वर्ग को 35% तक सब्सिडी प्रदान करती है।

मशरूम उत्पादन

कम जगह में ज्यादा आयः मशरूम उत्पादन आज तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। यह कम जगह में, कम समय में और कम निवेश में शुरू किया जा सकता है।

विशेषताएँः कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) द्वारा प्रशिक्षण उपलब्ध है।

* 30-45 दिन में उत्पादन
* उच्च पोषण मूल्य
* होटल व सुपरमार्केट में उच्च मांग

7. जैविक खेती और प्रोसेसिंग

आज उपभोक्ता जैविक उत्पादों को प्राथमिकता दे रहे हैं। यदि किसान जैविक सब्जी, अनाज या मसाला उत्पादन के साथ पैकेजिंग और ब्रांडिंग करें, तो मुनाफा कई गुना बढ़ सकता है।

एकीकृत कृषि प्रणाली (Integrated Farming System): यदि किसान निम्नलिखित मॉडल अपनाएँ तो जोखिम कम और आय अधिक होगीः

* फसल + डेयरी
* फसल + मछली
* फसल + मधुमक्खी
* फसल + पोल्ट्री

इससे संसाधनों का पुनर्चक्रण होता है और लागत घटती है।

मार्केटिंग और ब्रांडिंग की आवश्यकता

आज के युग में केवल उत्पादन पर्याप्त नहीं है। किसान यदिः

* सीधे उपभोक्ता से जुड़ें
* किसान उत्पादक संगठन (FPO) बनाएं
* ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का उपयोग करें
* स्थानीय ब्रांड विकसित करें तो उन्हें अधिक लाभ मिल सकता है।

आय बढ़ाने की रणनीति

1.विविधीकरण अपनाएँ
2.सरकारी योजनाओं का लाभ लें
3.प्रशिक्षण प्राप्त करें 4.बाजार की मांग समझें
5.वैल्यू एडिशन करें

निष्कर्ष

कृषि अब केवल जीविकोपार्जन का साधन नहीं, बल्कि एक संगठित व्यवसाय बन चुकी है। यदि किसान आधुनिक तकनीक, सरकारी योजनाओं और सहायक व्यवसायों को अपनाते हैं, तो वे निश्चित रूप से अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं। अब समय है : सोच बदलने का, खेती को उद्यम में बदलने का और आत्मनिर्भर किसान बनने का।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

डिजिटल जेल से आज़ादी : क्या तकनीक आपको नियंत्रित कर रही है?

मीनू शोध छात्रा, **कविता दुआ** सह- प्राध्यापक संसाधन प्रबंधन और उपभोक्ता विज्ञान विभाग, इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

यशपाल यादव शोध छात्र, फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग, कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी एंड इंजीनियरिंग, एमपीयूएटी, उदयपुर

आज के दौर में एक पुरानी कहावत बदल गई है- अब इंसान 'सोशल एनिमल' नहीं, 'सोशल मीडिया एनिमल' बन गया है। हम एक ऐसे चक्रव्यूह में फंस गए हैं जहाँ सुबह की पहली किरण सूरज से नहीं, बल्कि मोबाइल की स्क्रीन से आती है। क्या आपने कभी महसूस किया है कि बिना वजह स्क्रॉल करते-करते आपके कीमती दो घंटे कब निकल गए? अगर हाँ, तो आपको किसी दवाई की नहीं, बल्कि 'डिजिटल डिटॉक्स' (Digital Detox) की सख्त ज़रूरत है। आइए जानते हैं यह क्या है और इसकी ज़रूरत हमें क्यों है?

डिजिटल डिटॉक्स : एक मानसिक शुद्धिकरण

सरल शब्दों में कहें तो, डिजिटल डिटॉक्स एक ऐसी अवधि या समय है जिसमें व्यक्ति स्वेच्छा से स्मार्टफोन, कंप्यूटर, टैबलेट और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे डिजिटल उपकरणों का उपयोग करना बंद कर देता है। जैसे हम शरीर से गंदगी निकालने के लिए 'बॉडी डिटॉक्स' करते हैं, वैसे ही मस्तिष्क से डिजिटल कचरा और तनाव निकालने के लिए 'डिजिटल डिटॉक्स' किया जाता है। इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि आप तकनीक के दुश्मन बन जाएं, बल्कि इसका उद्देश्य तकनीक के साथ एक स्वस्थ संतुलन (Healthy Balance) बनाना है। यह आपको याद दिलाता है कि वर्चुअल दुनिया के बाहर भी एक असली दुनिया है, जहाँ लोग, प्रकृति और असली भावनाएं मौजूद हैं।

क्यों ज़रूरी है यह 'ब्रेक'?

आजकल हम 'फियर ऑफ मिसिंग आउट' (FOMO) के शिकार हैं। हमें डर लगता है कि कहीं कोई अपडेट छूट न जाए। इसी चक्कर में:

एकाग्रता (Focus) की कमी: शोध बताते हैं कि बार-बार फोन चेक करने से हमारी 'डीप वर्क' करने की क्षमता 40% तक कम हो जाती है।

मानसिक थकान: हर वक्त सूचनाओं का बोझ हमारे दिमाग को थका देता है, जिससे चिड़चिड़ापन बढ़ता है।

नींद का दुश्मन: मोबाइल से निकलने वाली 'ब्लू लाइट' हमारे शरीर के स्लीप हार्मोन (Melatonin) को रोक देती है, जिससे अनिद्रा और थकान बनी रहती है।

तुलना का जाल: दूसरों की 'रील्स' देखकर हम अपनी असल ज़िंदगी को कमतर आंकने लगते हैं।

आत्म-परीक्षण: क्या आप भी इस लत के शिकार हैं ?

पाठकों के लिए एक लघु परीक्षण

* क्या आप भोजन करते समय भी फोन का उपयोग करते हैं?
* क्या नोटिफिकेशन न होने पर भी आप बार-बार फोन चेक करते हैं?
* क्या आप देर रात तक नीली रोशनी (Screen Light) में डूबे रहते हैं?

संकेत: यदि इन प्रश्नों का उत्तर 'हाँ' है, तो आपका मस्तिष्क डिजिटल थकान का शिकार हो चुका है।

डिजिटल डिटॉक्स के 5 व्यावहारिक तरीके

1.ग्रे-स्केल का प्रयोग: अपने फोन की सेटिंग्स में जाकर स्क्रीन को ब्लैक एंड व्हाइट (Grey Scale) कर दें। रंगीन ऐप्स दिमाग को ज़्यादा लुभाते हैं, ब्लैक एंड व्हाइट होने पर आप इनका मोह छोड़ पाएंगे।

2.बेडरूम में "नो फोन जोन": सोने से एक घंटा पहले फोन को खुद से दूर रखें। सुबह उठने के लिए अलार्म घड़ी का इस्तेमाल करें, फोन का नहीं।

3.सूचनाओं का प्रबंधन: अनावश्यक ऐप्स के नोटिफिकेशन स्थायी रूप से बंद करें। हर ध्वनि पर प्रतिक्रिया देना मानसिक एकाग्रता को भंग करता है।

4.20-20-20 का नियम: कार्य के दौरान हर 20 मिनट में, 20 फीट दूर किसी वस्तु को 20 सेकंड तक देखें। यह आँखों और मस्तिष्क के लिए वरदान है।

5.डिजिटल उपवास (Digital Fasting): हफ्ते में एक दिन, जैसे रविवार, तय करें जब आप सोशल मीडिया से पूरी तरह दूर रहेंगे। उस समय को अपनी पुरानी हॉबी या परिवार के साथ बिताएं।

इसके सकारात्मक परिणाम

जब आप स्क्रीन से दृष्टि हटाते हैं, तो आपको मिलता है:

गहरी एकाग्रता: आप अपने कार्य को कम समय में बेहतर ढंग से कर पाते हैं।

भावनात्मक जुड़ाव: परिवार और मित्रों के साथ संबंधों में प्रगाढ़ता आती है।

बेहतर मानसिक स्वास्थ्य: तुलना और तनाव का स्तर स्वतः ही कम होने लगता है।

निष्कर्ष

तकनीक हमारी सुविधा के लिए बनी है, हमें उसका दास बनाने के लिए नहीं। आपकी असली ज़िंदगी स्क्रीन के पिक्सल में नहीं, बल्कि उन पलों में है जिन्हें आप बिना फोन के जीते हैं। इस डिजिटल युग में, थोड़ा 'ऑफलाइन' होना ही सबसे बड़ा 'लक्ज़री' है।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

दूधिया मशरूम : ग्रीष्मकालीन लाभदायक खेती

डॉ. आदित्य कृषि और पर्यावरण विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी उद्यमशीलता एवं प्रबंधन संस्थान (निफ्टेम-के), सोनीपत, हरियाणा खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत भारत का राष्ट्रीय महत्व का संस्थान

प्रो. (डॉ.) जे.एन. भाटिया सेवानिवृत्त वरिष्ठ-मुख्य वैज्ञानिक, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा एवं विजिटिंग प्रोफेसर, श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व विश्वविद्यालय, फतेहगढ़ साहिब, पंजाब

दूधिया मशरूम पर परिचय-दूधिया मशरूम एक उष्णकटिबंधीय प्रजाति है, जो विशेष रूप से गर्मियों के मौसम में आसानी से उगाई जा सकती है। इसकी खेती न केवल किसानों के लिए अतिरिक्त आय का स्रोत है, बल्कि पोषण की दृष्टि से भी यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। दूधिया मशरूम प्रोटीन का अच्छा स्रोत है और इसमें वसा की मात्रा बहुत कम होती है, जिससे यह स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों के लिए उपयुक्त है। इसमें विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स (जैसे बी2, बी3, बी5), विटामिन D तथा खनिज जैसे पोटैशियम, फॉस्फोरस और आयरन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर होता है, जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक हैं। इसके नियमित सेवन से हृदय स्वास्थ्य में सुधार, पाचन तंत्र को मजबूती, तथा वजन नियंत्रण में भी मदद मिलती है। दूधिया मशरूम की खेती कम लागत में शुरू की जा सकती है और इसके लिए अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं होती। यह 25-35°C तापमान पर अच्छी तरह उगता है, जिससे यह ग्रीष्मकालीन खेती के लिए आदर्श बनता है। इसकी शेल्फ लाइफ अन्य मशरूम की तुलना में अधिक होती है, जिससे परिवहन और विपणन में सुविधा होती है। इसके अतिरिक्त, यह ग्रामीण युवाओं और छोटे किसानों के लिए स्वरोजगार का एक बेहतर विकल्प है। इस प्रकार, दूधिया मशरूम की खेती न केवल आर्थिक दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि पोषण और स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत उपयोगी है।

दूधिया मशरूम की विशेषताएँ, उपयुक्त समय, तापमान-आर्द्रता तथा पौषाधार का विवरण-दूधिया मशरूम, जिसका वैज्ञानिक नाम कैलोसाइबे इंडिका है, यह एक उष्णकटिबंधीय प्रजाति है जिसे सामान्यत 'मिल्की मशरूम' के नाम से जाना जाता है। यह मशरूम अपने सफेद, मांसल एवं आकर्षक फलनिकाय के कारण बाजार में विशेष पहचान रखता है। इसकी एक प्रमुख विशेषता यह है कि अन्य मशरूम प्रजातियों की तुलना में यह अधिक समय तक ताजगी बनाए रखता है, जिससे इसके भंडारण और विपणन में सुविधा होती है। इसके अतिरिक्त, यह उच्च तापमान सहन करने की क्षमता रखता है, जो इसे विशेष रूप से गर्मियों में खेती हेत उपयुक्त बनाता है। दूधिया मशरूम की खेती हेतु मध्य फरवरी से अक्टूबर तक का समय सबसे अनुकूल माना जाता है। इस अवधि में भारत के अधिकांश क्षेत्रों में तापमान और आर्द्रता इसके विकास के लिए उपयुक्त रहते हैं, जिससे उत्पादन अच्छा प्राप्त होता है। इसकी सफल खेती के लिए 25°C से 35°C तापमान तथा 70-85% आर्द्रता आवश्यक होती है। यही कारण है कि यह मशरूम उच्च तापमान में भी अच्छी वृद्धि करता है और अन्य मशरूम प्रजातियों की तुलना में अधिक सहनशील माना जाता है। पौषाधार के रूप में गेहूँ का भूसा और धान का पुआल सबसे अधिक उपयोग किए जाते हैं। ये दोनों कृषि अपशिष्ट आसानी से उपलब्ध होते हैं और कम लागत में प्राप्त हो जाते हैं, जिससे दुधिया मशरूम की खेती आर्थिक रूप से लाभकारी बनती है। इन सब विशेषताओं के कारण दुधिया मशरूम न केवल उगाने में सरल है, बल्कि किसानों हेतु एक व्यावसायिक रूप से लाभदायक विकल्प भी है।

खेती की विधि- माध्यम तैयार करने के लिए भूसे को 24 घंटे तक पानी में भिगोकर 2-3 घंटे तक उबाला जाता है। अतिरिक्त पानी को निधार कर एवं ठंडा कर इस भूसे में 5 प्रतिशत की दर से गेहूँ का चोकर अच्छी तरह मिलाकर उसमें 4 प्रतिशत की दर से बीजाई की जाती है। बीजाई किए हुए माध्यम को पॉलीथिन के बैगों में भरकर 20°-30°C तापमान पर 20-40 दिन तक रखा जाता है। स्पान के माध्यम से फैलने के बाद दो वर्ष पुरानी गोबर की खाद को शोधित करके आवरण मृदा (4 सेंमी.) बिछा दी जाती है। तथा तापमान 30°C से अधिक रखा जाता है। आवरण मृदा बिछने के बाद फसल में प्रतिदिन दो बार पानी दिया जाता है। आवरण मृदा बिछाने के 10-12 दिन बाद मशरूम निकलना प्रारम्भ होते हैं जो कि 5-6 दिन बाद तोड़ने योग्य हो जाते हैं। प्रति किग्रा. भूसे से 500-600 ग्राम तक मशरूम प्राप्त किये जा सकते हैं। इस मशरूम को उगाने का मुख्य लाभ यह है कि यह ग्रीष्म ऋतु में 35°C पर भी उगाया जा सकता है जबकि वालवेरियल्ला के अलावा अन्य मशरूम नहीं उगाये जा सकते हैं तथा इसको तुड़ाई के बाद कमरे के तापक्रम पर अन्य मशरूम की तुलना में सबसे अधिक समय तक रखा जा सकता है। मशरूम को ताजा उपयोग करने के अतिरिक्त धूप में सुखाकर, डिबाबन्दी द्वारा अथवा अचार बनाकर लम्बे समय तक रखा जा सकता है।

पोषण एवं औषधीय महत्व-दूधिया मशरूम भारत में व्यावसायिक रूप से उगाई जाने वाली तीसरी प्रमुख मशरूम प्रजाति है, जो बटन और ऑयस्टर मशरूम के बाद आती है। इसकी मजबूत संरचना इसे विभिन्न व्यंजनों में उपयोग के लिए उपयुक्त बनाती है। पोषण की दृष्टि से दूधिया मशरूम एक उच्च-प्रोटीन खाद्य स्रोत है, जिसमें सूखे वजन के आधार पर लगभग 20% से 30% तक प्रोटीन पाया जाता है, जो कई अन्य खाद्य मशरूम के बराबर या उनसे अधिक है। इसमें वसा की मात्रा बहुत कम (लगभग 2-4% सूखा वजन) होती है, जिसमें मुख्यत लाभकारी असंतृप्त फैटी एसिड जैसे लिनोलिक अम्ल पाए जाते हैं। यह मशरूम विटामिन बी-समूह (लगभग 1.95 mg/100 g), विटामिन D, विटामिन C (लगभग 1.03 mg/100 g ताजा वजन) और विटामिन E (लगभग 0.8 mg/g सूखा वजन) का अच्छा स्रोत है। खनिजों में पोटैशियम (लगभग 28,209 ppm) और फॉस्फोरस (381-469 ppm) प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसके अलावा इसमें लगभग 10-15% आहार रेशा (डायटरी फाइबर) होता है, जो पाचन स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। अन्य मशरूम जैसे बटन या ऑयस्टर की तुलना में दुधिया मशरूम की शेल्फ लाइफ अधिक होती है, जो सामान्य परिस्थितियों में लगभग एक सप्ताह तक ताजा रह सकता है। इसकी सघन एवं ठोस संरचना इसे उष्णकटिबंधीय परिस्थितियों में बिना रेफ्रिजरेशन के भी खराब होने से बचाती है। खाद्य उपयोग की दृष्टि से यह मशरूम अत्यंत बहुउपयोगी है और इसे सब्जी, सूप, करी, स्टिर-फ्राई, पिज़्ज़ा टॉपिंग तथा बेकरी उत्पादों (जैसे कुकीज़) में प्रयोग किया जाता है। इसे सुखाकर या कैनिंग के माध्यम से भी संरक्षित किया जा सकता है, जिससे इसकी उपलब्धता पूरे वर्ष बनी रहती है। दूधिया मशरूम में कई जैव सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं, जिनमें पॉलीसैकेराइड्स (जैसे ब-ग्लूकान और कैलोसाइबन), फिनोलिक अम्ल (कैफिक अम्ल, सिरिंगिक अम्ल, p-कौमारिक अम्ल) तथा फ्लेवोनॉइड्स (रूटिन और कैटेचिन) शामिल हैं। ये यौगिक प्रबल एंटीऑक्सीडेंट गुण प्रदर्शित करते हैं और शरीर में मुक्त कणों को निष्क्रिय करने में सहायक होते हैं। इस मशरूम के अर्क में जीवाणुरोधी गुण भी पाए गए हैं, जो ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव दोनों प्रकार के बैक्टीरिया के विरुद्ध प्रभावी हैं। इसके अतिरिक्त, इसमें सूजनरोधी गुण भी होते हैं, जो प्रोटीन डिनैचुरेशन को कम करने और कोशिका झिल्ली को स्थिर करने में सहायक होते हैं। कैंसररोधी क्षमता के संदर्भ में भी दूधिया मशरूम के अर्क ने विभिन्न कोशिका लाइनों (जैसे HeLa, PC3, HT29, HepG2 और MCF-7) में कोशिका वृद्धि को रोकने की क्षमता प्रदर्शित की है। हाल के अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि यह सर्वाइकल कैंसर कोशिकाओं पर प्रभावी हो सकता है, विशेष रूप से VEGF जैसे आणविक लक्ष्यों के साथ अंतःक्रिया के माध्यम से। इसके अतिरिक्त, इसके अर्क घाव भरने में सहायक पाए गए हैं, जो इसके एंटीमाइक्रोबियल और एंटी-इन्फ्लेमेटरी गुणों के कारण ऊतक मरम्मत को बढ़ावा देते हैं। मधुमेह प्रबंधन में भी यह उपयोगी सिद्ध हुआ है, जहाँ इसके मेथेनॉलिक अर्क ने रक्त शर्करा स्तर को कम करने में प्रभाव दिखाया है। प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में भी यह मशरूम सहायक है, क्योंकि इसमें उपस्थित ग्लूकान और प्रोटीन नैचुरल किलर कोशिकाओं, मैक्रोफेज तथा स्प्लेनोसाइट्स को सक्रिय कर शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। इसकी अधिक शेल्फ लाइफ इसके जैव सक्रिय क्रिय यौगिकों को लंबे समय तक संरक्षित रखने में भी सहायक होती है।

आर्थिक महत्व: दूधिया मशरूम की खेती वर्तमान समय में एक उभरता हुआ लाभकारी एग्री-बिजनेस मॉडल बनकर सामने आई है, विशेषकर उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में जहाँ अन्य मशरूम प्रजातियाँ सीमित होती हैं। इसकी खेती में प्रारंभिक निवेश अपेक्षाकृत कम होता है क्योंकि इसमें उपयोग होने वाला पौषाधार-गेहूँ का भूसा या धान का पुआल-आसानी से उपलब्ध कृषि अपशिष्ट हैं। इससे उत्पादन लागत नियंत्रित रहती है और लाभांश अधिक प्राप्त होता है। सामान्यतः 1 किलोग्राम सूखे भूसे से 500-800 ग्राम तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। बाजार की दृष्टि से भी दूधिया मशरूम की मांग निरंतर बढ़ रही है, विशेषकर स्वास्थ्य-जागरूक उपभोक्ताओं के बीच। इसकी मजबूत बनावट, आकर्षक रंग तथा अधिक शेल्फ-लाइफ इसे परिवहन एवं विपणन के लिए उपयुक्त बनाती है। यह मशरूम स्थानीय बाजारों के साथ-साथ होटल, रेस्टोरेंट, सुपरमार्केट तथा प्रोसेस्ड फूड उद्योग में भी उपयोगी है। इसके अतिरिक्त, मूल्य संवर्धित उत्पाद-जैसे सूखे मशरूम, अचार, पाउडर एवं कैनिंग के माध्यम से किसानों एवं उद्यमियों को अतिरिक्त आय के अवसर प्राप्त होते हैं। ग्रामीण युवाओं, महिला स्वयं सहायता समूहों तथा छोटे किसानों हेतु यह स्वरोजगार और सूक्ष्म उद्यमिता का एक प्रभावी साधन सिद्ध हो सकता है, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी मजबूती मिलती है।

निष्कर्ष: समग्र रूप से देखा जाए तो दूधिया मशरूम की खेती एक वैज्ञानिक, टिकाऊ एवं आर्थिक रूप से व्यवहार्य कृषि प्रणाली है, जो विशेष रूप से ग्रीष्मकालीन परिस्थितियों में अत्यंत सफल सिद्ध होती है। इसकी उच्च तापमान सहनशीलता, बेहतर पोषण गुणवत्ता, औषधीय गुण एवं लंबी शेल्फ-लाइफ इसे अन्य मशरूम प्रजातियों से अलग पहचान प्रदान करते हैं। साथ ही, इसकी सरल खेती तकनीक एवं कम लागत इसे छोटे और सीमांत किसानों के लिए भी सुलभ बनाती है। भविष्य की दृष्टि से, यदि उन्नत उत्पादन तकनीकों, गुणवत्ता नियंत्रण, एवं प्रसंस्करण पर ध्यान दिया जाए, तो दूधिया मशरूम न केवल घरेलू बाजार बल्कि निर्यात बाजार में भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार, दूधिया मशरूम की खेती पोषण सुरक्षा, आय वृद्धि तथा सतत कृषि विकास तीनों के लिए एक सशक्त माध्यम के रूप में स्थापित हो सकती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

शिमला मिर्च में होने वाले सामान्य नर्सरी रोग और उनका प्रबंधन

सृष्टि पीएच.डी. शोधार्थी, सब्जी विज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश-173230

डॉ. सतीश कुमार शर्मा प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, पादप रोग विज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश

डॉ. अंजू शर्मा सहायक प्रोफेसर, बुनियादी विज्ञान विभाग, वानिकी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश

सारांश

कैप्सिकम (कैप्सिकम एनम एल.) एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है जिसकी खेती इसके पोषण और आर्थिक महत्व के कारण व्यापक रूप से की जाती है। अच्छी पैदावार और गुणवत्तापूर्ण फल प्राप्त करने के लिए स्वस्थ पौधे आवश्यक हैं। हालांकि, नर्सरी स्तर पर होने वाले रोग अक्सर पौधों की भारी मृत्यु दर और खराब विकास का कारण बनते हैं। इनमें से, डैम्पिंग-ऑफ, जड़ सड़न और पौध झुलसा रोग कैप्सिकम की नर्सरी को प्रभावित करने वाली सबसे आम समस्याएं हैं। ये रोग मुख्य रूप से मिट्टी जनित रोगजनकों जैसे कि पाइथियम, राइजोक्टोनिया, फ्यूजेरियम और फाइटोफ्थोरा के कारण होते हैं। उचित स्वच्छता, बीज उपचार, मिट्टी का रोगाणुशोधन और एकीकृत रोग प्रबंधन रणनीतियों सहित प्रभावी नर्सरी प्रबंधन पद्धतियां इन रोगों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह लेख कैप्सिकम के सामान्य नर्सरी रोगों और स्वस्थ पौधों के उत्पादन के लिए उनके व्यावहारिक प्रबंधन उपायों पर चर्चा करता है।

परिचय

शिमला मिर्च अपनी उच्च बाजार मांग और पोषण संबंधी महत्व के कारण सबसे व्यापक रूप से उगाई जाने वाली सब्जियों में से एक है। यह विटामिन, एंटीऑक्सीडेंट और खनिजों से भरपूर है, जो इसे मानव आहार का एक अनिवार्य घटक बनाता है। शिमला मिर्च की सफल खेती काफी हद तक रोपाई से पहले नर्सरी में उगाए गए पौधों की गुणवत्ता और स्वास्थ्य पर निर्भर करती है। नर्सरी अवस्था फसल उत्पादन का एक महत्वपूर्ण चरण है क्योंकि छोटे पौधे रोगों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। अत्यधिक नमी, खराब जल निकासी, दूषित मिट्टी और नर्सरी के अनुचित प्रबंधन जैसी प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियाँ रोगों के तेजी से फैलने का कारण बन सकती हैं। गंभीर मामलों में, ये रोग पौधों के एक बड़े हिस्से को नष्ट कर सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप किसानों को आर्थिक नुकसान होता है। इसलिए, शिमला मिर्च में होने वाले सामान्य नर्सरी रोगों को समझना और उचित प्रबंधन पद्धतियों को अपनाना स्वस्थ पौधों के उत्पादन को सुनिश्चित करने और समग्र फसल उत्पादकता में सुधार करने के लिए आवश्यक है।

शिमला मिर्च में नर्सरी में होने वाले आम रोग

1.डैम्पिंग-ऑफ रोग

डैम्पिंग-ऑफ शिमला मिर्च की नर्सरी को प्रभावित करने वाले सबसे विनाशकारी रोगों में से एक है। यह मुख्य रूप से पौधों की शुरुआती वृद्धि के दौरान होता है।

कारक जीव: पाइथियम एसपीपी., राइजोक्टोनिया सोलानी, फ्यूजेरियम एसपीपी. और फाइटोफ्थोरा एसपीपी.

डैम्पिंग-ऑफ के प्रकार

* **अंकुरण-पूर्व डैम्पिंग-ऑफ:** अंकुरण से पहले ही बीज मिट्टी में सड़ जाते हैं।

* **अंकुरण-पश्चात डैम्पिंग-ऑफ:** मिट्टी से निकलने के बाद छोटे पौधे मुरझा जाते हैं और मर जाते हैं।

लक्षण * बीजों का कम अंकुरण * मिट्टी की सतह के पास पानी से भीगे हुए घाव * कमजोर और गिरे हुए पौधे * पौधों का तेजी से मरना

प्रबंधन * स्वस्थ और प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। * बुवाई से पहले बीजों को कार्बेन्डाज़िम या थिरम जैसे फफूंदनाशकों से उपचारित करें। * पौधों के बीच उचित दूरी बनाए रखें और उन्हें बहुत पास-पास न बोएं। * जल निकासी अच्छी रखें और अत्यधिक सिंचाई से बचें। * बुवाई से पहले मिट्टी को सौर उपचारित करने से रोगजनकों का भार कम करने में मदद मिल सकती है। * ट्राइकोडर्मा जैसे जैविक एजेंटों का प्रयोग मिट्टी जनित रोगजनकों को नियंत्रित करने में सहायक होता है।

2.जड़ सड़न: जड़ सड़न शिमला मिर्च के छोटे पौधों की जड़ों को प्रभावित करने वाली एक और आम नर्सरी बीमारी है।

कारक जीव: फ्यूज़ेरियम एसपीपी., राइजोक्टोनिया सोलानी और फाइटोफ्थोरा एसपीपी.

लक्षण * पौधों का पीला पड़ना और मुरझाना * जड़ों का कम विकास * जड़ों का भूरा पड़ना और सड़ना * विकास में रुकावट

प्रबंधन * अच्छी जल निकासी वाली नर्सरी क्यारियों का उपयोग करें। * जलभराव से बचें। * लाभकारी सूक्ष्मजीवों से भरपूर खाद जैसे जैविक संशोधनों का प्रयोग करें। * यदि रोग के लक्षण दिखाई दें तो नर्सरी क्यारियों को उपयुक्त फफूंदनाशकों से अच्छी तरह भिगो दें।

3.पौध झुलसा रोग:

पौध झुलसा रोग शिमला मिर्च के छोटे पौधों की पत्तियों और तनों को प्रभावित करता है।

कारक जीव: विभिन्न कवक रोगजनक, मुख्य रूप से मिट्टी में पाए जाने वाले कवक।

लक्षण * तनों और पत्तियों पर गहरे धब्बे * कमजोर और बौने पौधे * पौधों का धीरे-धीरे सूखना और मर जाना

प्रबंधन

* नर्सरी की स्वच्छता बनाए रखें। * संक्रमित पौधों को तुरंत हटाकर नष्ट कर दें। * नर्सरी की क्यारियों में पर्याप्त धूप और हवा का संचार सुनिश्चित करें। * आवश्यकता पड़ने पर निवारक कवकनाशी का छिड़काव करें।

शिमला मिर्च की नर्सरी में एकीकृत रोग प्रबंधन: नर्सरी में होने वाले रोगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने हेतु, कृषि, जैविक और रासायनिक विधियों को मिलाकर एक एकीकृत दृष्टिकोण अपनाने की सलाह दी जाती है।

कृषि पद्धतियाँ * नर्सरी बेड के लिए अच्छी जल निकासी वाली जगह चुनें। * नर्सरी में पौधे उगाने के लिए एक ही मिट्टी का बार-बार उपयोग करने से बचें। * पौधों के बीच उचित दूरी बनाए रखें। * जल निकासी में सुधार के लिए ऊंचे बेड का उपयोग करें।

जैविक नियंत्रण * ट्राइकोडर्मा और स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस जैसे लाभकारी सूक्ष्मजीवों का उपयोग करें। * जैविक नियंत्रण एजेंटों से समृद्ध जैविक पदार्थ मिलाएं।

रासायनिक नियंत्रण * अनुशंसित फफूंदनाशकों से बीजों का उपचार करें। * रोग के लक्षण दिखाई देने पर फफूंदनाशकों से मिट्टी को अच्छी तरह भिगो दें।

नर्सरी का अच्छा प्रबंधन * अत्यधिक सिंचाई से बचें। * पर्याप्त धूप और हवा का संचार सुनिश्चित करें। * रोग के प्रसार को रोकने के लिए रोगग्रस्त पौधों को तुरंत हटा दें।

निष्कर्ष

स्वस्थ पौधे शिमला मिर्च की सफल खेती की नींव हैं। नर्सरी में होने वाली बीमारियाँ जैसे कि पौधों का मुरझाना, जड़ सड़न और पौध झुलसा रोग, अगर सही ढंग से नियंत्रित न की जाएँ तो पौधों के जीवित रहने की दर को काफी कम कर सकती हैं और फसल की उत्पादकता को प्रभावित कर सकती हैं। बीज उपचार, मिट्टी कीटाणुशोधन, उचित सिंचाई और जैविक नियंत्रण उपायों सहित एकीकृत रोग प्रबंधन पद्धतियों को अपनाने से इन बीमारियों की व्यापकता को कम किया जा सकता है। इन निवारक और प्रबंधन रणनीतियों को लागू करके किसान स्वस्थ शिमला मिर्च के पौधे उगा सकते हैं, पौधों की बेहतर वृद्धि सुनिश्चित कर सकते हैं और अंततः अधिक पैदावार और बेहतर फसल गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

जलवायु परिवर्तन और पादप रोगों का उभरता खतरा

वसुंधरा नेगी, कुमुद जारियल
आर. एस. जारियल
पादप रोग विज्ञान विभाग, औद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, नेरी, हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश)
डॉ. यशवंत सिंह परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन–173230 (हिमाचल प्रदेश)

परिचय: जलवायु परिवर्तन इक्कीसवीं सदी की सबसे गंभीर वैश्विक चुनौतियों में से एक बन चुका है, जिसका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव कृषि उत्पादन और खाद्य सुरक्षा पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है। वैश्विक तापमान में निरंतर वृद्धि, वर्षा के स्वरूप में अनियमितता, चरम मौसम घटनाओं की बढ़ती आवृत्ति, सूखा, बाढ़ तथा वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड की बढ़ी हुई सांद्रता ने कृषि पारितंत्र को गहराई से प्रभावित किया है। इन परिवर्तनों के कारण फसल, रोगजनक और पर्यावरण के बीच संतुलन में गंभीर अस्थिरता उत्पन्न हो गई है। पादप रोग विज्ञान के संदर्भ में जलवायु परिवर्तन ने पहले से नियंत्रित या गौण माने जाने वाले रोगों के पुनरुत्थान, नए रोगों के उद्भव तथा रोगों के भौगोलिक विस्तार जैसी जटिल समस्याओं को जन्म दिया है, जिससे टिकाऊ कृषि के समक्ष नई चुनौतियाँ उत्पन्न हो रही हैं।

जलवायु परिवर्तन के घटकों का पादप रोगों पर प्रभाव: जलवायु परिवर्तन के विभिन्न घटक पादप रोगों की उत्पत्ति, विकास और प्रसार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। तापमान में वृद्धि, वर्षा के पैटर्न में बदलाव, आर्द्रता और ओस की अवधि में परिवर्तन, वायुमंडलीय CO2 की बढ़ती सांद्रता तथा चरम मौसम घटनाएँ रोगजनकों के जीवन-चक्र, उनकी आक्रामकता और मेज़बान पौधों की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित करती हैं। इन सभी कारकों का संयुक्त प्रभाव रोग महामारी की संभावना को बढ़ा देता है।

तापमान वृद्धि का पादप रोगों पर प्रभाव: तापमान पादप रोगजनकों के जीवन-चक्र को नियंत्रित करने वाला एक अत्यंत महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारक है। तापमान में वृद्धि के साथ अनेक फफूंद, जीवाणु तथा विषाणु रोगजनकों की वृद्धि दर, बीजाणु उत्पादन और संक्रमण क्षमता में तीव्रता देखी जाती है। इसके परिणामस्वरूप ऐसे रोगजनक, जो पूर्व में केवल उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों तक सीमित थे, अब समशीतोष्ण तथा पर्वतीय क्षेत्रों में भी दिखाई देने लगे हैं। इसके अतिरिक्त, तापमान वृद्धि के कारण कीट-वाहक जनित रोगों में भी उल्लेखनीय वृद्धि हो रही है क्योंकि कीटों का जीवन-चक्र छोटा हो जाता है और उनकी प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है। गेहूँ में रस्ट रोगों तथा धान में ब्लास्ट रोग की तीव्रता और प्रसार में हाल के वर्षों में देखे गए परिवर्तन इसका स्पष्ट उदाहरण हैं।

वर्षा एवं आर्द्रता में परिवर्तन का प्रभाव: वर्षा और आर्द्रता पादप रोगों, विशेषकर फफूंद और जीवाणु जनित रोगों के विकास हेतु अत्यंत अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करती हैं। अत्यधिक वर्षा के कारण खेतों में जलभराव की स्थिति उत्पन्न होती है, जिससे जड़ एवं तना सड़न जैसे रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है। लंबे समय तक उच्च आर्द्रता बनी रहने से पत्तियों पर रोगजनकों का संक्रमण तीव्र हो जाता है और रोग तेजी से फैलता है। वहीं दूसरी ओर, अनियमित और अप्रत्याशित वर्षा रोगों के पूर्वानुमान को कठिन बना देती है, जिससे किसानों के लिए समय पर और प्रभावी रोग प्रबंधन संभव नहीं हो पाता।

वायुमंडलीय CO2 वृद्धि और रोग-मेज़बान अंत:क्रिया- वायुमंडलीय CO2 की बढ़ती सांद्रता पौधों की वृद्धि और प्रकाश संश्लेषण को प्रारंभिक अवस्था में बढ़ा सकती है, किंतु इसका दीर्घकालिक प्रभाव अत्यंत जटिल होता है। अधिक CO2 की उपस्थिति में पौधों की पत्तियाँ अधिक घनी और कोमल हो जाती हैं, जिससे रोगजनकों को संक्रमण के लिए अधिक सतह उपलब्ध होती है। साथ ही पौधों की पोषण संरचना में होने वाले परिवर्तन उनकी प्राकृतिक रोग-प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित कर सकते हैं। कुछ परिस्थितियों में यह भी देखा गया है कि बढ़ी हुई CO2 सांद्रता के कारण रोगजनकों की आक्रामकता और रोग उत्पन्न करने की क्षमता में वृद्धि हो सकती है।

नए एवं उभरते पादप रोग-जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप नए पादप रोगों का उद्भव तथा पुराने रोगों का पुनरुत्थान एक गंभीर चिंता का विषय बन गया है। कई ऐसे रोग, जिन्हें पहले गौण महत्व का माना जाता था, अब प्रमुख उत्पादन बाधा के रूप में उभर रहे हैं। बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप रोगजनकों में तीव्र अनुकूलन की क्षमता विकसित हो रही है, जिसके कारण उनकी नई जातियाँ उत्पन्न हो रही हैं। इसके अतिरिक्त, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, पौध सामग्री का आवागमन और बदलती जलवायु ने रोगजनकों के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में फैलाव को और अधिक बढ़ावा दिया है। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप अनेक प्रमुख फसलों में नए एवं पुनरुत्थानशील पादप रोगों की समस्या गंभीर होती जा रही है। गेहूँ में रस्ट रोगों, विशेषकर Ug99 स्टेम रस्ट (Puccinia graminis f. sp. tritici), का पुनरुत्थान इसका प्रमुख उदाहरण है, जिसे पहले नियंत्रित माना जाता था, किंतु उच्च तापमान सहनशील नई जातियों के विकास के कारण यह रोग पुनः उभर आया है तथा अफ्रीका से मध्य एवं दक्षिण एशिया तक फैल चुका है।

इसी प्रकार, धान में बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट (Xanthomonas oryzae pv. oryzae) उच्च तापमान एवं अधिक आर्द्रता की परिस्थितियों में अधिक तीव्र हो गया है, जहाँ रोगजनक की नई जातियाँ विकसित होकर प्रतिरोधी किस्मों को भी संक्रमित कर रही हैं। टमाटर में टमाटर ब्राउन रगोज़ फ्रूट वायरस (ToBRFV) एक नया उभरता हुआ वायरस रोग है, जो पहले सीमित क्षेत्रों तक ही था, किंतु अब अंतरराष्ट्रीय व्यापार और पौध सामग्री के आवागमन के कारण अनेक देशों में फैल चुका है तथा उच्च तापमान पर इसकी संक्रमण क्षमता और अधिक बढ़ जाती है। मिर्च में लीफ कर्ल रोग, जो Begomovirus द्वारा उत्पन्न होता है और सफेद मक्खी से प्रसारित होता है, बढ़ते तापमान के कारण वेक्टर की बढ़ी हुई जनसंख्या से अधिक गंभीर हो गया है, जिससे यह रोग अब गौण न रहकर प्रमुख उत्पादन बाधा बन गया है। इसी तरह, केला में फ्यूज़ेरियम विल्ट या पनामा रोग की TR4 जाति (Fusarium oxysporum f. sp. cubense) एक अत्यधिक आक्रामक नई जाति के रूप में उभरी है, जो पहले प्रतिरोधी मानी जाने वाली किस्मों को भी संक्रमित कर रही है तथा जलवायु परिवर्तन और अंतरराष्ट्रीय व्यापार ने इसके वैश्विक फैलाव को तीव्र कर दिया है। सेब में स्कैब रोग (Venturia inaequalis) का प्रकोप असामान्य वर्षा और लंबे समय तक बनी रहने वाली आर्द्र परिस्थितियों के कारण बढ़ा है, जिससे रोग की ऐसी नई जातियाँ उभरी हैं जो फफूंदनाशकों के प्रति सहनशील हैं। इसी क्रम में, मक्का में टार स्पॉट रोग (Phyllachora maydis), जो पहले केवल सीमित क्षेत्रों तक ही था, अब जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से तेजी से फैलने वाला एक उभरता हुआ पादप रोग बन गया है।

कीट-वाहक एवं रोगों का बढ़ता प्रकोप: जलवायु परिवर्तन से पहले (लगभग 1980-2000 की अवधि में) कीट-वाहक जनित रोगों के कारण फसल हानि अपेक्षाकृत सीमित मानी जाती थी। उस समय वैश्विक स्तर पर कीट-जनित रोगों से औसतन 10:15त्न तक उपज हानि दर्ज की जाती थी, जबकि भारत में यह हानि अधिकांश फसलों में 5:10त्न के दायरे में रहती थी। उदाहरणस्वरूप, धान में टुंग्रो रोग तथा बैंगन में लिटिल लीफ रोग का प्रकोप कुछ विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्रों तक सीमित था और महामारी की स्थिति दुर्लभ थी। सफेद मक्खी, एफिड एवं लीफहॉपर जैसे कीट-वाहकों की सक्रिय अवधि सामान्यतः 3-4 महीनों तक ही रहती थी। वर्तमान जलवायु परिवर्तन परिदृश्य (2000 के बाद) में स्थिति तेजी से बदली है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार बढ़ते तापमान के कारण कीट-वाहकों की प्रजनन दर में 20-30% तक वृद्धि दर्ज की गई है, जबकि उनकी सक्रियता अवधि 6-8 महीनों तक बढ़ गई है। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) के अनुमानों के अनुसार, वर्तमान में कीट-वाहक जनित रोगों के कारण वैश्विक स्तर पर 20-40% तक फसल उत्पादन हानि हो रही है। भारत में यह हानि कई संवेदनशील फसलों (कपास, सब्ज़ियाँ, दलहन) में 15-35% तक पहुंच चुकी है। कपास में सफेद मक्खी द्वारा फैलने वाले लीफ कर्ल रोग के कारण कुछ वर्षों में 30-50% तक उपज हानि दर्ज की गई है, जबकि टमाटर में येलो लीफ कर्ल वायरस के प्रकोप से 40-70% तक नुकसान की रिपोर्ट उपलब्ध है। इसी प्रकार, फाइटोप्लाज्मा जनित रोगों जैसे बैंगन लिटिल लीफ और तिल फायलोडी में रोग की व्यापकता पहले की तुलना में 2-3 गुना बढ़ी हुई पाई गई है।

जलवायु परिवर्तन और रोग प्रबंधन की चुनौतियां: बदलती जलवायु परिस्थितियों में पादप रोग प्रबंधन एक जटिल कार्य बनता जा रहा है। रोग पूर्वानुमान मॉडल की सटीकता में कमी आ रही है, जिससे समय पर चेतावनी देना कठिन हो गया है। वर्तमान में उपलब्ध अनेक फफूंदनाशकों की प्रभावशीलता घट रही है और रोगजनकों में प्रतिरोध की समस्या तेजी से उभर रही है। इसके साथ ही किसानों तक समय पर वैज्ञानिक सलाह और तकनीकी जानकारी पहुँचाना भी एक बड़ी चुनौती बन गया है।

जलवायु-स्मार्ट पादप रोग प्रबंधन रणनीतियां-जलवायु परिवर्तन की चुनौती का सामना करने के लिए जलवायु-स्मार्ट पादप रोग प्रबंधन रणनीतियों को अपनाना अत्यंत आवश्यक है। समन्वित रोग प्रबंधन के अंतर्गत सांस्कृतिक, जैविक और रासायनिक उपायों का संतुलित उपयोग किया जाना चाहिए तथा रोग-प्रतिरोधी किस्मों के विकास और उपयोग को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। पर्यावरण-अनुकूल उपायों के अंतर्गत जैव-नियंत्रक एजेंट्स, जैव-फफूंदनाशी और वनस्पति अर्कों का प्रयोग रोग नियंत्रण में सहायक सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त मौसम आधारित रोग चेतावनी प्रणाली, GIS, रिमोट सेंसिंग और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित निगरानी प्रणालियाँ रोग प्रबंधन को अधिक प्रभावी बना सकती हैं। अनुसंधान और नीति समर्थन के माध्यम से जलवायु-अनुकूल किस्मों का विकास तथा विस्तार सेवाओं और किसान प्रशिक्षण को सशक्त बनाना भी आवश्यक है।

निष्कर्ष: जलवायु परिवर्तन और पादप रोगों के बीच एक गहरा, जटिल और गतिशील संबंध विद्यमान है। बदलती जलवायु परिस्थितियों के साथ पादप रोगों का स्वरूप, तीव्रता और भौगोलिक वितरण निरंतर बदल रहा है, जो वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए एक गंभीर खतरा उत्पन्न करता है। इस चुनौती का सामना करने के लिए जलवायु-स्मार्ट कृषि पद्धतियों को अपनाना, उन्नत रोग निगरानी और पूर्वानुमान प्रणालियों को विकसित करना तथा समन्वित रोग प्रबंधन रणनीतियों को प्रभावी रूप से लागू करना अनिवार्य है। पादप रोग विज्ञान में नवाचार, अंतर्विषयक अनुसंधान और नीति-स्तरीय सहयोग ही भविष्य की टिकाऊ और सुरक्षित कृषि प्रणाली का आधार बन सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
झारखण्ड

हीट पम्प ड्रायर से फल-सब्जियों का संरक्षण और मूल्य संवर्धन: किसानों की आय बढ़ाने की आधुनिक तकनीक

डॉ. मो. इरफान अहमद अंसारी
सह-प्राध्यापक सह वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रधान अन्वेषक,
अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना
(फसलोपरांत अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी) कृषि अभियंत्रण
विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची, (झारखंड)

प्रस्तावना: भारत विश्व में फलों एवं सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। वर्तमान में देश में लगभग 107.24 मिलियन मीट्रिक टन फल तथा 204.84 मिलियन मीट्रिक टन सब्जियों का उत्पादन होता है। आहार रेशा, आवश्यक विटामिन, खनिज तत्व-विशेषकर इलेक्ट्रोलाइट्स तथा जैव-सक्रिय फाइटोकेमिकल्स की प्रचुर मात्रा के कारण फल एवं सब्जियां संतुलित एवं स्वास्थ्यवर्धक आहार का महत्वपूर्ण स्रोत मानी जाती हैं। इतने बड़े उत्पादन के बावजूद किसानों को अपनी उपज का अपेक्षित आर्थिक लाभ नहीं मिल पाता। इसका मुख्य कारण फलों एवं सब्जियों की अत्यधिक नाशवान प्रकृति है। इनमें सामान्यतः 80-95% तक नमी होती है जिसके कारण कटाई के बाद सूक्ष्मजीवों की वृद्धि, एंजाइमीय एवं रासायनिक अभिक्रियाएँ तथा रंग और बनावट में परिवर्तन तेजी से होने लगता है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 20-30% फल एवं सब्जियां कटाई के बाद नष्ट हो जाती हैं, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में भंडारण, शीत-श्रृंखला तथा प्रसंस्करण सुविधाएं सीमित हैं। इसके अतिरिक्त, जब उत्पादन के चरम समय में बाजार में बड़ी मात्रा में उपज पहुंचती है तो अधिक आपूर्ति के कारण कीमतों में गिरावट आ जाती है और किसानों को अपनी उपज कम कीमत पर बेचने हेतु मजबूर होना पड़ता है।

इन परिस्थितियों में फलों एवं सब्जियों की शेल्फ-लाइफ बढ़ाने, गुणवत्ता बनाए रखने और मूल्य संवर्धन के लिए उपयुक्त संरक्षण तकनीकों को अपनाना आवश्यक है। सुखाना एक प्राचीन एवं प्रभावी संरक्षण विधि है, जिसके माध्यम से उत्पाद से नमी को सुरक्षित स्तर तक कम किया जाता है, जिससे सूक्ष्मजीवी खराबी और गुणवत्ता ह्रास कम हो जाता है। सुखाने से उत्पाद का भंडारण काल बढ़ता है, वजन और आयतन कम होता है तथा परिवहन और पैकेजिंग लागत में कमी आती है। परंपरागत धूप में सुखाने या साधारण गर्म हवा से सुखाने की विधियों में उत्पाद की गुणवत्ता, रंग, स्वाद और पोषक तत्वों में गिरावट आ जाती है। इन समस्याओं के समाधान के रूप में हीट पम्प ड्राइंग तकनीक एक आधुनिक, ऊर्जा-सक्षम एवं गुणवत्ता-संरक्षण करने वाली विधि है। इसमें नियंत्रित तापमान और आर्द्रता पर फल एवं सब्जियों को सुखाया जाता है, जिससे उत्पाद की प्राकृतिक रंगत, स्वाद, सुगंध तथा पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं। इस तकनीक के माध्यम से आम, केला, सेब, पपीता, टमाटर, प्याज, गाजर, हरी मिर्च और पत्तेदार सब्जियों जैसे उत्पादों को उच्च गुणवत्ता के साथ सुखाया जा सकता है। इनसे तैयार उत्पाद स्नैक्स, मसाले, सूप, इंस्टेंट फूड तथा निर्यात उत्पादों में उपयोग किए जाते हैं, जिससे किसानों और ग्रामीण युवाओं को अतिरिक्त आय के अवसर प्राप्त होते हैं। यह तकनीक किसानों, ग्रामीण उद्यमियों और स्टार्टअप के लिए मूल्य संवर्धन और आय बढ़ाने का उत्कृष्ट अवसर प्रदान करती है।

हीट पम्प ड्रायर का कार्य सिद्धांत: हीट पम्प ड्रायर एक रेफ्रिजरेशन चक्र पर आधारित आधुनिक सुखाने की प्रणाली है, जिसमें हवा को पहले शुष्क किया जाता है और फिर उसे पुनः गरम करके सुखाने के लिए उपयोग किया जाता है। यह तकनीक

अपेक्षाकृत कम तापमान और नियंत्रित आर्द्रता पर कार्य करती है। यह एक बंद प्रणाली होती है, जिसमें ऊष्मा की पुनर्प्राप्ति) संभव होती है और ऊर्जा की बचत होती है। हीट पम्प ड्रायर के मुख्य घटकों में कम्प्रेसर, कंडेंसर, इवैपोरेटर, एक्सपेंशन वाल्व तथा ड्राइंग चेंबर शामिल होते हैं। कार्य के दौरान ड्राइंग चेंबर से निकलने वाली नम हवा इवैपोरेटर में जाती है, जहाँ उसकी नमी संघनित होकर अलग हो जाती है। इसके बाद शुष्क हवा कंडेंसर में गरम होकर पुनः ड्राइंग चेंबर में भेजी जाती है। यह गरम और शुष्क हवा फल एवं सब्जियों से नमी को वाष्प के रूप में बाहर निकालती है। इस प्रकार हवा का चक्र निरंतर चलता रहता है, जिससे तापमान और आर्द्रता का सटीक नियंत्रण संभव होता है। परिणामस्वरूप हीट पम्प ड्रायर से सुखाए गए उत्पादों का रंग, स्वाद, बनावट और पोषण गुणवत्ता बेहतर बनी रहती है।

हीट पम्प ड्राइंग के प्रमुख लाभ: हीट पम्प ड्रायर पारंपरिक सुखाने की विधियों की तुलना में अधिक प्रभावी तकनीक है। **इसके प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं:**

1.कम तापमान और नियंत्रित आर्द्रता पर सुखाने के कारण उत्पाद का रंग, स्वाद और पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं।

2.ऊष्मा पुनर्प्राप्ति के कारण ऊर्जा की बचत होती है।

3.यह तकनीक मौसम पर निर्भर नहीं होती और साल भर समान रूप से कार्य करती है ।

4.तापमान और आर्द्रता नियंत्रण के कारण सभी ट्रे में समान रूप से सुखाना संभव होता है।

5.बंद प्रणाली होने के कारण उत्पाद धूल, कीट और प्रदूषण से सुरक्षित रहता है।

6.सूखे फल-सब्जियों का बाजार मूल्य ताजे उत्पादों की तुलना में अधिक होता है जिससे किसानों एवं ग्रामीण उद्यमियों को बेहतर आर्थिक लाभ मिल सकता है।

7.इस तकनीक से तैयार उत्पाद अंतरराष्ट्रीय गुणवत्ता मानकों के अनुरूप होते हैं और निर्यात के लिए उपयुक्त होते हैं।

हीट पम्प ड्रायर के उपयोग: हीट पम्प ड्रायर का उपयोग फल, सब्जियों तथा अन्य कृषि उत्पादों को सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता के साथ सुखाने के लिए किया जाता है। इस तकनीक से आम, केला, सेब, पपीता, अनानास और अंगूर जैसे फलों से स्लाइस तथा ड्राई फ्रूट तैयार किए जाते हैं। इसी प्रकार टमाटर, प्याज, हरी मिर्च, गाजर, मटर और पत्तेदार सब्जियों को सुखाकर फ्लेक्स और पाउडर बनाए जाते हैं, जिनका उपयोग सूप, मसाले और इंस्टेंट फूड बनाने में किया जाता है। इसके अतिरिक्त धनिया, पुदीना, तुलसी, अदरक, हल्दी और लहसुन जैसे मसालों तथा औषधीय पौधों को भी इस तकनीक से सुखाया जा सकता है, जिससे उनके रंग, सुगंध और औषधीय गुण सुरक्षित रहते हैं। इस तकनीक से तैयार किए गए उत्पाद उच्च गुणवत्ता के होते हैं और अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप होने के कारण उनका निर्यात भी किया जा सकता है। हीट पम्प ड्रायर का उपयोग ग्रामीण युवाओं, स्वयं सहायता समूहों और किसान उत्पादक संगठनों द्वारा छोटे खाद्य प्रसंस्करण उद्योग स्थापित करने में भी किया जा सकता है।

प्रसंस्करण विधि एवं पैकेजिंग: हीट पम्प ड्रायर से फल और सब्जियों को सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता के साथ सुखाया जा सकता है। इसके लिए सबसे पहले फल-सब्जियों को अच्छी तरह धोकर साफ किया जाता है और समान मोटाई में काटा जाता है। आवश्यकता होने पर रंग और गुणवत्ता बनाए रखने के लिए ब्लांचिंग किया जाता है जिसमें फल या सब्जियों को कुछ समय के लिए गरम पानी या भाप में हल्का उबाला जाता है और फिर तुरंत ठंडा किया जाता है, ताकि उनका रंग, स्वाद, पोषक तत्व और गुणवत्ता बनी रहे। इसके बाद कटे हुए टुकड़ों को ट्रे पर एक परत में फैलाकर निर्धारित तापमान पर हीट पम्प ड्रायर में सुखाया जाता है और सूखने के बाद उत्पाद को ठंडा किया जाता है। सुखाने के बाद सही पैकेजिंग बहुत आवश्यक होती है ताकि उत्पाद दोबारा नमी सोखकर खराब न हो। इसके लिए नमी एवं ऑक्सीजन रोधी पैकेजिंग सामग्री जैसे लेमिनेटेड पाउच का उपयोग किया जाता है। अधिक समय तक भंडारण के लिए वैक्यूम या नाइट्रोजन फ्लश पैकेजिंग भी की जा सकती है। पैकेजिंग के साथ उत्पाद का नाम, शुद्ध वजन, निर्माण व समाप्ति तिथि, स्वस्थ नंबर, निर्माता का नाम और भंडारण निर्देश लिखना आवश्यक है। पैक किए गए उत्पादों को ठंडी, सूखी और छायादार जगह पर रखने से इन्हें लगभग 6-12 महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है, जिससे किसानों और ग्रामीण उद्यमियों को बेहतर बाजार मूल्य मिल सकता है। हीट पम्प ड्रायर से सुखाए गए हरी मिर्च, पालक, धनिया और अदरक के पाउडर का चित्र नीचे दिया गया है।

आवश्यक पंजीकरण एवं प्रमाणन: हीट पम्प ड्रायर आधारित फल एवं सब्जी प्रसंस्करण इकाई स्थापित करने के लिए कुछ आवश्यक पंजीकरण और कानूनी प्रक्रियाएँ पूरी करना जरूरी होता है। इन पंजीकरणों के बिना उत्पादों को संगठित बाजार, सरकारी खरीद या निर्यात में बेचना कठिन हो सकता है। सबसे पहले इकाई को सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय के अंतर्गत उद्यम (MSME) पंजीकरण कराना चाहिए, जिससे सरकारी योजनाओं, सब्सिडी और बैंक ऋण का लाभ मिल सकता है। फल एवं सब्जियों से बने खाद्य उत्पादों के उत्पादन और बिक्री के लिए FSSAI लाइसेंस लेना अनिवार्य होता है, जो उत्पाद की गुणवत्ता और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करता है। इसके अतिरिक्त व्यापारिक लेन-देन के लिए GST पंजीकरण तथा स्थानीय प्रशासन या नगर निकाय से व्यापार अनुमति लेना भी आवश्यक हो सकता है। इसके साथ ही पैकेजिंग और लेबलिंग के निर्धारित नियमों का पालन करना चाहिए। यदि उद्यमी अपने उत्पाद को एक अलग पहचान देना चाहते हैं, तो ट्रेडमार्क पंजीकरण भी कराया जा सकता है। इन सभी पंजीकरणों के माध्यम से सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त करना, बैंक से ऋण लेना और बाजार तक पहुंच बनाना आसान हो जाता है, जिससे किसान और ग्रामीण उद्यमी एक सफल प्रसंस्करण व्यवसाय स्थापित कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
जम्मू कश्मीर

सफेद मुसली की आधुनिक खेती आय और स्वास्थ्य का संगम

डॉ. ममता गोचर आनुवंशिक संसाधन एवं कृषि-प्रौद्योगिकी प्रभाग, भारतीय समवेत ओषध संस्थान, जम्मू (जम्मू ओर कश्मीर)

सफेद मुसली एक बहुमूल्य औषधीय पौधा है, जिसे हिंदी में सफेद मुसली, अजरमुली, सतमुली और गुजराती में उजली मुसली, ढोली मुसली जैसे नामों से जाना जाता है। इसका अर्थ है "सफेद कंद"। यह पौधा आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथिक और एलोपैथिक चिकित्सा प्रणालियों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है, क्योंकि इसकी जड़ें अनेक स्वास्थ्यवर्धक गुणों से भरपूर होती हैं।परंपरागत रूप से सफेद मुसली को ताकत बढ़ाने वाला टॉनिक माना जाता है और इसका उपयोग पुरुषों के यौन स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के उपचार में किया जाता रहा है। भारत के कई जनजातीय समुदाय इसे अपनी पारंपरिक स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में शामिल करते हैं, जिससे उन्हें ऊर्जा, दीर्घायु और रोग प्रतिरोधक क्षमता मिलती है। इसकी जड़ों में कामोत्तेजक, ज्वरनाशक, मूत्रवर्धक और प्रतिरक्षा नियंत्रक गुण पाए जाते हैं। आज सफेद मुसली व्यावसायिक रूप से सबसे अधिक उपयोग की जाने वाली औषधीय फसलों में से एक बन चुकी है।

पश्चिमी देशों में इसे 'वियाग्रा' के हर्बल विकल्प के रूप में पहचान मिली है, जिससे इसकी लोकप्रियता तेजी से बढ़ी है। इसके अलावा, यह दूध और भूख बढ़ाने में भी सहायक है। इसकी जड़ों का प्रभाव जिनसेंग जैसा माना जाता है, इसलिए इसे भारतीय जिनसेंग भी कहा जाता है। वर्तमान समय में अमेरिका और इंग्लैंड में इसके कंदों से चिप्स और फ्लेक्स बनाकर पौष्टिक भोजन तैयार किया जा रहा है। भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय औषधि बाजारों में इसकी मांग लगातार बढ़ रही है और यह सौ से अधिक हर्बल औषधियों का प्रमुख घटक है। बढ़ती मांग को देखते हुए भारत के कई हिस्सों में इसकी व्यावसायिक खेती शुरू की गई है, ताकि प्राकृतिक आवास से अंधाधुंध दोहन को रोका जा सके। सफेद मुसली की जड़ों में कार्बोहाइड्रेट (41%), प्रोटीन (8-9%), सैपोनिन (2-17%) और फाइबर (4%) पाए जाते हैं। इनमें से सैपोनिन सबसे महत्वपूर्ण औषधीय यौगिक है, जो कामोद्दीपक, एंटीऑक्सीडेंट, कैंसर-रोधी और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले गुणों के लिए जाना जाता है।

पौधे का विवरण- सफेद मुसली (Chlorophytum borivilianum) औषधीय महत्व वाला पौधा है, जो एस्पारागेसी कुल से संबंधित है। इसमें सामान्यतः 8 -15 अंकुर निकलते हैं। इसके पत्ते लंबे (15 -25 सेमी) और पतले (1-2.5 सेमी) होते हैं, जिनका आकार रैखिक-अंडाकार होता है और ये आधार पर सर्पिल रूप में व्यवस्थित रहते हैं। फूल छोटे, सफेद और गुच्छों में लगते हैं। पौधे में 5ङ्क20 गूदेदार जड़ें होती हैं, जिनकी लंबाई 10-25 सेमी तक होती है। बाहर से ये भूरी-काली और अंदर से सफेद होती हैं। इनका स्वाद लगभग फीका होता है और हल्की गंध होती है। फल त्रिकोणीय कैप्सूल जैसा होता है, जिसमें 5ङ्क15 छोटे, काले बीज पाए जाते हैं।

उत्पत्ति और वितरण: सफेद मूसली उत्पत्ति अफ्रीका के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में हुई थी, और बाद में इसे भारत में लाया गया। भारत में सफेद मुसली की खेती कई राज्यों जैसे छत्तीसगढ़, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में की जाती है। इसकी खेती मुख्यतः जड़ों के लिए होती है और लगभग 500 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में यह उगाई जाती है। रोपण के 80-90 दिन बाद पौधे परिपक्व हो जाते हैं और लगभग 40 दिन बाद नई गूदेदार जड़ें बनने लगती हैं। कटाई सामान्यतः मार्च-अप्रैल में की जाती है। बड़े और मोटे कंद अक्टूबर-नवंबर में निकाले जाते हैं, जबकि छोटे कंद अगले मौसम की रोपाई के लिए सुरक्षित रखे जाते हैं। अच्छी उपज के लिए जलवायु, मिट्टी, पोषण प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण और अंतरफसल खेती का सही संयोजन आवश्यक है।

जलवायु और मिट्टी: सफेद मुसली की अच्छी पैदावार हेतु गर्म और आर्द्र

जलवायु उपयुक्त होती है। जिन क्षेत्रों में 50-150 सेंमी वार्षिक वर्षा होती है, वे इसके लिए आदर्श हैं। अत्यधिक तापमान (35°C से अधिक) इसके विकास को प्रभावित करता है। अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी जिसमें कार्बनिक पदार्थों से भरपूर हों, गूदेदार जड़ों के विकास और उच्च उत्पादकता में सहायक होती है। मिट्टी का पीएच 5.0-8.0 होना चाहिए। यदि पीएच 8 से अधिक और उच्च कैल्शियम कार्बोनेट हो जाए तो पौधे को आवश्यक पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पाते।

प्रवर्धन: प्राकृतिक बीजों से सफेद मुसली का अंकुरण दर कम (11-24%) होता है। इसलिए किसान आमतौर पर पिछले वर्ष की फसल से प्राप्त कंदों का उपयोग करते हैं। प्रत्येक अंकुर में 1-3 गूदेदार कंद होते हैं जिनका वजन लगभग 5 ग्राम होता है। बीजों का अंकुरण बढ़ाने के लिए पौध वृद्धि नियामकों जैसे इंडोल ब्यूटिरिक एसिड और काइनेटिन का प्रयोग किया जा सकता है।

नर्सरी: एक हेक्टेयर जमीन में पौधे लगाने हेतु, नर्सरी हेतु लगभग 8.5 किलोग्राम बीज की ज़रूरत होती है। बीज छिड़काव विधि से बोए जाते हैं और उन्हें मिट्टी या सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट की एक हल्की परत से ढक दिया जाता है। बीजों के बेहतर अंकुरण और शुरुआती स्वस्थ विकास हेतु पत्तों की मल्चिंग (mulching) करने की सलाह दी जाती है। नर्सरी में बीज 5-6 दिनों के अंदर अंकुरित हो जाते हैं। लगभग एक महीने पुराने पौधे मुख्य खेत में लगाने के लिए तैयार हो जाते हैं।

रोपण: सफेद मुसली की रोपाई बारिश शुरू होने से ठीक पहले या बाद में की जाती है। रोपाई का समय क्षेत्र की जलवायु और वर्षा पर निर्भर करता है। विभिन्न प्रकार की क्यारियां जैसे समतल, मेड़ और नाली, या उठी हुई क्यारियां उपज को प्रभावित करती हैं। अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में अधिकतम उपज हेतु पौधों को 30 × 10-15 सेमी की दूरी पर लगाया जाता है। इस तरह लगभग 3,33,000 पौधे प्रति हेक्टेयर लगाए जा सकते हैं। रोपण सामग्री का आदर्श वजन लगभग 3-4 ग्राम होता है और इसके लिए 350-450 किलोग्राम कंद प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

फसल पोषण: औषधीय पौधों को उगाने के लिए जैविक खादों (खेत की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी-कम्पोस्ट, मुर्गी की खाद और हरी खाद) का उपयोग करना बेहतर माना जाता है। हालांकि, फसल की ज़रूरत को देखते हुए, अकार्बनिक स्रोतों के माध्यम से भी खनिज पोषण की पूर्ति की जा सकती है। सफ़ेद मूसली की अच्छी पैदावार पाने के लिए, प्रति हेक्टेयर 15 टन खेत की खाद के साथ 50:40:40 किलोग्राम NPK का प्रयोग सबसे अच्छा पाया गया है। उर्वरकों की ज़्यादा मात्रा का जड़ों पर बुरा असर पड़ता है। सूक्ष्म पोषक तत्वों में, सफ़ेद मूसली में लोहे की कमी सबसे ज़्यादा पाई जाती है। गर्मियों में लोबिया (cowpea) से हरी खाद बनाने से लोहे की कमी को कम करने और फसल की पैदावार को बेहतर बनाने में मदद मिल सकती है।

सिंचाई-यह फसल मॉनसून के मौसम में उगाई जाती है, इसलिए जब मॉनसून नहीं आता या पहली कुछ बारिशों के बाद शुरू होने में देर होती है, तो सिंचाई की ज़रूरत पड़ती है। जब मॉनसून खत्म हो जाता है या अनियमित रहता है तो फ़सल को मिट्टी की नमी बनाए रखने की क्षमता और मौसम की स्थिति के आधार पर, लगभग 15-20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की ज़रूरत होती है।

अंतरफसल और खरपतवार नियंत्रण-फसल बढ़वार के दौरान दो से तीन बार निराई-गुड़ाई की ज़रूरत होती है। बारिश के मौसम में, मिट्टी चढ़ाना (earthing-up) भी ज़रूरी होता है ताकि गूदेदार जड़ों के बाहर निकलने से बचा जा सके; ऐसा अक्सर तब होता है जब फसल ऊँची क्यारियों या मेड़ों पर उगाई जाती है। जब फूल आने लगें, तो उन्हें हटा देना चाहिए। फूलों को हटाने से गूदेदार जड़ों की पैदावार में लगभग 35% की बढ़ोतरी होती है। रसायनों के अवशेषों की समस्या के कारण, रासायनिक तरीकों से खरपतवार नियंत्रण की सलाह नहीं दी जाती है।

रोग और कीट: सफेद मुसली आमतौर पर पत्ती धब्बे, पत्ती झुलसा रोग, कॉलर सड़न, कंद सड़न और रतुआ रोग से प्रभावित होता है। प्रोपिकोनाजोल (0.1%), ट्राइडेमॉर्फ (0.1%), ज़िनेब-हेक्साकोनाजोल (0.2%), डाइथेन एम-45 (0.25%) के प्रयोग से कोलेटोट्राइकम डेमाटियम और अल्टरनेरिया अल्टरनेर्ट के उच्च अवरोध को कम किया जा सकता है।

कटाई: अगर फसल को कच्चे औषधीय पदार्थ के तौर पर इस्तेमाल के लिए उगाया गया है, तो अक्टूबर में रोपाई के चार महीने बाद यह कटाई के लिए तैयार हो जाती है। जब पौधा पकने लगता है, तो उसके ऊपरी हिस्से पीले पड़ जाते हैं, सूख जाते हैं और ज़मीन पर गिर जाते हैं। अगर अगले मौसम के लिए रोपाई का सामान (बीज/पौधे) नहीं चाहिए, तो इस अवस्था में ही फसल की कटाई की जा सकती है। अक्टूबर-नवंबर के महीनों में, सर्दियों की शुरुआत होते ही फसल सुप्तावस्था (dormancy) में चली जाती है। हालांकि, अगर रोपाई के लिए सामान तैयार करना हो, तो जड़ों के गुच्छों को जनवरी-फरवरी तक ज़मीन में ही रहने दिया जाता है और मार्च-अप्रैल में उनकी कटाई की जाती है। कटाई का काम जड़ों को सावधानी से खोदकर किया जाता है। कटाई से पहले, जड़ों के गुच्छों को आसानी से खोदने के लिए हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए।

पैदावार: औसतन, प्रति हे. 50-80 क्विं./हे. गूदेदार जड़ें मिल सकती हैं जिनसे लगभग 15-20 क्विं./हे. सूखी सफ़ेद मूसली तैयार हो जाती है।

कटाई के बाद की प्रोसेसिंग: छिलका उतारने के बाद, मूसली में मौजूद नमी को सुखा देना चाहिए। मूसली को पूरी तरह (<10% नमी) से सूखने में 7 दिन का समय लगता है। सूखने के बाद, मूसली को पॉली बैग में पैक करना ज़रूरी है, ताकि उसमें नमी न जा सके।

सफेद मुसली की उन्नत किस्में

किस्म	विकसित करने वाली संस्था	औसत उपज (क्विं./हे., सूखी जड़)	अवधि (दिन)	प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र
CIM-मुसली	केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान- लखनऊ	20-25 क्विं./हे.	90-100 दिन	समान आकार की जड़ें, अधिक उत्पादन	पूरे भारत (सिंचित क्षेत्र)
JSM-20 (जवाहर सफेद मुसली-20)	जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्व विद्यालय-जबलपुर	18-22 क्विं./हे.	85-95 दिन	शीघ्र परिपक्व, अधिक जड़ संख्या	मध्य भारत
RGSM-1	राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान-जयपुर	15-20 क्विं./हे.	90-100 दिन	सूखा सहनशील, स्थिर उत्पादन	राजस्थान एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र
AM-1 (आनंद मुसली-1)	आनंद कृषि विश्वविद्यालय- आनंद	20-24 क्विं./हे.	90-105 दिन	मोटी जड़ें, अधिक सैपोनिन मात्रा	गुजरात एवं समान जलवायु

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

छत पर बगीचों को अत्यधिक गर्मी से कैसे बचाएं?

स्वागत रंजन बेहेरा एवं नीलेश कुमार
सब्जी विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय,
गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक
विश्वविद्यालय, पंतनगर, (उत्तराखण्ड)

छत पर बागवानी शहरी कृषि के लिए एक अभिनव और टिकाऊ दृष्टिकोण के रूप में उभरी है। घनी आबादी वाले शहरों में, जहाँ जमीन दुर्लभ है, छतें सब्जियां, जड़ी-बूटियां, फल और सजावटी पौधे उगाने का उत्कृष्ट अवसर प्रदान करती हैं। घरेलू खाद्य सुरक्षा में योगदान देने के अलावा, छत पर बने बगीचे हवा की गुणवत्ता में सुधार करते हैं, शहरी ताप के प्रभाव को कम करते हैं और इमारतों के सौंदर्य मूल्य को बढ़ाते हैं। हालाँकि, छत पर बने बगीचों को भी अत्यधिक जलवायु परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, खासकर गर्मी के महीनों के दौरान। जमीनी स्तर के बगीचों के विपरीत, छतों को तीव्र सौर विकिरण, तेज हवाएँ और आसपास की कंक्रीट सतहों से परावर्तित गर्मी प्राप्त होती है। यह कारक पौधों के आसपास के तापमान को काफी बढ़ा सकते हैं, जिससे अक्सर गर्मी का तनाव, नमी की कमी, मुरझाना और उत्पादकता में कमी आती है। गर्मियों के दौरान कंक्रीट सतहों द्वारा अवशोषित और पुनः विकिरणित गर्मी के कारण छतों पर तापमान परिवेशी वायु तापमान से कई डिग्री अधिक हो सकता है। ऐसी स्थितियाँ पौधों के ऊतकों को नुकसान पहुँचा सकती हैं, प्रकाश संश्लेषण को बाधित कर सकती हैं, वाष्पीकरण को तेज कर सकती हैं और अंततः उचित सावधानी न बरतने पर पौधों की खराब वृद्धि या मृत्यु हो सकती है। इसलिए, छत पर लगे पौधों को अत्यधिक गर्मी से बचाने और स्वस्थ पौधों की वृद्धि को बनाए रखने के लिए उपयुक्त प्रबंधन प्रथाओं को अपनाना आवश्यक है।

(क) शेड नेट स्थापित करना: छत पर लगे पौधों को गर्मी से बचाने का सबसे प्रभावी तरीका शेड नेट स्थापित करना है। गर्मियों के दौरान सीधी धूप पत्तियों के तापमान को पौधों की वृद्धि के लिए इष्टतम सीमा से अधिक बढ़ा सकती है जिससे धूप की कालिमा (सनबर्न), पत्तियों का झुलसना और तेजी से पानी की कमी हो सकती है। शेड नेट या छायादार संरचनाएँ पौधों तक पहुँचने वाले सौर विकिरण की तीव्रता को कम करती हैं और ठंडे सूक्ष्म वातावरण को बनाए रखने में मदद करती हैं। आमतौर पर छत के बगीचों में 35-50% छायांकन क्षमता वाले शेड नेट उपयोग किए जाते हैं। यह नेट अत्यधिक गर्मी के तनाव को रोकते हुए प्रकाश संश्लेषण हेतु पर्याप्त प्रकाश की अनुमति देते हैं। इन्हें बांस, पीवीसी पाइप या धातु की छड़ों से बने साधारण फ्रेम का उपयोग करके स्थापित किया जा सकता है। शेड नेट की ऊँचाई उचित वायु परिसंचरण की अनुमति देनी चाहिए, साथ ही यह सुनिश्चित करना चाहिए कि पौधे चरम धूप के घंटों के दौरान सुरक्षित रहें।

(ख) पानी देने की कुशल पद्धतियां: छत पर लगे पौधों को गर्मी से बचाने में जल प्रबंधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गर्म मौसम के दौरान, वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन की दर काफी बढ़ जाती है, जिससे मिट्टी और पौधों के ऊतकों दोनों से तेजी से नमी की हानि होती है। यदि पौधों को पर्याप्त पानी नहीं मिलता है, तो वह जल्दी ही गर्मी के तनाव का अनुभव करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वह मुरझा जाते हैं और विकास कम हो जाता है। पानी देना आदर्श रूप से प्रातः काल या देर शाम के समय किया जाना चाहिए, जब तापमान कम हो। इससे वाष्पीकरण के कारण होने वाली पानी की कमी कम हो जाती है और पौधों को नमी को प्रभावी ढंग से अवशोषित करने में मदद मिलती है। छत के बगीचों के लिए बार-बार लेकिन नियंत्रित पानी देने की सिफारिश की जाती है, खासकर कंटेनर (गमले) में उगाए गए पौधों के लिए, जो जमीन में उगाए गए पौधों की तुलना में तेजी से सूख जाते हैं। ड्रिप (टपक) सिंचाई प्रणालियाँ छत के बगीचों के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं क्योंकि वह न्यूनतम बर्बादी के साथ सीधे जड़ क्षेत्र में पानी पहुँचाते हैं। गमलों के नीचे स्वयं-पानी देने वाले कंटेनर या ट्रे भी मिट्टी में लगातार नमी बनाए रखने में मदद कर सकते हैं। हालाँकि, अत्यधिक पानी देने से बचना चाहिए क्योंकि इससे जड़ सड़न और पोषक तत्वों का रिसाव हो सकता है। गर्मियों के दौरान पौधों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए नियमित रूप से मिट्टी की नमी की निगरानी करना और मौसम की स्थिति के अनुसार पानी देने के कार्यक्रम को समायोजित करना आवश्यक है।

(ग) मिट्टी की नमी को संरक्षित करने के लिए मल्चिंग करना: छत के पौधों को अत्यधिक गर्मी से बचाने के लिए मल्चिंग एक और महत्वपूर्ण अभ्यास है। मल्च मिट्टी की सतह को ढकने वाली एक सुरक्षात्मक परत के रूप में कार्य करती है, वाष्पीकरण के माध्यम से नमी की हानि को कम करती है तथा मिट्टी के तापमान को स्थिर बनाए रखती है। छत के बगीचों में, जहाँ गमले सीधे सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आते हैं, मल्चिंग से पानी की अवधारण में काफी सुधार हो सकता है तथा जड़ क्षेत्र को अधिक गरम होने से रोका जा सकता है। सूखी पत्तियाँ, पुआल, नारियल की भूसी, लकड़ी के टुकड़े, या घास की कतरन जैसी जैविक सामग्री का उपयोग मल्च के रूप में किया जा सकता है। यह सामग्रियाँ न केवल नमी को संरक्षित करती हैं बल्कि धीरे-धीरे विघटित होती हैं और मिट्टी की उर्वरता में सुधार करती हैं। लगभग 3-5 सेमी मोटाई की मल्च की परत आमतौर पर प्रभावी सुरक्षा प्रदान करने के लिए पर्याप्त होती है। मल्चिंग से खरपतवार की वृद्धि भी रुक जाती है, जो अन्यथा पानी और पोषक तत्वों के लिए पौधों से प्रतिस्पर्धा करती है। इसके अतिरिक्त, यह मिट्टी के संघनन को कम करता है तथा ग्रोइंग मीडिया में सूक्ष्मजीवों द्वारा की जाने वाली जैविक गतिविधि में सुधार करता है। ठंडी मिट्टी की स्थिति को बनाए रखते हुए मल्च गर्म मौसम के दौरान भी जड़ों को कुशलतापूर्वक कार्य करने में मदद करती है। यह सरल लेकिन प्रभावी तकनीक गर्मी के महीनों के दौरान छत के बगीचों में पौधों की लचीलापन तथा उत्पादकता को काफी बढ़ा देती है।

(घ) ताप-सहिष्णु पौधों की किस्मों का चयन करना: गर्मियों के दौरान छत पर बगीचों की सफलता सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त पौधों की किस्मों का चयन एक महत्वपूर्ण कारक है। कुछ पौधे स्वाभाविक रूप से दूसरों की तुलना में उच्च तापमान और सूखे की स्थिति के प्रति अधिक सहनशील होते हैं। ऐसी गर्मी प्रतिरोधी फसलें उगाने से अत्यधिक गर्मी के दौरान पौधों को नुकसान होने का खतरा कम हो सकता है। भिंडी, बैंगन, मिर्च, लोबिया, चौलाई और कद्दू जैसी सब्जियाँ आम तौर पर गर्म परिस्थितियों में अच्छा प्रदर्शन करती हैं। तुलसी, पुदीना और लेमनग्रास जैसी जड़ी-बूटियाँ भी उच्च तापमान को सहन करती हैं और छत के वातावरण में पनप सकती हैं। इसके विपरीत, ठंडे मौसम की सब्जियाँ जैसे लेट्यूस, पालक और ब्रोकोली गर्मी के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं तथा अत्यधिक गर्मी के दौरान जीवित रहने के लिए संघर्ष कर सकती हैं। गर्मी सहन करने के लिए विशेष रूप से उगाई गई उन्नत किस्मों का चयन करने से पौधों की उत्तरजीविता और उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है। कई कृषि अनुसंधान संस्थान और बीज कंपनियाँ उष्णकटिबंधीय जलवायु के अनुकूल किस्मों की पेशकश करती हैं। प्राकृतिक रूप से गर्म परिस्थितियों के अनुकूल फसलों का चयन करके वर्ष के सबसे गर्म महीनों के दौरान भी एक उत्पादक उद्यान बनाए रखा जा सकता है।

(ङ) उपयुक्त कंटेनरों और ग्रोइंग मीडिया का उपयोग करना: छत के बगीचों में तापमान और नमी को नियंत्रित करने में कंटेनरों और ग्रोइंग मीडिया का चुनाव महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पतले प्लास्टिक या धातु से बने कंटेनर (गमले) सीधी धूप में जल्दी गर्म हो जाते हैं, जिससे मिट्टी का तापमान बढ़ सकता है और पौधों की जड़ों को नुकसान हो सकता है। इसलिए, गर्मियों के दौरान पौधों की सुरक्षा के लिए उपयुक्त गमलों का चयन करना आवश्यक है। मिट्टी या टेराकोटा के गमलों को अक्सर पसंद किया जाता है क्योंकि वह अपेक्षाकृत ठंडे रहते हैं और बेहतर वायु विनिमय की अनुमति देते हैं। सांस लेने योग्य कपड़े की सामग्री से बने ग्रो बैग का उपयोग छत पर बागवानी में भी व्यापक रूप से किया जाता है क्योंकि वह अत्यधिक गर्मी को बढ़ने से रोकते हैं। गहरे रंग के गमलों की तुलना में हल्के रंग के गमले गर्मी अवशोषण को और कम कर सकते हैं। ग्रोइंग मीडिया में पानी की अच्छी रोकथाम के साथ-साथ उचित जल निकासी भी होनी चाहिए। छत पर बगीचों के लिए आमतौर पर बगीचे की मिट्टी, खाद, कोकोपीट और रेत का मिश्रण उपयोग किया जाता है। कोकोपीट विशेष रूप से फायदेमंद है क्योंकि यह मिट्टी में नमी बरकरार रखता है। नमी बनाए रखने और जल निकासी के बीच एक इष्टतम संतुलन बनाए रखने से एक स्थिर जड़ वातावरण बनाने में मदद मिलती है तथा पौधों के लिए गर्मी का तनाव कम हो जाता है।

(च) हवा और गर्मी अवरोध बनाना: छत पर बने बगीचे अक्सर तेज हवाओं के सम्पर्क में आते हैं जो वाष्पोत्सर्जन की दर को बढ़ाकर और पौधों को जल्दी सुखाकर गर्मी के तनाव को बढ़ा सकते हैं। गर्म हवाएँ नाजुक पत्तियों को नुकसान पहुँचा सकती हैं तथा पौधों की शक्ति को कम कर सकती हैं। हवा की तीव्रता को कम करने के लिए अवरोध बनाने से पौधों की रक्षा करने तथा अनुकूल सूक्ष्म जलवायु बनाए रखने में मदद मिल सकती है। बांस की स्क्रीन, हरी शेड नेट या ऊर्ध्वाधर जाली का उपयोग करके अस्थायी विंडब्रेक बनाए जा सकते हैं। छत के किनारों पर लम्बे पौधे या झाड़ियाँ लगाना भी प्राकृतिक हवा अवरोधक के रूप में काम कर सकता है। यह संरचनाएँ पर्याप्त वायु प्रवाह की अनुमति देते हुए गर्म हवाओं के सीधे प्रभाव को कम करने में मदद करती हैं। एक अन्य उपयोगी दृष्टिकोण है गमलों को एक साथ बारीकी से समूहित करना। यह व्यवस्था पौधों के चारों ओर एक आर्द्र सूक्ष्म वातावरण बनाने में मदद करती है तथा मिट्टी से नमी की हानि को कम करती है। गर्म, शुष्क हवाओं के सम्पर्क में पौधों को कम करके, गर्मी की परिस्थितियों के दौरान पौधों के लचीलेपन में काफी सुधार किया जा सकता है।

(छ) पर्याप्त पोषक तत्व प्रदान करना: उच्च तापमान की स्थिति में पौधों के स्वास्थ्य और लचीलेपन को बनाए रखने के लिए उचित पोषक तत्व प्रबंधन आवश्यक है। गर्मी के तनाव का सामना करने वाले पौधों को अक्सर चयापचय गतिविधियों को बनाए रखने तथा क्षतिग्रस्त ऊतकों की मरम्मत के लिए संतुलित पोषण की आवश्यकता होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

धनिया (कोरिएंड्रम सैटिवम) का गंभीर रोग तना पित्त (स्टेम गाल)

निखिल शर्मा (शोधार्थी)
पारस सिंह (अतिथि शिक्षक)
सविता (सहायक प्राध्यापक) सब्जी विज्ञान विभाग, वीरचन्द्र सिंह गढ़वाली उत्तराखंड औघानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय भरसार, पौड़ी गढ़वाल, (उत्तराखंड)
अदिति पाण्डेय शोधार्थी,कीट विज्ञान विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृशिनगर, अधरताल, जबलपुर (म.प्र.)
अंशु कुमार पाण्डेय शोधार्थी, फल विज्ञान विभाग, वीरचन्द्र सिंह गढ़वाली उत्तराखंड औघानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय भरसार, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड 246123

सारांश

धनिया (कोरिएंड्रम सैटिवम) एक वार्षिक शाकाहारी पौधा है यह सम्पूर्ण विश्व में अपनी खाद्य और औषधीय गुणों के कारण जाना जातां हैद्य यह विभिन्न फफूंद, जीवाणु और विषाणु रोगों से ग्रस्त है। धनिया का तना पित्त, जो प्रोटोमाइसीज मैक्रोस्पोरस नामक कवक के कारण होता है, धनिया (कोरिएंड्रम सैटिवम) की फसलों को प्रभावित करने वाला एक विश्वव्यापी और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण रोग है। यह रोग तनों, पत्ती के डंठलों, डंठलों, शिराओं और फलों पर गांठ जैसी सूजन (पित्त) के रूप में प्रकट होता है, जो शुरू में चमकदार और मुलायम दिखाई देते हैं और पकने पर खुरदुरे और सख्त हो जाते हैं। गंभीर संक्रमण से पौधे के अंगों में विकृति, बीज निर्माण में कमी और यहाँ तक कि पौधे की मृत्यु भी हो सकती है, जिसके परिणाम स्वरूप उपज में भारी नुकसान होता है, जो कभी-कभी अत्यधिक संक्रमित खेतों में 15 प्रतिशत से भी अधिक हो जाता है। रोगाणु बीज और फसल के अवशेषों में मोटी भित्ति वाले क्लैमाइडोस्पोर के रूप में जीवित रहता है, जिससे यह विभिन्न मौसमों में उपस्थित रहता है। जो इसके प्राथमिक संक्रमण को सुगम बनाता है,तथा इसका द्वितीयक प्रसार कोनिडिया के माध्यम से होता है। रोग के विकास के लिए ठंडी, आर्द्र परिस्थितियाँ, विशेष रूप से शुरुआती सर्दियों के दौरान, अनुकूल होती हैं और यह मिट्टी के पीएच और पोषक तत्व की स्थिति सेभी प्रभावित होता है। एकीकृत प्रबंधन योजनाएँ, जिनमें रोग-मुक्त बीजों का उपयोग, फसल चक्र, प्रतिरोधी किस्में, और जैविक कारकों या कवकनाशी से बीज उपचार शामिल हैं।यहरोगों के प्रकोप को कम करने और फसल हानि को न्यूनतम करने में प्रभावी साबित हुई हैं। यह लेख धनिया में स्टेम गॉल के जीव विज्ञान, महामारी विज्ञान और प्रबंधन की समीक्षा करता है, और स्थायी रोग नियंत्रण के लिए वर्तमान प्रगति और व्यावहारिक तरीकों पर प्रकाश डालता है।

रोग के लक्षण

* यह रोग पौधे के विभिन्न भागों, जैसे तने, पत्ती के डंठल, डंठल, पत्ती की शिराओं और फलों पर गाठ जैसी सूजन (गाल) के रूप में प्रकट होता है।
* प्रारंभिक अवस्था में गाठ चमकदार और मुलायम होती हैं, जो परिपक्व होने पर कठोर और खुरदुरे हो जाती हैं।
* गाठ छोटे (1 सेंमी तक) हो सकते हैं, लेकिन आपस में मिलकर 5 सेमी तक की बड़ी सूजन बना सकते हैं।
* गंभीर संक्रमण से फलों का विकृति, बीज निर्माण में कमी और गंभीर मामलों में पौधे की मृत्यु हो जाती है। अत्यधिक संक्रमित खेतों में तने के गाल रोग के कारण उपज में 15 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक की हानि हो सकती है।

रोग के अनुकूल वातावरण: स्टेम गॉल उच्च नमी और कम तापमान वाली सिंचित मिट्टी में, विशेष रूप से बादलों वाले मौसम और कम तापमान की परिस्थितियों में, सबसे गंभीर रूप से होता है। ठंडा और आर्द्र मौसमरोग के विकास को बढ़ावा देता है। मिट्टी का पीएच 7-5 के आसपास संक्रमण के लिए सबसे अनुकूल होता है, तथा पोटेशियम और नाइट्रोजन उर्वरक रोग की घटनाओं को कम करते हैं किन्तु फॉस्फोरस उर्वरक इसके संक्रमण को बढ़ा सकता हैं। रोग का प्रकोप और गंभीरता बुवाई की तारीखों से प्रभावित हो सकती है, क्योंकि नवंबर के मध्य में बोई गई फसलों में अन्य तारीखों की तुलना में रोग की तीव्रता कम और अधिक उपज प्राप्त होती है। यह रोग भारत के राजस्थान जैसे क्षेत्रों में विशेष रूप से हानिकारक है, जहाँ कुछ खेतों में प्रकोप दर 70 प्रतिशत तक पहुँच सकती है, जिसके परिणाम स्वरूप उपज में भारी कमी तथा काफी नुकसान की सम्भावना होती है।

रोग प्रबंधन

प्रबंधन रणनीतियां: रोग रहित बीजों का उपयोग करना चाहिए तथा प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करें जैसे- आर सी आर.41 (Rcr. 41)

जैविक नियंत्रण: ट्राइकोडर्मा विरिडि और स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस से बीजोपचार एवं मिट्टी और पत्तियों का उपचार बुवाई के (40, 60 तथा 70 दिनों) पर करने से रोग की घटनाओं को 32 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है।

वानस्पतिक नियंत्रण: 1 प्रतिशत नीम के तेल से बीजोपचार एवं पत्तियों पर छिड़काव करने से रोग की गंभीरता को कम करने में प्रभावी है।

सिंचाई प्रबंधन: मिट्टी में अत्यधिक नमी न होने दें तथा जल निकास का उचित प्रबंधन करने और बुवाई की तिथियों कों अनुकूल करने से रोग के विकास को कम किया जा सकता है।

रासायनिक नियंत्रण: बीज जनित रोगाणुओं को कम करने के लिए थायरम, सेरेसन जैसे कवकनाशी से बीज उपचार की सलाह दी जाती है।

* 2 ग्राम एग्रोसन और 3 ग्राम/किग्रा बीज की दर से थायरम. बाविस्टिन (1:1) से बीज उपचार की सिफारिश की जाती है।

* भारतीय किस्म आरसीआर. 41 जैसी सहनशील एवं प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करने से रोग के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

कृषि प्रणालियां: फसल चक्र को अपनाना एवं संक्रमित पौधों के अवशेषों को एकत्र कर नष्ट करना तथा रोगमुक्त बीजों का उपयोग करने से इस रोग का प्रबंधन किया जा सकता हैं।

निष्कर्ष

प्रोटोमाइसीज मैक्रोस्पोरस के कारण होने वाला धनिया का तना पित्तरोग, अपने व्यापक प्रसार, उपज में भारी कमी और पर्यावरण में बने रहने के कारण धनिया उत्पादन में एक बड़ी बाधा उत्पन्न करता है। रोग के कारण पौधों के विभिन्न भागों में गाठें बनती हैं, जिससे वृद्धि, बीज निर्माण और अंततः उपज में उल्लेखनीय कमी आती है।

यह रोग मृदा, बीज तथा फसल अवशेषों के माध्यम से लंबे समय तक जीवित रह सकता है, जिससे इसके नियंत्रण में कठिनाई बढ़ जाती है। इस रोग के प्रभावी एवं स्थायी नियंत्रण के लिए एकीकृत रोग प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है, जिसमें रोगमुक्त बीजों का उपयोग, प्रतिरोधी किस्मों का चयन, फसल चक्र, उचित जल निकास, जैविक एवं रासायनिक उपचारों का संतुलित प्रयोग शामिल हो। इन उपायों को समन्वित रूप से अपनाकर न केवल रोग की तीव्रता को कम किया जा सकता है, बल्कि धनिया की उत्पादकता और गुणवत्ता को भी बनाए रखा जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
नई दिल्ली

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की प्रक्रिया तथा विभिन्न विधियां

पुष्पेन्द्र यादव, शुभ्रांशु सिंह, रोहन शेरावत
कृषि विस्तार प्रभाग, भाकृअनुप, कृषि अनुसंधान भवन–I, पूसा नई दिल्ली– 110012

डॉ. कौसल कुमार पाण्डेय शस्य विज्ञान विभाग, श्री मुरली मनोहर टाउन पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, बलिया

सार: वर्तमान समय में टिकाऊ और पर्यावरण अनुकूल कृषि पद्धतियों की आवश्यकता लगातार बढ़ती जा रही है। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी की संरचना बिगड़ रही है, जैव विविधता प्रभावित हो रही है और मानव स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। ऐसे में वर्मीकंपोस्ट एक अत्यंत प्रभावी और प्राकृतिक विकल्प के रूप में उभरकर सामने आया है। वर्मीकम्पोस्ट जैविक खाद का एक महत्वपूर्ण प्रकार है जिसे केंचुओं की सहायता से जैविक कचरे को अपघटित करके तैयार किया जाता है। यह मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने, पर्यावरण संतुलन बनाए रखने और रासायनिक उर्वरकों के दुष्प्रभावों को कम करने में सहायक है। यह पर्यावरण के अनुकूल, पोषक तत्वों से भरपूर और मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने वाला एक प्रभावी कार्बनिक उर्वरक है।

कृषि के साथ साथ बागवानी, सब्जी उत्पादन, फूलों की खेती और घरेलू गार्डनिंग में भी वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। यह न केवल पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करता है, बल्कि मिट्टी की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता को भी सुधारता है।

मुख्य शब्द: वर्मीकम्पोस्ट, जैविक कचरा, केंचुआ

1. परिचय: वर्मीकम्पोस्टिंग एक जैविक खाद निर्माण प्रक्रिया है, जिसमें केंचुए जैविक कचरे को पचाकर उसे उर्वरक में बदल देते हैं। यह पारंपरिक खाद की तुलना में अधिक पोषक तत्व प्रदान करता है और मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारता है। यह मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक होता है। केंचुए जैविक अवशेषों को खाकर उसे उच्च गुणवत्ता वाली खाद में परिवर्तित कर देते हैं, जिससे पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम और सूक्ष्म पोषक तत्व अधिक मात्रा में होते हैं। केंचुए प्रकृति के प्राकृतिक कृषक माने जाते हैं। वे मिट्टी को भुरभुरी बनाते हैं, उसमें वायु संचार बढ़ाते हैं और जैविक पदार्थों को विघटित करके पौधों के लिए उपलब्ध पोषक तत्वों में परिवर्तित करते हैं।केंचुए की खाद तैयार करने की प्रक्रिया में केंचुओं की भूमिका केवल अपघटन तक सीमित नहीं है, बल्कि वे मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या भी बढ़ाते हैं, जिससे मिट्टी की जैविक सक्रियता बढ़ती है। आज के समय में जैविक खेती और प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के लिए वर्मीकम्पोस्ट एक महत्वपूर्ण आधार बन चुका है। किसान, बागवानी विशेषज्ञ और घरेलू माली सभी इसे अपनाकर अपनी मिट्टी की गुणवत्ता सुधार सकते हैं और उत्पादन बढ़ा सकते हैं।

2.वर्मीकम्पोस्ट के लाभ: वर्मीकम्पोस्ट के उपयोग से मिट्टी और फसल दोनों को अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह है कि यह मिट्टी की उर्वरता और जल धारण क्षमता को बढ़ाता है। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ने से मिट्टी की संरचना सुधरती है और उसमें नमी अधिक समय तक बनी रहती है। इसके नियमित उपयोग से पौधों की वृद्धि और उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। पौधे अधिक स्वस्थ, मजबूत और रोग प्रतिरोधी बनते हैं। वर्मीकम्पोस्ट का एक अन्य प्रमुख लाभ यह है कि इससे रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम हो जाती है। इससे उत्पादन लागत घटती है और पर्यावरण प्रदूषण भी कम होता है। जैविक कचरे का पुनः उपयोग करके यह पर्यावरण संरक्षण में भी सहायक सिद्ध होता है। घरेलू और कृषि अपशिष्टों का पुनर्चक्रण करके स्वच्छता

केंचुआ खाद तैयार करने की विधि

और अपशिष्ट प्रबंधन में भी योगदान मिलता है। केंचुओं की सहायता से जैविक पदार्थों का विघटन तेज़ी से होता है, जिससे खाद शीघ्र तैयार हो जाती है और किसान समय पर इसका उपयोग कर सकते हैं।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विधि: वर्मीकंपोस्ट बनाने हेतु निम्नलिखित तरीकों का पालन करना चाहिए। यह प्रक्रिया सरल है और इसे किसान, ग्रामीण परिवार तथा शहरी लोग भी आसानी से अपना सकते हैं।

(क) आवश्यक सामग्री: वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए कुछ आवश्यक सामग्रियों की आवश्यकता होती है। सबसे पहले केंचुए आवश्यक होते हैं, जिनमें Eisenia fetida या लाल केंचुआ सबसे उपयुक्त माना जाता है। इसके अतिरिक्त जैविक कचरा जैसे फल सब्जी के छिलके, पत्तियाँ, किचन वेस्ट, गोबर, कागज, कृषि अवशेष आदि का उपयोग किया जाता है। खाद बनाने के लिए लकड़ी या सीमेंट का बॉक्स, ड्रम या पिट का उपयोग किया जा सकता है। बेड के नीचे मिट्टी या जैविक पदार्थ की परत बिछाई जाती है ताकि केंचुए आराम से रह सकें। नमी बनाए रखने के लिए पानी की आवश्यकता होती है, क्योंकि केंचुए नमी युक्त वातावरण में ही सक्रिय रहते हैं।

(ख) प्रक्रिया: वर्मीकम्पोस्ट बनाने की प्रक्रिया चरणबद्ध होती है। सबसे पहले स्थान का चयन किया जाता है, जो छायादार और नमी युक्त होना चाहिए। तेज धूप केंचुओं के लिए हानिकारक होती है, इसलिए छाया का होना आवश्यक है। इसके बाद लकड़ी, सीमेंट या प्लास्टिक के कंटेनर में 6-12 इंच मोटी जैविक पदार्थों की परत बिछाई जाती है। यह परत केंचुओं के भोजन का स्रोत होती है। इसके बाद जैविक पदार्थ पर केंचुए डाल दिए जाते हैं और उन्हें खाद निर्माण करने दिया जाता है। केंचुए जैविक पदार्थों को खाकर उन्हें अपघटित करते हैं और उनके मल के रूप में वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त होती है। समय समय पर हल्का पानी छिड़कना आवश्यक होता है ताकि नमी बनी रहे। अत्यधिक पानी नहीं देना चाहिए, क्योंकि इससे केंचुए मर सकते हैं और बदबू उत्पन्न हो सकती है। सामान्यतः 40-50 दिनों में केंचुए की खाद तैयार हो जाती है। खाद तैयार होने पर उसे छानकर केंचुओं से अलग कर लिया जाता है और सुखाकर पैकिंग कर ली जाती है।

निष्कर्ष: वर्मीकम्पोस्ट एक प्रभावी, टिकाऊ और जैविक खाद बनाने की विधि है, जो पर्यावरण और कृषि दोनों हेतु लाभकारी है। यह मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने के साथ साथ जैविक कचरे के पुनर्चक्रण में भी सहायक है। कृषि में इसके बढ़ते उपयोग से रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होगी जिससे पर्यावरणीय संतुलन बना रहेगा। केंचुए की खाद को अपनाकर किसान अपनी भूमि की उत्पादकता को लंबे समय तक बनाए रख सकते हैं। यह न केवल आर्थिक दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों हेतु स्वस्थ मिट्टी और स्वच्छ पर्यावरण भी सुनिश्चित करता है।

सावधानियां: केंचुआ खाद तैयार करते समय कुछ सावधानियों का पालन करना आवश्यक है। अत्यधिक पानी देने से केंचुए मर सकते हैं और खाद की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। बहुत अधिक अम्लीय या तैलीय कचरा जैसे नींबू के छिलके, तेल, मांस या डेयरी उत्पाद नहीं डालने चाहिए, क्योंकि इससे केंचुओं को नुकसान होता है। केंचुआ खाद बेड को बहुत गर्म या बहुत ठंडे स्थान पर नहीं रखना चाहिए, क्योंकि अत्यधिक तापमान केंचुओं के लिए हानिकारक होता है। प्लास्टिक, धातु, कांच या रासायनिक पदार्थों को जैविक कचरे में नहीं मिलाना चाहिए। खाद तैयार होने से पहले उसे बार बार नहीं हिलाना चाहिए, ताकि केंचुए सहज रूप से अपना कार्य कर सकें और खाद अच्छी गुणवत्ता की बने।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विशेष तकनीकें: वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विभिन्न विधियाँ उपलब्ध हैं, जो उपयोग में लाई जाने वाली सामग्री, जगह और सुविधा के आधार पर एक दूसरे से भिन्न हो सकती हैं। नीचे कुछ प्रमुख तकनीकों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

1. पिट (गड्ढा) विधि:

कैसे करें? इस विधि में जमीन में 1 से 1.5 फीट गहरा गड्ढा खोदा जाता है। गड्ढे के नीचे जैविक कचरे की 4 6 इंच मोटी परत बिछाई जाती है। इसके बाद उस पर केंचुए छोड़ दिए जाते हैं और हल्का पानी छिड़काव किया जाता है ताकि नमी बनी रहे। लगभग 45 60 दिनों में खाद तैयार हो जाती है। तैयार खाद को छानकर केंचुओं से अलग कर लेना चाहिए और फिर उपयोग करना चाहिए।

फायदे: इस विधि में लागत कम आती है और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयुक्त है। वर्षा के समय भी नमी बनी रहती है, जिससे केंचुए सक्रिय रहते हैं।

सावधानियां: अत्यधिक पानी से बदबू आ सकती है और खाद खराब हो सकती है। बहुत अधिक गहरा गड्ढा केंचुओं के लिए उपयुक्त नहीं होता, क्योंकि वायु संचार कम हो जाता है।

2. बेड विधि:

कैसे करें? इस विधि में 1.5 से 2 फीट ऊँचा और 3 4 फीट चौड़ा बेड बनाया जाता है। लकड़ी, ईंट या बांस से फ्रेम तैयार किया जाता है। इसके बाद जैविक कचरे की परतें डाली जाती हैं और केंचुए छोड़ दिए जाते हैं। बेड को छायादार स्थान पर रखा जाता है और नमी बनाए रखी जाती है। लगभग 40 50 दिनों में खाद तैयार हो जाती है।

फायदे: इस विधि में अपघटन तेजी से होता है और हवा का संचार अच्छा रहता है। तैयार खाद निकालना आसान होता है, इसलिए यह व्यावसायिक स्तर पर अधिक लोकप्रिय है।

कंटेनर विधि:

कैसे करें? इस विधि में प्लास्टिक या लकड़ी के कंटेनर का उपयोग किया जाता है। कंटेनर में 2 3 इंच मोटी मिट्टी की परत डाली जाती है, फिर जैविक कचरे की परत डालकर केंचुए छोड़े जाते हैं। कंटेनर में छेद करके पानी की निकासी सुनिश्चित की जाती है। लगभग 45 60 दिनों में खाद तैयार हो जाती है। इसके पश्चात् केंचुओं को खाद से छानकर अलग कर लेना चाहिए।

फायदे: यह विधि शहरी क्षेत्रों में घर पर भी उपयोगी है और छोटे स्तर पर आसानी से अपनाई जा सकती है।

सावधानियां: उचित वेंटिलेशन जरूरी है। अत्यधिक नमी केंचुओं के लिए हानिकारक हो सकती है, इसलिए जल निकासी की व्यवस्था आवश्यक है।

POP fusion
#Cornilicious
perfect snack
POP fusion
Classic Salted Butter Caramel Popcorn
POP fusion
Artisan Dark Chocolate Popcorn
POP fusion
Gourmet Makhana
Balances health and taste
Crunchy and munchy
www.popfusion.in

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

अप्रैल-2026

Participate into the Future of Agriculture & Agro Farming Technology

KISAN AGRI & AGRO TECH EXPO

ANDHRA PRADESH

The International B2B and B2C Exhibition and Conference on Agriculture & Horticulture Technologies

26-28 JUNE 2026

(10.30 am to 6.30 pm)

Vijayawada, Amaravathi, Andhra Pradesh

This Event Endorsement & Supported by*

* Confirmation awaited

- Farm Machinery
- Agriculture Inputs
- Cold Chain
- Processing Technologies
- Dairy, Poultry & Live Stock
- Organic Farming

Organised by:

SHINY TRADE EXHIBITIONS

Call/E-mail for more Information:

+91-9849583036, 9989113036

agri.agrotechexpo@gmail.com

Amaravati - The People's Capital of Andhra Pradesh, The Land of Infinite Opportunities

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक राजू सिंह गुर्जर द्वारा कंचन ऑफसेट, चिंतामणि शास्त्री की गली, सात भाई की गोठ, लक्कडखाना,ग्वालियर, म.प्र.-474001 से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर, म.प्र.-474005 से प्रकाशित। संपादक : राजू सिंह गुर्जर (मोबा. 9425101132, 0751-4070802)